श्री महावीराय नमः

जैन संस्कार

सूत्र विभाग, तत्व विभाग, काव्य विभाग
सामान्य ज्ञान-विज्ञान विभाग एवं जीवन चरित्र व कथा विभाग

(जैन संस्कार शिविर में पढ़ाने वाले शिक्षिक वर्ग एवं स्वाध्यायी वर्ग हेतु)

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

श्री महावीराय नमः

''जैन संस्कार''

सूत्र विभाग, तत्व विभाग, काव्य विभाग
सामान्य ज्ञान-विज्ञान विभाग एवं जीवन चरित्र व कथा विभाग

(जैन संस्कार शिविर में पढ़ाने वाले शिक्षिक वर्ग एवं स्वाध्यायी वर्ग हेतु)

अहिंसा

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक **''जैन संस्कार''** बच्चों के ग्रीष्म कालीन अवकाश के दौरान **''जैन संस्कार शिविर''** आयोजन हेतु तैयार की गई है। प्रस्तुत पुस्तक में मुख्य सामग्री जिनवाणी, बाल बोध पुस्तिका व अन्य पुस्तकों से लेकर एकत्रित की गई है। हम उन सभी गुरूजनों व श्रद्धालु श्रावकों के हृदय से कृतज्ञ है जिनके लेखों को हमने इस पुस्तक में बच्चों को ज्ञान देने के उदेश्य से रखा है।

इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य है कि बच्चों को पढ़ाने वाले **शिक्षको** को विभिन्न विषयो की सामग्री एक ही जगह पर उपलब्ध हो जाए।

प्रस्तुत पुस्तक को 5 भागों में बाँटा है।

1. सूत्र विभाग
2. तत्व विभाग
3. काव्य विभाग
4. सामान्य ज्ञान–विज्ञान विभाग
5. जीवन चरित्र व कथा विभाग

पाठकगण से विनम्र अनुरोध है कि प्रस्तुत पुस्तक में किसी भी त्रुटि व सुझाव के लिये हमें अवश्य लिखें। हम उनके हृदय से आभारी होगें। यह पुस्तक **jainsanskarshivir.com** पर भी उपलब्ध है। आप अपने सुझाव **jshivir@gmail.com** पर ई मेल से भी भेज सकते हैं।

''जैन संस्कार शिविर'' में पढ़ाने वाले शिक्षकों से अनुरोध :

1. सभी शिक्षकों से अपेक्षा की जाती है कि शिविर प्रारम्भ होने से पहले इस पुस्तक का एक बार परायण अवश्य कर लें, और फिर स्वयं द्वारा अर्जित ज्ञान व इस पुस्तक द्वारा प्राप्त ज्ञान का समन्वय करके बच्चों को सुस्कारित करने का भगीरथ कार्य करें।

2. जैन संस्कार पुस्तक के 5 विभाग हैं। बच्चों की उम्र व उनके ज्ञान के स्तर के अनुसार सभी आयामों को छूने का प्रयास करें।

3. शिविरों में बच्चो की आयु सीमा न्युनतम 6 वर्ष व अधिकतम 22–23 वर्ष है। अतः क्षेत्र व बच्चो की संख्या के अनुसार, पढ़ाने के लिये बच्चों के ग्रुप इस प्रकार से बनाए जा सकते हैं।

Group	Age (year)	Class
Ist	6, 7, 8	(Ist, 2nd, 3rd)
2nd	9, 10, 11	(4th, 5th, 6th)
3rd	12, 13	(7th, 8th)
4th	14, 15 ------- 23	(9th onward)

4. इस पुस्तक के अतिरिक्त बच्चों के लिए एक Video CD है जिसमे लगभग 50 जैन धर्म सम्बन्धित धार्मिक व नैतिक Cartoon based फिल्में हैं। Group I & II के बच्चों को हर रोज 30–40 मिन्ट ये फिल्में CD के माध्यम से Projector के द्वारा दिखाई जायें, और इनके सारांश को बच्चो को समझाया जाए।

5. Group I & II के बच्चों को काव्य विभाग से हर रोज एक या दो कविताएँ याद करायें, व उसका अर्थ भी समझायें।

6. Video CD में Group III & IV के बच्चों के लिए, **तत्व विभाग** को समझाने के लिए कुछ Projector Slides हैं। इन Slides में हमारे Basic **25 बोलों** के ज्ञान का logical चित्रण किया गया है। समय सीमा को ध्यान में रखते हुए मुख्य–2 Slides पर अवश्य ही चर्चा करें। इस Session को प्रश्न उत्तर के द्वारा बच्चों के लिये Interactive बनाएं। इस विषय को Explain करने के लिए आप अलग से 25 बोल की पुस्तक का भी अध्ययन आवश्यकतानुसार कर सकते हैं।

7. Group II, III & IV के बच्चों को पाचों विभागों का ज्ञान दिया जाए। यह उचित है कि 15 दिन के शिविर में पढ़ाई कराने के लिए लगभग 30 घंटे होते हैं (प्रतिदिन 2 घंटे की Average के अनुसार) और इस 30 घंटे में पुरी पुस्तक का ज्ञान देना सम्भव नही है, फिर भी हमने इस पुस्तक को इस प्रकार से Arrange किया है कि आप हर विभाग से बढ़ते हुए क्रम से बच्चो को शिक्षा दे सकते हैं।

8. हर विभाग को पढ़ाने की समय सीमा निम्नीलिखित चार्ट के अनुसार तय कर सकते हैं।

15 days Chart

Group I	**Hours**	**Minutes**	**Minutes/day**
सूत्र विभाग	6	360	24
तत्व विभाग	–	–	–
काव्य विभाग (बाल गीत)	10	600	40
सामान्य ज्ञान–विज्ञान (पुस्तक व CD के द्वारा)	10	600	40
जीवन चरित्र व कथा विभाग	4	240	16

Group II	**Hours**	**Minutes**	**Minutes/day**
सूत्र विभाग	6	360	24
तत्व विभाग	6	360	24
काव्य विभाग (बाल गीत)	6	360	24
सामान्य ज्ञान–विज्ञान (पुस्तक व CD के द्वारा)	6	360	24
जीवन चरित्र व कथा विभाग	6	360	24

Group III & IV	**Hours**	**Minutes**	**Minutes/day**
सूत्र विभाग	10	600	40
तत्व विभाग (पुस्तक व CD के द्वारा)	10	600	40
काव्य विभाग	4	240	16
सामान्य ज्ञान–विज्ञान	3	180	12
जीवन चरित्र व कथा विभाग	3	180	12

इस चार्ट में आप अपने क्षेत्र व समय की सीमा के अनुसार फेर बदल कर सकते हैं।

9. शिक्षकों से सबसे अधिक महत्वपूर्ण व विनम्र अनुरोध है कि शिविर में जैन धर्म के चारों सम्प्रदायों व अजैन बच्चों को भी पढ़ाया जाए और यह ध्यान रखें कि किसी भी सम्प्रदाय की भावना को ठेस न पहुंचे। सभी सम्प्रदाय समान हैं और ये सब एक ही पेड़ की शाखाएँ हैं। हमें बच्चो को जैनत्व के संस्कार सीखाने हैं, सम्प्रदायवाद नहीं सीखाना है। ऐसे किसी भी शब्द का प्रयोग ना करें, जिससे किसी भी सम्प्रदाय में चल रही पद्धति का खंड़न हो। हमें सभी सम्प्रदायों की Positve चीजें सीखानी हैं, Negative नहीं बतानी हैं।

इन्हीं भावनाओं के साथ :

विनीत व संकलनकर्त्ता
रविन्द्र जैन
212, वीर अपार्टमैन्ट
सेक्टर–13, रोहिणी, दिल्ली 110085
दूरभाष : 011–27861401, 9810287446
E-mail : jshivir@gmail.com
www.jainsanskarshivir.com

विषय - सूची

सूत्र विभाग

नवकार-नमस्कार सूत्र........ 1
तिक्खुत्तो (गुरूवन्दन) सूत्र........ 2
करेमि भंते-सामायिक सूत्र........ 3
सामायिक समाप्ति का पाठ........ 4
सामायिक करने की विधि........ 4
सामायिक पारने की विधि........ 4
अरिहंतो-सम्यक्त्व सूत्र........ 5
इरियावहियं-आलोचना सूत्र (प्रायश्चित्त)........ 6
उत्तरीकरण सूत्र (कायोत्सर्ग की प्रतिज्ञा)........ 8
चतुर्विंशतिस्तव-सूत्र (लोगस्स का पाठ)........ 10
प्रणिपात-सूत्र (णमोत्थुणं का पाठ)........ 13

SAMAIYAK SUTRAS (in English)

NAMASKAR SUTRA (Bowing Meditation) 15
GURU VANDAN SUTRA (Thrice Kneeling) 16
KAREMI BHANTE SUTRA 17
ALOCHANA SUTRA (Iryavahiyam ka Path)........ 18
TASSA UTTARI SUTRA (Elevation of my soul)........ 20
LOGASSA SUTRA........ 22
PANIPAT SUTRA (Namoththunam sutra) 25
उवसग्गहरं स्तोत्र........ 27
दशवैकालिक सूत्र........ 27
भक्तामर स्तोत्र........ 28
पुच्छिंस्सुणं (वीर-स्तुति)........ 35
महावीराष्टक स्तोत्र........ 37

तत्व विभाग

प्रश्नोत्तर (नवकार महामन्त्र)........ 39
प्रश्नोत्तर (तिक्खुतो सुत्र)........ 42
प्रश्नोत्तर (सामयिक सुत्र)........ 45
प्रश्नोत्तर (सामयिक समाप्ति सूत्र)........ 46
सामायिक का वेष........ 49
प्रश्नोत्तर (सम्यक्तव सूत्र)........ 51
प्रश्नोत्तर (इरियावहियं - आलोचना सूत्र)........ 53
प्रश्नोत्तर (उत्तरीकरण सूत्र)........ 55
प्रश्नोत्तर (चतुर्विंशतिस्तव सूत्र)........ 57
प्रश्नोत्तर (प्रणिपात सूत्र - नमोत्थुणंः)........ 59
वर्तमान अवसर्पणीकाल के तीर्थकर, गणधर एवं सतियों के नाम........ 61
धर्म........ 62

जैन धर्म

जैन धर्म (विश्लेषण-1)........ 63
जैन धर्म (विश्लेषण-2)........ 65
सप्त (सात) कुव्यसन........ 67
भगवान महावीर की मुख्य आठ शिक्षाएँ........ 68
श्रावक के 21 गुण........ 69
गुरूदेवों की सुखसाता पूछने का पाठ........ 69
श्रावकजी के पाँच अभिगम........ 70
श्रावक / श्राविका के तीन मनोरथ........ 71
ज्ञान वृद्धि के कारण........ 71
ज्ञान हानि के सात कारण........ 71
जैन वचन विवेक........ 71
रात्रि भोजन त्याग के लाभ........ 72
कुछ अच्छे काम (भाग-1)........ 72
जीव-अजीव प्रश्नोत्तर........ 73
जीव-परिचय........ 74
देव-गुरू-धर्म प्रश्नोत्तरी........ 75
5 पापों पर प्रश्नोत्तरी........ 76
कषाय-परिचय और प्रश्नोत्तरी........ 78
25 बोलों का चित्रण........ 79
25 बोल के आधार पर कुछ बोलों का वर्णन
गति-4........ 97
इन्द्रिय 5........ 98
जैन श्रावक के 12 व्रत........ 100
जैन साधु के पाँच महाव्रत........ 101
कर्म आठ........ 102
नव तत्व........ 103
बत्तीस शास्त्र (आगम)........ 104
भ0 महावीर के मुख्य सूत्र (प्राकृत भाषा में)........ 105
अन्तर बताइए और ज्ञान बढ़ाइये........ 107
जैन शब्दों का अर्थ (देव, गुरू, धर्म, शास्त्र)........ 108
जैन धर्म स्थान........ 109
आनुपूर्वी एवं उसे पढ़ने की विधि........ 110

काव्य विभाग

लघु बाल-गीत

1. पढ़ेंगे लिखेंगे 115
2. हाय हैलो छोड़िए जय जिनेन्द्र बोलिए 115
3. मेरे मन में है विश्वास 115
4. हम नन्हें मुन्ने बच्चें 115
5. जय जिनेन्द्र बोलिए 115
6. Very Sweet very sweet 116
7. मेरा धाम 116
8. वीर प्रभु की हम संतान 116
9. महावीर प्रभु की हम संतान 116
10. हमारा संकल्प 116
11. कभी नहीं ... कभी नहीं 117

लघु बाल तत्व ज्ञान

1. जीव-अजीव 117
2. मुक्त और संसारी 118
3. बोलो बच्चो 118
4. धर्म 118
5. तीर्थकर और भगवान 118

बाल गीत (प्रार्थनाएँ)

1. जिनवाणी स्तवन 119
2. नमस्कार मन्त्र-स्तुति 119
3. श्री नवकार-स्तुति 119
4. वीर-स्तुति 120
5. मंगलकारी महावीर 120
6. सिद्ध-स्तवन 120
7. हम जैन धर्म अनुयायी 121
8. भगवन तेरे चरण में 121
9. अहिंसा 122
10. पूजा भी तो यही है 123

बारह भावनाएँ

1. अनित्य भावना 124
2. अशरण भावना 124
3. संसार भावना 124
4. एकत्व भावना 124
5. अन्यत्व भावना 124
6. अशुचि भावना 124
7. आस्रव भावना 124
8. संवर भावना 124
9. निर्जरा भावना 124
10. लोक भावना 124
11. बोधि दुर्लभ भावना 124
12. धर्म भावना 124

मेरी भावना 125

पंच पद वंदना

श्री अरिहंत वंदना 126

श्री सिद्ध वंदना 126

श्री आचार्य वंदना 126

श्री उपाध्याय वंदना 126

श्री मुनिराज वंदना 126

मंगल-पाठ 127

आचार्य अमित गति की बत्तीसी 128

सामान्य ज्ञान-विज्ञान

जैन बालक की पहचान (Characteristics of a jain child) .. 131

गुरू-सुदर्शन-वचनामृतम् 132

कुछ अच्छे काम (भाग-2) 136

आप भी इतना तो अवश्य ही करें 138

तीर्थ और तीर्थंकर (विश्लेषण-1) 139

तीर्थ और तीर्थंकर (विश्लेषण-2) 140

ग्यारह गणधर 140

जैन धर्म के चार सम्प्रदाय 141

जैन ध्वज 142

जैन प्रतीक 143

जैन तप-विधि 144

जैन संस्कृति 145

जैन दर्शन v/s सृष्टि-संरचना 147

क्या आप जानते हैं? 149

जल ही जीवन है 154

पेड़-पौधे 155

शाकाहार

स्वस्थ जीवन का आधार:शाकाहार (विश्लेषण-1) 156

मनुष्य प्रकृति से शाकाहारी है (विश्लेषण-2) 158

अण्डा शाकाहार नहीं है (विश्लेषण-3) 160

शाकाहार v/s मांसाहार:पोषण-पक्ष (विश्लेषण-4) 162

आतिशबाजी v/s पर्यावरण प्रदुषण 166
अहिंसा और पर्यावरण सन्तुलन 167
जैन पर्व 172

जीवन चरित्र व कथा विभाग

भगवान महावीर 175
भगवान् ऋषभदेव 177
भगवान् पार्श्वनाथ 178
भगवान् नेमिनाथ 179
चण्डकौशिक सर्प का उद्धार 180
संजय राजा और गर्दभाली मुनि 181
अर्जुन माली 182
महासती चन्दन बाला 184
आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी 186
श्री ढंढण मुनि 188
श्री जीवानंद वैद्य 189
श्री अनाथी मुनि 190
श्री थावच्चापुत्र 191
श्री खंधक मुनि 192
श्री सुलसा श्राविका 192
श्री पुणिया श्रावक 194
आचार्य श्री अमोलक ऋषि जी म0 195
आचार्य सम्राट श्री अमर सिंह जी म0 196
संयम सुमेरू श्री मयाराम जी म0 197
व्याख्यानवाचस्पति गुरूदेव श्री मदन लाल जी म0 198
संघ शास्ता श्रद्धेय गुरूदेव श्री सुदर्शन लाल जी म0 199

सूत्र विभाग

Important Notes

नवकार-नमस्कार सूत्र

नमो अरिहंताणं,
नमो सिद्धाणं,
नमो आयरियाणं,
नमो उवज्झायाणं,
नमो लोए सव्व-साहूणं!
एसो पंच नमोक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
नमो	नमस्कार हो	एसो	यह
अरिहंताणं	अरिहन्तों को	पंच	पांचो को किया हुआ
नमो	नमस्कार हो	नमोक्कारो	नमस्कार
सिद्धाणं	सिद्धों को	सव्वपाव	सब पापों का
नमो	नमस्कार हो	प्पणासणो	नाश करने वाला है
आयरियाणं	आचार्यों को	मंगलाणं	मंगलों में
नमो	नमस्कार हो	च	ओर
उवज्झायाणं	उपाध्यायों को	सव्वेसिं	सब
नमो	नमस्कार हो	पढमं	मुख्य (प्रथम)
लोए	लोक में	हवइ	है
सव्व	सब	मंगलं	मंगल
साहूणं	साधुओं को		

भावार्थ

श्री अरिहन्त, श्री सिद्ध, श्री आचार्य, श्री उपाध्याय और लोक में वर्तमान समस्त साधु-मुनिराजों को मेरा नमस्कार हो।

उक्त पांच परमेष्ठी महान् आत्माओं को किया हुआ यह नमस्कार सब प्रकार के पापों का पूर्णतया नाश करने वाला है और सब लौकिक एवं लोकोत्तर मंगलों में प्रथम (प्रधान) मंगल है।

तिक्खुत्तो (गुरूवन्दन) सूत्र

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जुवासामि, मत्थएण-वंदामि।

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
तिक्खुत्तो	तीन बार	कल्याणं	कल्याण रूप को
आयाहिणं	दाहिनी ओर से	मंगलं	मंगल रूप को
पयाहिणं	प्रदक्षिणा	देवयं	धर्म देव को
करेमि	करता हूँ	चेइयं	ज्ञान-स्वरूप को
वंदामि	स्तुति करता हूँ	पज्जुवासामि	उपासना करता हूँ
नमंसामि	नमस्कार करता हूँ	मत्थएण	मस्तक झुकाकर
सक्कारेमि	सत्कार करता हूँ	वंदामि	वंदना करता हूँ
सम्माणेमि	सम्मान करता हूँ		

भावार्थ

हे भगवन्! मैं दाहिनी ओर से प्रारम्भ करके पुनः दाहिनी ओर तक आपकी तीन बार प्रदक्षिणा करता हूँ।

स्तुति करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, सत्कार करता हूँ, सम्मान करता हूँ।

आप कल्याण रूप हैं। मंगल रूप हैं। आप धर्मदेव हैं, चैत्य-स्वरूप अर्थात् ज्ञान-स्वरूप हैं।

गुरूदेव! आपकी (मन, वचन और शरीर से) पर्युपासना अर्थात सेवा भक्ति करता हूँ। विनय-पूर्वक मस्तक झुकाकर आपके चरण-कमलों में वन्दना करता हूँ।

करेमि भंते-सामायिक सूत्र

करेमि भंते! सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि,
जाव नियमं+ मुहूर्त पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं न
करेमि, न कारवेमि मणसा वयसा कायसा तस्स भंते!
पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि।

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
करेमि	करता हूँ	तिविहेणं	तीन योग से
भंते	हे भगवन्! (आपकी साक्षी से मैं)	न करेमि	न स्वयं करूँगा (सावद्य योग)
सामाइयं	सामायिक (कैसी सामायिक?)	न कारवेमि	न दूसरों से करवाऊँगा
सावज्जं	पाप सहित	मणसा	मन से
जोगं	व्यापारों को	वयसा	वचन से
पच्चक्खामि	त्यागता हूँ	कायसा	काया से
जाव	जब तक	तस्स	उसका (अतीत में जो भी पाप कर्म किया हो)
नियमं	नियम की	भंते	हे भगवन्!
पज्जुवासामि	उपासना करूँ (किस रूप से सावद्य का त्याग?)	पडिक्कमामि	प्रतिक्रमण करता हूँ
दुविहं	दो करण से	निंदामि	आत्मसाक्षी से निंदा करता हूँ
		गरिहामि	आपकी साक्षी से गर्हा करता हूँ
		अप्पाणं	अपनी आत्मा को
		वोसिरामि	उस पाप से अलग करता हूँ

भावार्थ

हे भगवन्! मैं सामायिक ग्रहण करता हूँ, पापरूप क्रियाओं का परित्याग करता हूँ।

जब तक मैं दो घड़ी आदि के नियम की उपासना करूँ, तब तक दो करण (करना और कराना) तीन योग (मन, वचन और काया) से पाप कर्म न स्वयं करूँगा और न दूसरों से करवाऊंगा।

हे भगवन्! जो पाप कर्म पहले हो गए हैं, उनका मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। अपनी साक्षी से निन्दा करता हूँ, आपकी साक्षी से गर्हा करता हूँ। अंत में, मैं अपनी आत्मा को पाप-व्यापार से वोसिराता हूँ अर्थात् अलग करता हूँ। पाप कर्म करने वाली अपनी भूतकालीन मलिन आत्मा का त्याग करता हूँ। नया पवित्र जीवन ग्रहण करता हूँ।

सामायिक समाप्ति का पाठ

नौवें सामायिक व्रत के विषय, जो कोई अतिचार लगा हो तो आलोउं। मन, वचन, काया का खोटा योग बरताया हो। सामायिक में समता न की हो। बिना पूगी पारी हो। दस मन के, दस वचन के, बारह काया के, इन बत्तीस दोषों में कोई पाप-दोष लगा हो तो तस्सं मिच्छामि दुक्कडं।

भावार्थ

सामायिक व्रत के पाँच दोष हैं, जो मात्र जानने योग्य हैं, आचरण करने योग्य नहीं। वे पाँच इस प्रकार हैं-

(1) मन को कुमार्ग में लगाना (2) वचन का कुमार्ग में लगाना (3) शरीर को कुमार्ग में लगाना (4) सामायिक को बीच में ही अपूर्ण दशा में पार लेना अथवा सामायिक की स्मृति अर्थात् ख्याल न रखना और (5) सामायिक को अव्यवस्थित रूप से अर्थात् चंचलता से करना। उक्त दोषों के कारण जो भी पाप लगा हो, वह आलोचना के द्वारा निष्फल हो।।(1)

सामायिक व्रत सम्यग्रूप से स्पर्श न किया हो, पालन न किया हो, पूर्ण न किया हो, कीर्तन न किया हो, शुद्ध न किया हो, आराधना न किया हो एवं वीतराग की आज्ञा के अनुसार पालन न हुआ हो, तो तत्संबंधी समग्र पाप निष्फल हों।।(2)

सामायिक करने की विधि

1. स्थान, आसन, पूँजनी, मुख वस्त्रिका आदि की प्रतिलेखन कर आसन बिछावें।

2. मुख वस्त्रिका को मुख पर बाँधकर मुनिराज विराजमान हों तो विधिपूर्वक पंचाग नमाकर तिक्खुत्तों के पाठ से वन्दना करें।

3. यदि मुनिराज विराजमान न हों तो पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके भगवान श्री सीमंधर स्वामी को सविधि वन्दना करें।

4. तीन बार नमोकार मंत्र, अरिहन्तों महदेवों का पाठ, इरियावहियं का पाठ, फिर तस्स उत्तरी का पाठ पढ़कर कायोत्सर्ग करें कायोत्सर्ग में मन ही मन एक बार लोगस्स का पाठ चितारें। नमों अरिहंताणं बोलकर ध्यान खोलें। एक बार खुला लोगस्स का पाठ पढ़ें, पीछें गुरुदेवों से या भगवान् से आज्ञा लेकर करेमि भन्ते का पाठ पढ़ें। बाद में आसन पर बैठकर बायाँ घुटना खड़ा कर दोनों हाथ जोड़कर नमोत्थुणं का पाठ दो बार पढ़ें। दूसरे नमोत्थुणं में जहां अन्त में 'ठाणं सम्पत्ताणं' आता है वहाँ 'ठाणं संपाविउकामाणं' बोलें।

5. सामायिक में शुभ ध्यान तथा प्रशस्त भावनाओं के स्वरूप का विचार करें। अप्रशस्त ध्यान और कुत्सित भावनाओं का त्याग करें। स्वाध्याय तथा व्याख्यान आदि का लाभ उठावें। यथा शक्ति 32 दोष टाल कर शुद्ध सामायिक करें।

सामायिक पारने की विधि

सामायिक पारने के समय पहले इरियावहियं का पाठ करें। फिर तस्स उत्तरी का पाठ पूर्ण बोलकर कायोत्सर्ग करें। एक बार मनोयोगपूर्वक लोगस्स का पाठ बोलें। 'नमो अरिहंताणं' बोलकर ध्यान पूरा करें। एक खुला लोगस्स का पाठ पढ़ें। पहले की तरह दो बार नमोत्थुणं का पाठ पढ़ें। सामायिक पारने का पाठ पढ़ें और तीन बार नमोकार मंत्र पढ़कर सामायिक को पूर्ण करें।

अरिहंतो-सम्यक्त्व सूत्र

अरिहंतो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो।
जिणपण्णत्तं तत्तं, इअ सम्मतं मए गहियं॥1॥
पंचिंदियसंवरणो, तह नवविहबंभचेर गुत्तिधरो।
चउविह कसायमुक्को, इअ अट्ठारसगुणेहिं संजुत्तो॥2॥
पंचमहव्वयजुत्तो, पंच विहायारपालणसमत्थो।
पंचसमिओ तिगुत्तो, छत्तीस गुणो गुरु मज्झं॥3॥

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
अरिहंतो	अरिहंत भगवान्	नवविह बंभचेर	नौ प्रकार की ब्रह्मचर्य की
मह	मेरे	गुत्तिधरो	गुप्तियों को धारण करने वाले
देवो	देव हैं	चउ विह	चार प्रकार के
जावज्जीवं	जीवन पर्यन्त	कसाय मुक्को	कषायों से मुक्त
सुसाहुणो	श्रेष्ण साधु	इअ	इन
गुरुणो	गुरु हैं	अट्ठारस गुणेहिं	अठारह गुणों से
जिण पण्णत्तं	वीतराग देव द्वारा प्ररूपित	संजुत्तो	संयुक्त (सहित)
तत्तं	तत्त्व है, धर्म है	पंच महव्वय जुत्तो	पाँच महाव्रतो से युक्त
इअ	यह	पंच विहायार	पाँच प्रकार का आचार
सम्मत्तं	सम्यक्त्व	पालण समत्थो	पालने में समर्थ
मए	मैंने	पंच समिओ	पाँच समिति वाले
गहियं	ग्रहण किया	तिगुत्तो	तीन गुप्ति वाले
पंचिंदिय संवरणो	पाँच इन्द्रियों के विषयों	छत्तीस गुणो	छत्तीस गुणों वाले
	को वश में करने वाले	गुरु	गुरु हैं
तह	तथा इसी प्रकार	मज्झं	मेरे

भावार्थ

राग-द्वेष के जीतने वाले श्री अरिहंत भगवान मेरे देव हैं, जीवन पर्यंत संयम की साधना करने वाले सच्चे साधु मेरे गुरु हैं, श्री जिनेश्वर देव का बताया हुआ अहिंसा, सत्य आदि ही मेरा धर्म है। यह देव, गुरु, धर्म पर श्रद्धा स्वरूप सम्यक्त्व व्रत मैंने पूर्ण जीवन के लिए ग्रहण किया है।

पाँच इन्द्रियों को वश में करने वाले, ब्रह्मचर्य व्रत की नौ गुप्तियों (नौ बाड़ों) को धारण करने वाले, चार प्रकार की कषायों से मुक्त, इस प्रकार इन अठारह गुणों से संयुक्त तथा अन्य अठारह गुणों {अहिंसा आदि पाँच महाव्रत, पाँच आचार, पाँच समिति और तीन गुप्ति के धारक} वाले, अर्थात् (18+18) उक्त छत्तीस गुणों वाले श्रेष्ठ साधु मेरे गुरु हैं।

इरियावहियं-आलोचना सूत्र (प्रायश्चित्त)

इच्छाकारेणं संदिसह भगवं। इरियावहियं पडिक्कमामि?
इच्छं, इच्छामि पडिक्कमिउं, इरियावहियाए, विराहणाए,
गमणागमणे, पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे,
ओसा-उत्तिंग-पणग-दग-मट्टी-मक्कडासंताणा संकमणे,
जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया
चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया,
संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया,
ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया,
तस्स मिच्छामि दुक्कडं॥

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
इच्छाकारेण	इच्छापूर्वक	दग	जल को
संदिसह	आज्ञा दीजिए	मट्टी	मिट्टी को
भगवं	हे भगवन्	मक्कडासंताणा	मकड़ी के जालों को
इरियावहियं	ऐर्यापथिक क्रिया का	संकमणे	कुचलने से, मसलने से
पडिक्कमामि	प्रतिक्रमण करूँ (गुरुदेव के आज्ञा देने पर)	जे	जो
		मे	मैंने
इच्छं	आज्ञा प्रमाण है	जीवा	जीव
इच्छामि	चाहता हूँ	विराहिया	पीड़ित किए हों (कौन से जीव?)
पडिक्कमिउं	निवृत होने को (किससे)	एगिंदिया	एक इन्द्रिय वाले
इरियावहियाए	ईर्यापथसम्बन्धी	वेइंदिया	दो इन्द्रिय वाले
विराहणाए	विराधना से (विराधना किन जीवों की, और किस तरह?)	तेइंदिया	तीन इन्द्रिय वाले
		चउरिंदिया	चार इन्द्रिय वाले
गमणागमणे	जाने-आने में	पंचिंदिया	पाँच इन्द्रिय वाले (किस तरह पीड़ित किए हों?)
पाणक्कमणे	किसी प्राणी को दबाने से	अभिहया	सामने से आते रोके हों
बीयक्कमणे	बीज को दबाने से	वत्तिया	धूल आदि से ढ़के हों
हरियक्कमणे	वनस्पति को दबाने से	लेसिया	परस्पर मसले हों
ओसा	ओस को	संघाइया	इकट्ठे किए हों
उत्तिंग	कीड़ी आदि के बिल को	संघट्टिया	छुए हों
पणग	पाँच वर्ण की काई को	परियाविया	परितापना दी हो
		किलामिया	थकाए हों

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
उद्दविया	हैरान किए हों	ववरोविया	रहित किए हो
ठाणाओं	एक स्थान से	तस्स	उस का
ठाणं	दूसरे स्थान पर	मिच्छा	निष्फल हो
संकामिया	रक्खे हों	मि	मेरे लिए
जीवियाओ	जीवन से	दुक्कडं	दुष्कृत-पाप

भावार्थ

हे भगवन्! आप अपनी इच्छा के अनुसार आज्ञा दीजिए कि मैं ऐर्यापथिकी अर्थात् गमन मार्ग में अथवा स्वीकृत धर्माचरण में होने वाली पाप क्रिया का प्रतिक्रमण करूँ।

(गुरुदेव की ओर से आज्ञा मिल जाने पर कहना चाहिए कि हे भगवन् आपकी आज्ञा प्रमाण है।)

मार्ग से चलते-फिरते जो विराधना अर्थात् किसी जीव को पीड़ा हुई हो, तो मैं उस पाप से निवृत होना चाहता हूँ।

गमनागमन में किसी प्राणी को दबाकर, सचित्त बीज एवं हरित वनस्पति को कुचलकर, आकाश से गिरने वाली ओस, चींटी के बिल, पाँचों रंग की काई, सचित्त मिट्टि और मकड़ी के जालों को मसलकर, एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक किसी भी जीव की विराधना अर्थात् हिंसा की हो, सामने से आते हुओं को रोका हो, धूल आदि से ढ़का हो, जमीन पर या आपस में रगड़ा हो, एकत्रित करके ऊपर-नीचे ढ़ेर किया हो, असावधानी से क्लेशजनक रीति से छुआ हो, परितापना दी हो, श्रांत किया हो, थकाया हो, हैरान किया हो, एक जगह से दूसरी जगह बदला हो, जीवन से रहित किया हो, तो मेरा वह सब पाप हार्दिक पश्चाताप के द्वारा निष्फल हो।

उत्तरीकरण सूत्र (कायोत्सर्ग की प्रतिज्ञा)

तस्स उत्तरी करणेणं, पायच्छित्त करणेणं
विसोहि करणेणं, विसल्ली करणेणं
पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए, ठामि काउस्सग्गं,
अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं,
खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं,
वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए,
सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं, खेलसंचालेहिं,
सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं, एवमाइएहिं आगारेहिं,
अभग्गो, अविराहिओ, हुज्ज में काउसग्गो,
जाव अरिहंताणं, भगवंताण, नमुक्कारेणं न पारेमि,
ताव कायं ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि॥

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
तस्स	उस (पापयुक्त आत्मा) को	नीससिएणं	निःश्वास से
उत्तरीकरणेणं	उत्कृष्टता के लिए	खासिएणं	खाँसी से
पायच्छितकरणेणं	प्रायश्चित करने के लिए	छीएणं	छींक से
विसोहीकरणेणं	विशुद्धि करने के लिए	जंभाइएणं	जँभाई-उबासी से
विसल्लीकरणेणं	शल्य का त्याग करने के लिए	उड्डुएणं	डकार से
		वायनिसग्गेणं	अपान वायु से
पावांण	पाप	भमलीए	चक्कर आने से
कम्माणं	कर्मों का	पित्तमुच्छाए	पित्त विकार की मूर्छा से
निग्घायणट्ठाए	नाश करने के लिए	सुहुमेहिं अंग संचालेहिं	सूक्ष्म अंग के संचार से
ठामि	करता हूँ	सुहुमेहिं	सूक्ष्म
काउस्सग्गं	कायोत्सर्ग	खेल-संचालेहि	कफ के संचार से
अन्नत्थ	आगे कहे जाने वाले	सुहुमेहिं	सूक्ष्म
	आगारों के सिवा	दिट्ठि संचालेहिं	दृष्टि के संचार से
	कायोत्सर्ग में शेष	एवमाइएहिं	इत्यादि
	काय-व्यापारों का त्याग	आगारेहिं	आगारों, अपवादों से
	करता हूँ	अभग्गो	अभग्न
ऊससिएणं	उच्छ्वास में	अविराहिओ	विराधनारहित

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
हुज्ज	हो	न पारेमि	न पारूँ
मे	मेरा	ताव	तब तक
काउसग्गो	कायोत्सर्ग (कायोत्सर्ग कब तक?)	कायं	शरीर को
जाव	जब तक	ठाणेण	स्थिर रह कर (एक स्थान पर)
अरिहंताणं	अरिहंत	मोणेणं	मौन रहकर
भगवंताणं	भगवान् को	झाणेणं	ध्यानस्थ रहकर
नमुक्कारेणं	नमस्कार करके (कायोत्सर्ग को)	अप्पाणं	अपने को
		वोसिरामि	अलग करता हूँ (पाप कर्मों से)

भावार्थ

आत्मा की विशेष श्रेष्ठता के लिए, प्रायश्चित के लिए, विशेष निर्मलता के लिए, शल्य-रहित होने के लिए, पाप कर्मो का पूर्णतया विनाश करने के लिए मैं कायोत्सर्ग करता हूँ अर्थात् आत्मविकास की प्राप्ति के लिए शरीर सम्बन्धी समस्त चंचल व्यापरों का त्याग करता हूँ और विशुद्ध चिन्तन (ध्यान) करता हूँ।

कायोत्सर्ग में काय-व्यापारों का परित्याग करता हूँ, निश्चल होता हूँ (परन्तु जो शारीरिक क्रियाएँ अशक्य-परिहार होने के कारण स्वभावत: हरकत में आ जाती हैं उनको छोड़कर)।

श्वास लेने तथा छोड़ने, छींक, उबासी, डकार, अपानवायु, चक्कर, पित्त-विकारजन्य मूर्छा, सूक्ष्मरूप से अंगो का हिलना, सूक्ष्म रूप से कफ निकलना, सूक्ष्मरूप से नेत्रों का हरकत में आ जाना इत्यादि आगारों से मेरा कायोत्सर्ग अभग्न एवं अविराधित हो।

जब तक अरिहंत भगवान् को नमस्कार न कर लूँ अर्थात् **'नमो अरिहताणं'** न पढ़ लूँ, तब तक एक स्थान पर स्थिर रहकर, मौन रहकर, धर्म ध्यान में चित्त की एकाग्रता करके अपने शरीर को पाप-व्यापारों से अलग करता हूँ।

चतुर्विंशतिस्तव-सूत्र (लोगस्स का पाठ)

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्म-तित्थ यरे जिणे।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसं पि केवली॥1॥
उसभमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे॥2॥
सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअलसिज्जंस वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि॥3॥
कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च॥4॥
एवं मए अभित्थुआ, विहूयरयमला, पहीणजरमरणा।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु॥5॥
कित्तियवंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा।
आरुग्गबोहीलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु॥6॥
चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा।
सागरवरगंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु॥7॥

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
1.		संभवं	संभव
लोगस्स	सम्पूर्ण लोक के	च	और
उज्जोयगरे	उद्योत करने वाले	अभिणंदणं	अभिनन्दन
धम्म तित्थयरे	धर्मतीर्थ के कर्त्ता	च	और
जिणे	रागद्वेष के विजेता	सुमइं	सुमति को
अरिहंते	अरिहन्तों का	पउमपपहं	पद्‌म प्रभ
कित्तइस्सं	कीर्तन करूँगा	सुपासं	सुपार्श्व
चउवीसं पि	चौबीस ही	च	और
केवली	केवल ज्ञानी तीर्थंकरों की	जिणं	जिन को
2.		चंदप्पहं	चन्द्र प्रभ को
उसभं	ऋषभदेव	वंदे	वन्दना करता हूँ
च	और	3.	
अजियं	अजित को	सुविहिं	सुविधि
वंदे	वन्दन करता हूँ	पुप्फदंतं	पुष्पदन्त

शब्दार्थ

मूल	अर्थ
च	और
सीअल	शीतल
सिज्जंस	श्रेयांस
वासुपुज्जं	वासुपूज्य
विमलं	विमल
च	और
अणंतं	अनन्त
जिणं	जिन
धम्मं	धर्मनाथ
च	और
संतिं	शान्तिनाथ को
वंदामि	वन्दना करता हूँ
4.	
कुंथुं	कुन्थनाथ
अरं	अरहनाथ
च	और
मल्लिं	मल्लिनाथ को
वंदे	वन्दना करता हूँ
मुनिसुव्वयं	मुनिसुव्रत
च	और
नमिजिणं	नमिनाथ को
वंदामि	वन्दना करता हूँ
रिट्ठनेमिं	अरिष्टनेमि
पासं	पार्श्वनाथ
तह	तथा
वद्धमाणं च	वर्द्धमान को भी
5.	
एवं	इस प्रकार
मए	मेरे द्वारा
अभित्थुआ	स्तुति किए गए
विहूय-रयमला	पाप मल से रहित

मूल	अर्थ
पहीणजरमरणा	जन्म और मृत्यु से मुक्त
चउवीसं पि	चौबीसों ही
जिणवरा	जिनवर
तित्थयरा	तीर्थंकर
मे	मुझ पर
पसीयंतु	प्रसन्न हों
6.	
कित्तिय	वाणी से कीर्तन किये हुए
वंदिय	काया से वन्दना किये हुए
महिया	मन से पूजन किये हुए
जे	जो
ऐ	ये
लोगस्स	लोक में
उत्तमा	उत्तम
सिद्धा	तीर्थंकर हैं, वे
आरुग्गबोहीलाभं	आरोग्य अर्थात् मोक्ष के लिए सम्यक्त्व का लाभ
समाहिवरंमुत्तमं	सर्वोत्कृष्ट भाव समाधि को
दिंतु	देवें
7.	
चंदेसु	चन्द्रों से भी
निम्मलयरा	विशेष निर्मल (तीर्थंकर भगवान)
आइच्चेसु	सूर्यों से भी
अहियं	अधिक
पयासयरा	प्रकाश करने वाले
सागरवर	महासागर के समान
गंभीरा	गम्भीर
सिद्धा	सिद्ध भगवान्
सिंद्धिं	सिद्ध (मुक्ति, मोक्ष)
मम	मुझको
दिसंतु	देवें।

भावार्थ

अखिल विश्व में धर्म का प्रकाश करने वाले, धर्म-तीर्थ की स्थापना करने वाले, राग-द्वेष के जीतने वाले, अन्तरंग काम, क्रोधादि शत्रुओं को नष्ट करने वाले, केवल ज्ञानी चौबीस तीर्थंकरों का, मैं कीर्तन करूँगा अर्थात् स्तुति करूँगा।।1।।

श्री ऋषभदेव, श्री अजित नाथ जी की वन्दना करता हूँ। श्री सम्भव, अभिनन्दन, सुमित, पद्मप्रभ, सुपार्श्व और राग-द्वेष विजेता चन्द्रप्रभ को भी नमस्कार करता हूँ।।2।।

श्री पुष्पदन्त (सुविधिनाथ), शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल नाथ, राग-द्वेष के विजेता अनन्त, धर्म तथा श्री शान्तिनाथ भगवान को नमस्कार करता हूँ।।3।।

श्री कुन्थनाथ, अरहनाथ, मल्लिनाथ, मुनिसुव्रत एवं राग-द्वेष के विजेता नमिनाथजी की वन्दना करता हूँ। इसी प्रकार भगवान अरिष्टनेमि, पार्श्वनाथ एवं अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान (महावीर स्वामी) को भी नमस्कार करता हूँ।।4।।

जिनकी मैंने स्तुति की है, जो कर्मरूप धूलि के मल से रहित है, जो जन्म-मरण दोनों से सर्वथा मुक्त हैं, वे अन्तः शत्रुओं पर विजय पाने वाले धर्मप्रवर्तक चौबीस तीर्थंकर मुझ पर प्रसन्न हों।।5।।

जिनकी इन्द्र आदि देवों तथा मनुष्यों ने स्तुति की है, वन्दना की है, पूजा-अर्चना की है और जो अखिल संसार में सबसे उत्तम हैं, वे सिद्ध (तीर्थंकर भगवान) मुझे सिद्धत्व अर्थात् पूर्ण आत्मशान्ति, सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रय का पूर्ण लाभ तथा समाधि प्रदान करें।।6।।

जो अनेक कोटाकोटि चन्द्रमाओं से भी विशेष निर्मल हैं, जो अनेक सूर्यों से भी अधिक प्रकाशमान हैं, जो स्वयंभूरमण जैसे महासमुद्र के समान गंभीर हैं, वे सिद्ध-भगवान मुझे सिद्धि अर्पण करें, अर्थात् उनके आलम्बन से मुझे सिद्धि (मोक्ष) प्राप्त हो।।7।।

प्रणिपात-सूत्र (णमोत्थुणं का पाठ)

नमोत्थुणं, अरिहंताणं, भगवंताणं,
आइगराणं, तित्थयराणं, सयं-संबुद्धाणं,
पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवरपुंडरीयाणं, पुरसवरगंधहत्थीणं,
लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहियाणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोयगराणं,
अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं,
धम्मदयाणं, धमदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवरचाउरंत चक्कवट्टीणं,
दीव-ताण-सरणगइ-पइट्टाणं, अप्पडिहय वर नाण दंसण धराणं, वियट्टछउमाणं,
जिणाणं, जावयाणं, तिण्णाणं, तारयाणं, बुद्धाणं, बोहयाणं, मुत्ताणं, मोयगाणं,
सव्वन्नूणं, सव्वदरिसीणं, सिव-मयल-मरूअ-मणंत-मक्खय-मव्वबाह
मपुणराविंत्ति सिद्धिगइ-नामधेयं ठाणं* संपत्ताणं, नमो जिणाणं जियभयाणं।

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
नमोत्थुणं	नमस्कार हो	अभयदयाणं	अभय देने वाले
अरिहंताणं	अरिहन्त	चक्खुदयाणं	नेत्र देने वाले
भगवंताणं	भगवान को (भगवन् कैसे हैं?)	मग्गदयाणं	धर्म मार्ग के दाता
		सरणदयाणं	शरण के दाता
आइरागणं	धर्म की आदि करने वाले	जीवदयाणं	जीवन के दाता
तित्थयराणं	धर्मतीर्थ की स्थापना करने वाले,	बोहिदयाणं	बोधिसम्यक्त्व के दाता
		धम्म दयाणं	धर्म के दाता
सयं	स्वयं ही	धम्मदेसयाणं	धर्म के उपदेशक
संबुद्धाणं	सम्यग्बोध को पाने वाले	धम्म नायगाणं	धर्म के नायक
पुरिसुत्तामाणं	पुरूषों में श्रेष्ठ	धम्मसारहीणं	धर्म के सारथि
पुरिससीहाणं	पुरूषों में सिँह	धम्मवर	धर्म के श्रेष्ठ
पुरसिवरपुंडरीयाणं	पुरूषों में कमल	चाउरंत	चार गति का अन्त करने वाले
पुरसिवरगधहत्थीणं	पुरूषों में श्रेष्ठ गन्धहस्ती	चक्कवट्टीणं	चक्रवर्ती
लोगनाहाणं	लोक में नाथ	दीव-ताण	संसाररूपी समुद्र में द्वीप समान त्राणभूत
लोगहियाणं	लोक के हितकारी	सरण-गइ-पइट्टाणं	शरणभूत, आश्रयभूत
लागपईवाणं	लोक में दीपक	अप्पडिहय	अप्रतिहर
लोग-पज्जोयगराणं	लोक में ज्ञान का उद्योत करने वाले	वरनाणदंसण	श्रेष्ठ ज्ञान तथा दर्शन के

शब्दार्थ

मूल	अर्थ	मूल	अर्थ
धराणं	धारण करने वाले	अयलं	अचल-स्थिर
वियट्टछउमाणं	छद्म भाव से रहित	अरूयं	रोगरहित
जिणाणं	रागद्वेष के विजेता	अणंतं	अन्तरहित
जावयाणं	औरों को जिताने वाले	अक्खयं	अक्षय
तिण्णाणं	स्वयं तरे हुए	अव्वबाहं	बाधारहित
तारयाणं	दूसरों को तारने वाले	अपुणराविति	पुनरागमन से रहित
बुद्धाणं	स्वयं बोध को प्राप्त तथा	सिद्धिगइं	सिद्धिगति
बोहयाणं	दूसरों को बोध कराने वाले	नामधेयं	नामक
मुताणं	स्वयं मुक्त	ठाणं	स्थान को
मोयगाणं	दूसरों को मुक्त कराने वाले	संपत्ताणं	प्राप्त करने वाले
सव्वन्नूणं	सर्वज्ञ	नमो	नमस्कार हो
सव्वदरिसीणं	सर्वदर्शी, तथा	जिणाणं	जिन भगवान को
सिवं	उपद्रव रहित	जियभयाणं	भय के जीतने वाले

भावार्थ

श्री अरिहंत भगवान को नमस्कार हो। अरिहन्त भगवान कैसे हैं?धर्म की आदि करने वाले, धर्म-तीर्थ की स्थापना करने वाले, प्रबुद्ध हुए हैं।

पुरुषों में श्रेष्ठ, पुरुषों में सिंह, पुरुषों में कमल, पुरुषों में श्रेष्ठ गन्धहस्ती हैं। लोक में उत्तम, लोक के नाथ, लोक में हितकर्ता, लोक में दीपक, लोक में उद्योत करने वाले हैं।

अभय देने वाले, ज्ञानरूपी नेत्र देने वाले, धर्म के मार्ग के देने वाले, शरण देने वाले, संयम जीवन के देने वाले, बोधि-सम्यक्त्व के देने वाले, धर्म के उपदेशक, धर्म के नेता, धर्म के सारथी-संचालक हैं।

चार गति के अन्त करने वाले, श्रेष्ठ धर्म के चक्रवती, संसार रूपी समुद्र में द्वीप समान, त्राणभूत, आश्रयभूत और आधारभूत हैं।

अप्रतिहत एवं श्रेष्ठ ज्ञान-दर्शनके धारण करने वाले, ज्ञानावरण आदि घाति कर्म से अथवा प्रमाद से रहित हैं।

स्वयं रागद्वेष के जीतने वाले तथा दूसरों को तारने वाले हैं। स्वयं बोध पा चुके तथा दूसरों को बोध देने वाले हैं। स्वयं कर्म से मुक्त और दूसरों को मुक्त कराने वाले हैं।

सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, कल्याणरूप, अचल (स्थिर), रोगरहित, अनन्त, क्षयरहित, बाधा-पीड़ा रहित, जन्म-मरण से रहित, सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त कर चुके हैं, भय के जीतने वाले और रागद्वेष के जीतने वाले हैं, उन **जिन** भगवानों को मेरा नमस्कार हो।

Samaiyak Sutras
(in English)

NAMASKAR SUTRA (Bowing Meditation)

Namo Arihantanam	–	I bow down to Arihantas (Conquerors of Love & Hate)
Namo Sidhdhanam	–	I bow down to Sidhdhas (The Liberated Souls)
Namo Ayariyanam	–	I bow down to Acharyas (Preceptors)
Namo Uvajzayanam	–	I bow down to Upadhyayas (Teachers of Right Knowledge)
Namo Loe Savva Sahunam	–	I bow down to all Sadhus (Sages) in the universe

Esopancanamokkaro	-	This five fold bow destroys all
Savvapavappanasano	-	sins and obstacles and of all
Mangala nam ca savvesim	-	auspicious mantra,is the first
Padamama havai mangalam	-	and foremost one

The meaning and explanation:

There are Twelve virtues of Arihantas, Eight virtues of Siddhas, Thirty-six virtues of Acharyas, Twenty-five virtues of Upadhyayas and Twenty-seven virtues of Sadhus. The number of beads in a rosary is one hundred and eight i.e. the total number of all virtues of the Five Greats.

GURU VANDAN SUTRA (Thrice Kneeling)

Thikhkhutto	–	Three Times
Ayahinam	–	From the right side back to the right side with folded hands
Payahinam	–	With round movements
Kremi	–	I do
Vandami	–	I bow down
Namamsami	–	I kneel down
Sakkaremi	–	I honour
Sammanemi	–	I pay respect
Kallanam	–	You are Blesses
Mangalam	–	You are Auspicious
Devayam	–	You are Divine
Cheiyam	–	You are Knowledge Incarnate (giving peace to all the six kinds of souls)
Pajjuvasami	–	I worship (Your Holiness)
Matheyan	–	Head
Vandami	–	I bow down

The meaning and explanation:

In the first lesson we bow down to the Five Respectable Ones mentally and verbally. Now we kneel down physically to them with three time round movements of folded hands beginning from the right ear back to the right.

KAREMI BHANTE SUTRA

(The procedure to adopt the vow of Samayik)

Karemi Bhante !	–	I perform, Oh Respected Lords,
Samaiyam	–	the Samayik
Savajjam Jogam	–	of all sinful activites
Pachchakhami	–	I restrainm give up, by vow
Java Niyamam	–	till my vow lasts
Pajjuvasami	–	I worship you, Oh ! Lords
Duviham Tivihenam *	–	with two fold activities & three fold yoga
Na Karemi	–	I will not do and
Na Karavemi	–	I will not make others do
Manasa, Vayasa, Kayasa	–	by mind, speech and body
Tassa	–	from all this sins
Bhante !	–	O Respected Lords !
Padikkamami	–	I restrain and remove my self
Nindami	–	I hate or censure the sins with the attestation of my Soul
Garihami	–	I reprove the Sins with the perception of my Dharma Guru
Appanam	–	my soul
Vosirami	–	I vow to free from sins.

The meaning and explanation:

The procedure of accepting the vow of Samayik and its duration is explained in this lesson. One Samayik is of two ghadis i.e. one hour. In this way we should take the permission of Dharma Guru if present or the permission of Shree Simandhar Swami (staying in Panch Mahavideha Kshetra) in the absence of the Dharma Guru for the duration of Samayik. The behaviour during Samayik is also well explained.

During Samayik, we exclude ourselves mentally, verbally and physically from all the sins by not doing them ourself and by not asking others to do them. Also, we do not feel fit verbally and physically the others doing sins.

We should remain in the undisturbed peace of religious meditation and try to change the attitude of souls from sins.

ALOCHANA SUTRA (Iryavahiyam ka Path)

IRIYAVAHIYAM SUTRA (Expiation or Atonement)

Ichchhakarenam	–	With your desire
Sandisaha	–	Permit me
Bhagavam	–	God
Iryavahiyam	–	Action of walking on the road
Padikkamaami	–	I restrain and remove my self
Ichcham	–	With your order
Ichhchhami	–	I desire to
Padikkamium	–	Remove (Free) myself from Sin
Iriya Vahiyae	–	While walking on the road
Virahanae	–	I may have pained (distressed) the living beings
Gamanagamane	–	While coming and going
Panakkamane	–	I may have crushed the living beings
Biyakkamane	–	I may have crushed the live (animate) seeds
Hariyakkamane	–	I may have crushed the (live) plants
Osa	–	The dew
Uttinga	–	The anthills
Panaga	–	The moss of five colors
Daga	–	The live water
Matti	–	The live earth
Makkada	–	The webs of the spiders
Santana	–	The expansion of the spider's webs
Sankkamane	–	I may have crushed
Je	–	Whoever
Me	–	By me
Jiva	–	Living beings
Virahiya	–	May have been caused pain or tormented
Egindiya	–	The souls having one sense i.e. the sense of touch (e.g. earth, water, fire, air and plants)
Beindiya	–	The souls with two senses namely, the sense of touch and taste (e.g. worms, water worms, the conch, shell, etc.)

Teindiya	–	The souls with three senses i.e. the sense of touch, taste and smell (e.g. ants, black ants, lice, bigger lice, etc.)
Chaurindiya	–	The souls with four senses namely the sense of touch, taste, smell and vision (e.g. flies, bees, wasps, etc.)
Panchindiya	–	The souls with all the five senses namely the sense of touch, taste, smell, vision and hearing, (e.g. beings of water – fishes, etc., beings of land – animals like horses, etc., beings flying in the sky – birds, etc., all animals (, men (heaven dwellers and hell dwellers
Abhihaya	–	May have beaten or struck while coming
vattiya	–	May have covered or mixed with dust, etc.
Lesiya	–	May have rubbed
Sanghaiya	–	May have collided with one another
Sanghattiya	–	May have caused pain by touching or tilting
Pariyaviya	–	May have tormented (by entirely turning upside down)
Kilamiya	–	May have inflicted pain to them
Udaviya	–	May have frightened them
Thanao-Thanam	–	from one place to another
Sankamiya	–	May have shifted
Jeeviyao	–	from life
Vavaroviya	–	May have separated from life or made life-less
Tassa Michhchha Mi Dukkadam	–	that mine bad act or sin may be forgiven

The meaning and explanation :

In this lesson we beg humbly for forgiveness for whatever sins which might have been committed by us knowingly or unknowingly. The details of possible sins are given and thus by begging for forgiveness, we become light from sins (i.e. free from the possible Karma-Dust).

TASSA UTTARI SUTRA (Elevation of my soul)

Tassa	–	For the
Uttari	–	elevation (of my soul)
Karanenam	–	for doing
Payachhchhitta	–	expiation (removal of sins)
Karanenam	–	for doing
Visohi	–	more purification (of my soul)
Karanenam	–	for doing
Visalli	–	the darts (in the form of hypocrisy, ardent desires and false faith)
Karanenam	–	for doing
Pavanam	–	sinful actions
Kammanam	–	effects
Nigghayanaththae	–	for destroying
Thami	–	I stay
Kaussaggam	–	in a motionless posture
Annaththa	–	with (twelve) exceptions as follows:
Usasienam	–	breathing in deeply
Nisasienam	–	breathing out deeply
Khasienam	–	due to coughing
Chhienam	–	due to sneezing
Jambhaienam	–	due to yawning
Udduenam	–	due to eructation
Vaya-Nisaggenam	–	due to eruptation of bodily gas
Bhamalie	–	due to feeling of giddieness or dizzy
Pitta Muchhchhae	–	due to vomiting sensation, or fainting
Suhumehim	–	due to subtle
Anga Sanchalehim	–	bodily movements
Suhumehim	–	due to subtle
Khel Sanchalehim	-	cough movements

Suhumehim	–	due to subtle
Diththi Sanchalehim	–	eyes movements
Eva Maiehim	–	these twelve types and other
Agarehim	–	exceptions
Abhaggo	–	let my steady posture be undisturbed
Avirahio	–	not violated (without violating the mode)
Hujja Me	–	let my
Kaussaggo	–	motionless posture be
Java Arihantanam	–	as long as to Arihantas
Bhagavantanam	–	to the Lords
Namokkarenam	–	by reciting the Namaskar pad mentally
Na Paremi	–	(I) do not complete (the motionless posture)
Tava Kayam	–	till then (I keep) my body
Thanenam	–	in motionless posture at one place
Monenam	–	in complete silence (without speaking but reciting mentally)
Jhanenam	–	in meditation
Appanam	–	(I give up) my soul
Vosirami	–	by remaining aloof

Note : The words from "**Thanenam**" to "**Vosirami**" should be recieted mentally without moving the lips. Then "**Irriyavahi**" and "**Namokar Mantra**" should be mentally recited (meditated) in the Kaussagga i.e. the motionless posture.

The meaning and explanation :

In this lesson, the procedure of doing the Kaussagga (the motionless posture), the exceptions kept open, the reasons for doing it and the duration period are well explained.

LOGASSA SUTRA

Logassa	–	in the entire Universe
Ujjoyagare	–	causing pleasant light
Dhamma Tiththayare	–	Founders of the Four Tirthas (rescuers)
Jine	–	The conquerors of attachment and hatred
Arihante	–	Lord Arihantas, the destroyers of Karma Foes (Karma : effective power of past activities)
Kittaissam	–	I gloriously praise
Chauvisam	–	the Twenty-Four
Pi	–	and all others
Kevali	–	Omniscent Lords
Usabha	–	(I bow to) Rushabhdev Swami (1)
Majiyam	–	Ajitnath Swami (2)
Cha	–	and
Vande	–	I bow down to
Sambhava	–	Sambhavnath Swami (3)
Mabhinandanam	–	Abhinandan Swami (4)
Cha	–	and
Sumaim	–	Sumatinath Swami (5)
Cha	–	and
Paumappaham	–	Padmaprabhu Swami (6)
Supasam	–	Suparshavanath Swami (7)
Jinam	–	the conquerors of attachment and hatred
Cha	–	and to
Chandppaham	–	Chandraprabhu Swami (8)
Vande	–	I bow down to
Suvihim	–	Suvidhinath Swami (9)
Cha	–	and whose second name is
Puphphadantam	–	Pushpadanta Swami
Siala	–	Shitalnath Swami (10)
Sijjamsa	–	Shreyansanath Swami (11)

Vasupujjam	–	Vasupujya Swami (12)
Cha	–	and
Vimala	–	Vimalnath Swami (13)
Mananatam	–	Ananthnath Swami (14)
Cha	–	and
Jinam	–	Jinas who have conquered love and hatred
Dhamman	–	Dharmanath Swami (15)
Santim	–	Shantinath Swami (16)
Cha	–	and
Vandami	–	I bow down to
Kunthum	–	Kunthunath Swami (17)
Aram	–	Arnath Swami (18)
Cha	–	and
Mallim	–	Mallinath Swami (19)
Vande	–	I bow down to
Munisuvvayam	–	Munisuvrata Swami (20)
Nami	–	Naminath Swami (21)
Jinam	–	Jinas, the conquerors of Karmas
Cha	–	and
Vandami	–	I bow down to
Riththnemim	–	Aristanemi i.e. Neminath Swami (22)
Pasam	–	Parsavanath Swami (23)
Taha	–	and also to
Vadhdhamanam	–	Vardhman i.e. Mahavir Swami (24)
Cha	–	and
Evam	–	in this way
Mae	–	by me
Abhithua	–	are praised
Vihuya Raya mala	–	those who have removed the Karma dust and the Karma dirt
Pahina Jara Marana	–	who have subdued or destroyed the old age and death
Chauvisam	–	the Twenty Four
Pi	–	and all other

Jinavara	–	Omnisient Jinas
Tiththayara Me	–	Tirthankaras with me
Pasiyantu	–	be pleased
Kittiya	–	(I have) praised you (by speech)
Vandiya	–	bowed down (to you physically)
Mahiya	–	worshipped (you mentally)
Je E	–	who are in
Logassa	–	the Universe
Uttama	–	the Best
Siddha	–	Liberated Souls
Arugga	–	(may deliver my soul) health (i.e. may free my soul from diseases of Karma)
Bohi Labham	–	(may bestow upon me) the benefits of clear and right faith
Samahi Var Muttamam	–	and deep meditation the Supreme position (of the liberated souls)
Dintu	–	may They give me
Chandesu Nimmalayara	–	more than Moon you are purer
Aichchesu Ahiyam Payasayara	–	than Sun more Enlightening Light Giver
Sagarvara Gambhira	–	like great ocean you are deeply calm
Sidhdha	–	Oh Lord Siddhas
Sidhdhim	–	Liberation (emancipation)
Mama Disantu	–	upon me may be bestowed

The meaning and explanation :

This lesson has seven verses. The names of the twenty four Tirthankars and their Virtues are praised. They have achieved Liberation (Moksha) by destroying their eight Karmas. We should follow their foot steps to gain those Virutes to achieve the position of eternal peace and happiness.

PANIPAT SUTRA (Namoththunam sutra)

Namoththunam	–	let my respects be to
Arihantanam	–	Lord Arihantas
Bhagvantanam	–	Gods
Aigaranam	–	the first promoters of religion
Tiththayaranam	–	the founders of four tirthas – sadhu, sadhvi, shravak, shravika
Sayam-sambudhdhanam	–	the self enlightened ones
Purisuttamanam	–	supreme among all humans
Purisasihanam	–	like the lions among human-beings
Purisavar Pundariyanam	–	like the best Pundarik lotuses among the humans
Purisa-var-gandhahaththinam	–	like the best elephant among the humans
Loguttamanam	–	topmost in the Universe
Loga-Nahanam	–	the Masters of the Universe
Loga-Hianam	–	beneficent to all the lives in the Universe
Loga-Paivanam	–	like a lamp in the Universe
Loga-Pajjoagaranam	–	like sun enlightening the Universe
Abhayadayanam	–	donors of security or protection
Chakhkhudayanam	–	bestowers of vision in the form of knowledge
Maggadayanam	–	demonstrators of the right R Religious path
Saran Dayanam	–	givers of shelter
Jivdayanam	–	savers of souls
Bohidayanam	–	preachers of right faith
Dhammadayanam	–	the showers of religious path
Dhammadesayanam	–	the preachers of religion
Dhammanayaganam	–	the leaders of religion
Dhammasarhinam	–	charioteers of religion
Dhammavar	–	prime in the religion
Chauranta-Chakka-Vattinam	–	the great emperors (chakravati) for ending the souls transmigration from four birth cycles

DivoTanam	–	an island for the souls sinking in the life ocean who are protection incarnate (removers of grief)
Sarana Gai Paiththanam	–	saviours in four birth-cycle of the souls in the life ocean
Appadihayavara	–	who cannot be killed or obstructed the best
Nanadansana-Dharanam	–	bearers of absolute knowledge and vision
Viatta-Chhaumanam	–	gone is whose ignorance
Jinanam	–	victors of likes and dislikes
Javayanam	–	causing others to win their likes and dislikes
Tinnanam	–	who have swimmed over the life- ocean of transmigration
Tarayanam	–	life-bouys for others
Budhdhanam	–	the self enlightened ones
Bohayanam	–	inspirers of enlightened faith to others
Muttanam	–	self liberated from karmas
Moaganam	–	liberators of others from eight karmas
Savvannunam	–	the Omniscient Lords
Savvadarisinam	–	with all pervading vision
Siva	–	free from calamity
Mayala	–	firm like a mountain
Maruya	–	free from diseases
Mananta	–	endless
Makhkhaya	–	undestructable
Mavvabaha	–	conquerors of pain and sorrow
Mapunaravitti	–	where there is no return to sansar
Siddhi gai	–	the position to liberation
Namdheyam	–	by that immortal name
Thanam	–	and place
Sampattanam	–	who have achieved
Namo Jinanam	-	I bow to the Gods
Jiyabhayanam	-	conqueror of Fear

उवसग्गहरं स्तोत्र

(आचार्य भद्रबाहुस्वामी जी द्वारा रचित)

1. उवसग्गहरं पासं, पासं वंदामि कम्मघणमुक्कं।
   विसहर-विसनिन्नासं मंगल- कल्लाण-आवासं।।
2. विसहर फुल्लिंगमंतं, कंठे धारेइ जो सया मणुओ।
   तस्स गह-रोग-मारी, दुट्ठ-जरा जंति उवसामं।।
3. चिट्ठउ दूरे मंतो, तुज्झ पणामो वि बहुफलो होइ।
   नर-तिरिएसु, वि जीवा, पावंति न दुक्ख-दोहग्गं।।
4. तुह सम्मते लद्धे, चिंतामणि-कप्पपायवब्भहिए।
   पावंति अविग्घेणं, जीवा अयरामरं ठाणं।।
5. इअ संथुओ महायस! भत्तिब्भर-निब्भरेण हियएण।
   ता देव! दिज्ज बोहिं भवे भवे पास जिणचंद।।

दशवैकालिक सूत्र

प्रथम-अध्ययन

1. धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
   देवावि तं नमंसंति, जस्स धम्मे सया मणो।।
2. जहा दुमस्स पुप्फेसु, भमरो आवियइ रसं।
   न य पुप्फं किलामेइ, सो य पीणेइ अप्पयं।।
3. एमे ए समणा मुत्ता, जे लोए संति साहुणो।
   विहंगमा व पुप्फेस, दाणभत्तेसणे रया।।
4. वयं च वित्तिं लब्भामो, न य कोइ उवहम्मइ।
   अहागडेसु रीयंते, पुप्फेसु भमरा जहा।।
5. महुगार समा बुद्धा, जे भवंति अणिस्सिया।
   नाणापिंडरया दंता, तेण वुच्चंति साहुणो-त्ति बेमि।।

भक्तामर स्तोत्र

(आचार्य श्री मानतुंग द्वारा रचित)

प्राकृत

भक्तामरप्रणतमोलिमणिप्रभाणा-
मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम्।
सम्यक् प्रणम्य जिन-पादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्।।1

यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-
दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्।।2

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ,
स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम्।
बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्।।3

वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र शशाङ्ककान्तान्
कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या।
कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रम्
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम्।।4

सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश,
कर्त्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः।
प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम्।।5

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतुः।।6

(हिन्दी पद्यानुवाद भगवन श्री रामप्रसाद जी महाराज द्वारा)

हिन्दी

भक्तिनत देवों के मुकटों से भी अधिक सुहावने।
कर्म युग की आदि में अवलम्ब जन-जन के बने।।1।।

आदि जिनके उन पदों में वन्दना कर भक्ति से।
देवेन्द्रस्तुत की स्तुति करूँ निज तुच्छ प्रतिभा शक्ति से।।2।।

बिन बुद्धि वैभव के करूँ स्तुति पाठ रचना चपल हूं।
जल चन्द्र छूते बाल सा अविवेक हूं मति विकल हूं।।3।।

सौम्य शशी से आपके गुण कौन सुर गुरु गा सके।
क्षुब्ध भीषण जलधि का तट कौन तर कर पा सके।।4।।

हूँ अशक्त तथापि है ये यत्न भावोत्कर्ष से।
सिंह से निज शिशु बचाने मृगी जाती हर्ष से।।5।।

हूँ अल्प-विद्य तथापि तेरी भक्ति करती है मुखर।
आम्र की नव मंजरी कोकिल को देती मंजु स्वर।।6।।

प्राकृत

त्वत्संस्तवेन भवसंततिसन्निबद्धं,
पापं क्षणात् क्षयमुपैति शरीरभाजाम्।
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु,
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमंधकारम्।।7

मत्वेति नाथ! तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनुधियाऽपि तव प्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु,
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः।।8

आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हंति
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि।।9

नात्यद्भुतं भुवनभूषणभूतनाथ,
भूतैर्गुणैर्भुवि भवंततमभिष्टुवन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति।।10

दृष्ट्वा भवंतमनिमेषविलोकनीयं,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः,
पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिंधोः,
क्षारं जलं जलनिधेरशितुं क इच्छेत्।।11

यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वम्,
निर्मापितस्त्रिभुवनैक ललाम भूत।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्याम्,
यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति।।12

वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि,
निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम्
बिम्बं कलंकमलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पांडुपलाशकल्पम्।।13

हिन्दी

आपकी स्तुति से प्रभो भव भव के पातक चूर हों।
रवि प्रभा से रात्रि के ज्यों अन्धतम सब दूर हों।।7।।

सौन्दर्य जो भी इस स्तवन में है तवैव प्रभाव से।
मुक्तसम पत्रस्थ जल को निरखते सब चाव से।।8।।

स्तवन की क्या बात हरती पाप सब तेरी कथा।
सूर्य क्या उसकी किरण से ही कमल खिलते यथा।।9।।

आपकी सदुपासना से आप जैसे हों सभी।
जो न अपने सम करे क्या सेव्य है श्रीमान् भी।।10।।

आपकी दर्शन किए तो, और सब कुछ व्यर्थ है।
क्षीर सागर पाएं तो क्षाराब्धि से क्या अर्थ है।।11।।

शान्त सुन्दर सब चुने परमाणु तुमने सृष्टि के।
अन्य कोई रूप क्यों अनुकूल हों फिर दृष्टि के।।12।।

चन्द्र की उपमा तुम्हारे रूप के प्रति-रूप है।
सूर्य सम्मुख जो कि शुष्क पलाश पत्र स्वरूप है।।13।।

प्राकृत	हिन्दी
सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलाप, शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति। ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर नाथमेकम्, कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम्।।14	त्रिजगदतिशायी तुम्हारे गुण मनोरम चन्द्र से। क्यों किसी से बाध्य हों सम्बद्ध जो हों जिनेन्द्र से।।14।।
चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभिर्, नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम्। कल्पांतकालमरुता चलिताचलेन, किं मंदराद्रिशिखरं चलितं कदाचित्।।15	अप्सराओं से न विचलित आपका मन हो सका। प्रलय में भी क्या सुमेरु शैल स्थिरता खो सका।।15।।
निर्धूमवर्तिरपवर्जिततैलपूरः कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि। गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः।।16	तेल बाती के बिना जलता न धूम्र समीप है। आंधियों में स्थिर तू लोकालोक व्यापी दीप है।।16।।
नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः, स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति। नांभोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः, सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके।।17	अस्त होता है न राहु ग्रस्त वो मार्तण्ड है। बादलों और आंधियों में रहता तेज अखण्ड है।।17।।
नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारं गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम्। विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति विद्योतयज्जगदपूर्वशशांकबिम्बम्।।18	नित्य उदयी मोह तम राशि विनाशी चन्द्र है। आवरण से रहित जगदालोककर निस्तनद्र है।।18।।
किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा, युष्मन्मुखेंदुदलितेषु तमस्सु नाथ। निष्पन्नशालि वनशालिनि जीवलोके, कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः।।19	सूर्य क्या और चन्द्र क्या यदि आपका संसर्ग हो। हो स्वतः सम्पन्न धरती तो वृथा घन वर्ग हो।।19।।
ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु। तेजः स्फुरन्मणिषु याति तथा महत्वं नैवं तु काचशकले किरणाकुलेपि।।20	अन्य देवों में न तुमसा ज्ञान का उत्कर्ष है। काँच में मणि सा कहो कब तेज का संघर्ष है।।20।।
मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा, दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति। किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः, कश्चिन्मनो हरित नाथ भवांतरेपि।।21	अन्य देवों से दृगों को कब हुआ संतोष है। आपका दर्शन भुवन में सर्वथा निर्दोष है।।21।।

प्राकृत	हिन्दी
स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्तिपुत्रान्, नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्ररश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम्।।22	नारियों में आपकी जननी पवित्र अनन्य है। सूर्य की पहली किरण से पूर्व दिक् ज्यों धन्य है।।22।।
त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस- मादित्यवर्णममलं तमसः परस्तात् त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं, नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनींद्र पन्थाः।।।23	हो परम आराध्य मुनियों के विकारातीत हो। आपको पाए बिना नहीं मुक्ति पथ निर्णीत हो।।23।।
त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वर मनंतमनङ्गकेतुम्। योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः।।24	ब्रह्म हैं ईश्वर प्रभु हैं ज्ञान ज्योति अनन्त हैं। योगियों के ईश कहते आपको ही सन्त हैं।।24।।
बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्, त्वं शंकरोसि भुवनत्रयशंकरत्वात्। धातासि धीर शिवमार्ग विधेर्विधानात्, यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि।।25	बोधि दाता बुद्धतुम कल्याणकर शंकर तुम्हीं। विधि विधायक आप ब्रह्मा पुरुष उत्तमवर तुम्हीं।।25।।
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ, तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय। तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय तुभ्यं नमो जिन भवोदधि-शोषणाय।।26	आर्त्तिहर जग के धरा के अमलभूषण वन्दना। है तुम्हें जगदीश भवहर विगत दूषण वन्दना।।26।।
को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै, स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः, स्वप्नांतरेपि न कदाचिदपीक्षितोसि।।27	सब गुणों के पात्र हो यों देख करके दोषगण। छोड़ तुमको कर चुके हैं अन्य देवों का वरण।।27।।
उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूख- माभातिरूपममलं भवतो नितान्तम्। स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमोवितानं बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति।।28	अशोक तरु की श्याम छवि से आपकी स्वर्णिम छवि। जब मिले तब सूर्यघन संयोग मानें सब कवि।।28।।
सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्। बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं, तुङ्गोदयाद्रि शिरसीव सहस्त्ररश्मेः।।29	मणि जटित आसन पे बैठे आप यों शोभित हुए। उदयगिरि के शिखर पर ज्यों दिन मणिसमुदित हुए।।29।।

प्राकृत	हिन्दी
कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते तव वपु: कलधौतकान्तम्। उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार- मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम्।।30	स्वच्छ चामर मण्डलों के बीच तन की भव्यता। स्वर्ण गिरि के निर्झरों सी पा रहीं द्रष्टव्यता।।30।।
छत्रत्रयं तव विभाति शशांककांत- मुच्चै: स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम् मुक्ताफलप्रकरजालविवृद्धशोभं प्रख्यापयत् त्रिजगत: परमेश्वरत्वम्।।31	मुक्ता मंडित चन्द्र कांति छत्र जो ये तीन हैं। कह रहे वे इन प्रभु के तीन लोक अधीन हैं।।31।।
गम्भीरताररवपूरितदिग्विभाग स्त्रैलौक्यलोकशुभसङ्गमभूतिदक्ष:। सद्धर्मराज जयघोषणघोषक: सन् खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशस: प्रवादी।।32	संसार को शुभ प्राप्ति की शुभ सूचना करता हुआ। दिव्य बजता था नगाड़ा तार स्वर भरता हुआ।।32।।
मंदार सुन्दर नमेरूसुपारिजात- संतानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा। गंधोदबिंदुशुभ मंदमरुत्प्रपाता, दिव्या दिव: पतति ते वचसां ततिर्वा।।33	कल्प तरुओं के सुमन थे देवगण बरसा रहे। औ उधर जिनराज भी वाणी सुधा सरसा रहे।।33।।
शुम्भत्प्रभावलय भूरिविभा विभोस्ते लोकत्रय द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती। प्रोद्यद्दिवाकर-निरन्तर भूरिसंख्या- दीप्त्याजयत्यपि निशामपि सोम-सौम्याम्।।34	ज्यौं दिवाकर की प्रभा शशी की प्रभा से तीव्रतर। यों है भामण्डल तुम्हारा सब प्रभाओं में प्रखर।।34।।
स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्ट: सद्धर्मतत्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्या:। दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्व- भाषास्वभाव-परिणामगुणै: प्रयोज्य:।।35	आपकी दिव्य ध्वनि है धर्म तत्व प्रसारिणी। सर्व भाषा भाषियों को सुगम, भ्रांति निवारिणी।।35।।
उन्निद्रहेमनवपङ्कज-पुञ्जकान्ती, पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ। पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र! धत्त: पद्मानि तत्र विबुधा: परिकल्पयन्ति।।36	आपके पद कमल अंकित हों जिनेन्द्र जहाँ जहाँ। स्वर्णमय कमलों की रचना देव करते हैं वहाँ।।36।।
इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र! धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य। यादृक्प्रभा दिनकृत प्रहतांधकारा, तादृक्कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोपि।।37	देशना-संपत्ति तुमसी और की संभव नहीं। क्या प्रभाकर सी प्रभा ग्रह वर्ग की होती कहीं।।37।।

प्राकृत	हिन्दी
श्च्योतन्मदाविल विलोलकपोलमूल- मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम्। ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तम् दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम्।।38	मत्त हस्ती आए सम्मुख क्रुद्ध क्षुब्ध नितान्त हो। आपका आश्रय मिले तो वे भी सौम्य प्रशान्त हो।।38।।
भिन्नेभकुंभगलदुज्जवलशोणिताक्त- मुक्ताफल प्रकरभूषितभूमिभागः। बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि, नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते।।39	फाड़ता करि मस्तकों को सिंह करता आक्रमण। पर न उसकी और आता जो गहे तेरी शरण।।39।।
कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं, दावानलं ज्वलितमुज्जवलमुत्स्फुलिंगम्। विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम्।।40	आंधियों की प्रेरणा से विश्वनाशकता लिए। ज्वालमाला नामजल से शांत हो बिन ही किए।।40।।
रक्तेक्षणं समदकोकिल-कण्ठनीलं, क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम्। आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशंक- स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः।।41	आपके शुभ नाम की जब नागदमनी पास हो। क्रुद्ध रक्तेक्षण फणी से क्यों भला संत्रास हो।।41।।
वल्गत्तुरङ्गगजगर्जित भीमनाद- माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम्। उद्यद्दिवाकरमयूख-शिखापविद्धं त्कीर्तनात् तम इवाशु भिदामुपैति।।42	हाथियों अश्वों से सज्जित शत्रु बल संग्राम से। भागें सभी रवि से अन्धेरे की तरह तवनाम से।।42।।
कुंताग्रभिन्नगज-शोणितवारिवाह- वेगावतार-तरणातुरयोधभीमे। युद्धेजयं विजितदुर्जयजेयपक्षा- स्त्वत्पाद-पंकजवनाश्रयिणो लभंते।।43	रक्त धाराओं से जो भीषण तथा दुर्जेय हो। उस युद्ध में तब पादसेवी को विजय का श्रेय हो।।43।।
अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्र- पाठीनपीठभयदोल्वणवाडवाग्नौ। रङ्गत्तरङ्ग शिखरस्थितयानपात्रा- स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति।।44	ग्राहगण से क्षुब्ध सागर आ रहा तूफान हो। जिन चरण के स्मरण से ही पार तव जलयान हो।।44।।
उद्भूतभीषण जलोदरभारभुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः। त्वत्पाद-पंकजरजोऽमृतदिग्धदेहा, मर्त्या भवंति मकरध्वजतुल्यरूपाः।।45	जीवनान्तक जब जलोदर आदि कोई-व्याधि हो। चरण रज पीयूष पाते ही समग्र समाधि हो।।45।।

प्राकृत	हिन्दी
आपाद-कण्ठमुरुशृङ्खल-वेष्टिताङ्गा, गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजंघाः त्वन्नाममंत्रमनिशं मनुजा स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति।।46	बंधनों से हों बंधे सब अंग कारागार में। नाम जपते ही सभी बन्धन कटें क्षण में।।46।।
मत्तद्विपेन्द्र-मृगराजदवानलाहि, संग्रामवारिधिमहोदरबंधनोत्थम्। तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव, यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते।।47	अष्ट विध उपरोक्त भय और अन्य सारी भीतियां। स्तवन से सब नष्ट हों जागें समुज्जवल प्रीतियाँ।।47।।
स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र! गुणैर्निबद्धां, भक्त्या मया रुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम्। धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं, तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः।।48	रुचिर वर्ण विचित्र गुण पुष्पों से की माला ग्रथित। जो करे धारण मिले सौभाग्य श्री उसको अमित।।48।।

प्रशस्ति

-"मानतुगाचार्य की ये कृति अमल उज्जवल सदा।
भक्त मंडल के लिए है शान्ति प्रद सौख्य प्रदा।।49।।"

पुच्छिंस्सुणं (वीर-स्तुति)

(सूयगडांग सूत्र-छठा अध्ययन)

हिन्दी पद्यानुवाद भगवन श्री राम प्रसाद जी महाराज द्वारा

प्राकृत	हिन्दी
1. पुच्छिंसुणं समण माहणा य, अगारिणो य परतित्थिया य। से केई णेगंतहियं धम्ममाहु, अणेलिसं साहु समिक्खयाए।।	पूछते हैं श्रमण ब्राह्मण गृही त्यागी सर्वजन। कौन थे महावीर सम्यग् धर्म वादी ज्ञान धन।।1।।
2. कहं च णाणं कहं दंसणं से, सीलं कहं णायसुयस्स आसी। जाणासि णं भिक्खु! जहातहेणं, अहासुयं बूहि जहा णिसंतं।।	ज्ञान दर्शन शील उनका किस तरह का था अहो। सुना देखा जो स्वयं तुमने वही गुरुवर कहो।।2।।
3. खेयन्नए से कुसले महेसी, अणंतणाणी य अणंतदंसी। जसंसिणो चक्खुपहे ठियस्स, जाणाहि धम्मं च धिइं च पेहि।।	आत्म दर्शन में कुशल थे ज्ञान में गंभीरतम। धर्मयंश जिनके हैं अब भी स्मृतियों में प्रत्यक्षसम।।3।।
4. उड्ढं अहेयं तिरियं दिसासु, तसा य जे थावर जे य पाणा। से णिच्चणिच्चेहि समिक्ख पन्ने, दीवेव धम्मं समियं उदाहु।।	जानकर सब स्थूल सूक्ष्म प्राणियों को लोक के। धर्म बतलाया अहिंसा द्वीप सम अवलोक के।।4।।
5. से सव्वदंसी अभिभूय णाणी, णिरामगंधे धिइमं ठियप्पा। अणुत्तरे सव्व-जंगासि विज्जं, गंथा अतीते अभए अणाऊ।।	जीत कर खुद को बने निर्दोष धृति स्थिति शान्तिधर। विश्व के विद्वान् अनुपम ग्रन्थियाँ सब छेद कर।।5।।
6. से भूइपण्णे अणिएअचारी, ओहंतरे धीरे अणंतचक्खु। अणुत्तरं तप्पइ सूरिए वा, वइरोयणिंदे व तमं पगासे।।	घूमते सर्वत्र किन्तु तटस्थ लोक प्रवाह से। पाप तम नाशार्थ फिरते सूर्य सम उत्साह से।।6।।
7. अणुत्तर धम्ममिणं जिणाणं, णेया मुणी कासव आसुपत्रे। इंदे व देवाण महाणुभावे, सहस्स णेता दिविणं विसिट्ठे।।	उत्कृष्ट है जिन धर्म जिसके नेता वे उत्कृष्ट थे। नेतृत्व में देवेन्द्र तुल्य सहस्र दृष्टि विशिष्ट थे।।7।।
8. से पन्नया अक्खयसायरे वा, महोदही वावि अणंतपारे। अणाइले वा अकसाइ मुक्के, सक्के व देवाहिवई जुइमं।।	ज्ञान के अक्षय जलधि थे मलिनता से दूर थे। इन्द्रवत् द्युति तेज यश सौभाग्य से भरपूर थे।।8।।
9. से वीरिएणं पडिपुण्णवीरिए, सुंदसणे वा णगसव्वसेट्ठे। सुरालए वासि मुदागरे से, विरायए णेगगुणोववेए।।	वीर थे दृढ़ वीर्य थे अविचल सुदर्शन(सुमेरू) सम तथा। गुण अनन्त उपासकों में मोद भरते सर्वथा।।9।।
10. सयं सहस्साण उ जोयणाणं, तिकंडगे पंडगवेजयंते। से जोयणे णवणवई सहस्से, उद्धुस्सितो हेट्ठ सहस्समेगं।।	लक्ष योजन मेरू के ज्यों तीन काण्ड प्रधान हैं। उत्तरोत्तर वीर जीवन के यों तीन विधान हैं।।10।।
11. पुट्ठे णभे चिट्ठइ भूमिवट्ठिए, जं सूरिया अणुपरिवट्टयंति। से हेमवन्ने बहुणंदणे य, जंसी रइं वेदयंति महिंदा।।	भूमि से अवकाश तक के व्याप्त पूण्य प्रभाव से स्वर्ण निभ गुण नन्दनों से युक्त क्षायिक भाव से।।11।।
12. से पव्वए सद्दमहप्पगासे, विरायई कंचणमट्ठवन्ने। अणुत्तरे गिरिसु थ पव्वदुग्गे, गिरिवरे से जलिए व भोमे।।	मेरू समध्वनि के प्रकाशक ज्ञान के घन गाजते। तेज पुञ्जों से ज्वलंत गिरीश सम अवराजते।।12।।
13. महीइ मज्झम्मि ठिए णगिंदे, पन्नायते सूरिय सुद्धलेसे। एवं सिरिए उ स भूरिवण्णे, मणोरमे जोयइ अच्चिमाली।।	है खड़ा भूमध्य में सबको प्रभावित कर रहा। जिस तरह नगपति तथा श्री वीर भी करते अहा।।13।।

प्राकृत

14. सुदंसणस्सेव जसो गिरिस्स, पवुच्चइ महतो पव्वयस्स।
एतोवमे समणे नायपुत्ते, जाई-जसो-दंसणनाणसीले।।

15. गिरिवरे वा निसहाऽऽययाणं, रुयए व सेट्ठे वलयायताणं।
तओवमे से जगभूइपन्ने, मुणीण मज्झे तमुदाहु पन्ने।।

16. अणुत्तरं धम्ममुइरइत्ता, अणुत्तरं झाणवरं झियाइं।
सुसुक्कसुक्कं अपगंडसुक्कं, संखिंदुएगंतवदातसुक्कं।।

17. अणुत्तरगं परमं महेसी, असेसकम्मं स विसोहइत्ता।
सिद्धिं गइं साइमणंत पत्ते नाणेण सीलेण य दंसणेण।।

18. रुक्खेसु णाए जह सामली वा, जस्सिं रतिं वेदयंती सुवन्ना।
वणेसु वा नंदणमाहु सेट्ठं, नाणेण सीलेण य भूइपन्ने।।

19. थणियं व सद्दाण अणुत्तरे उ, चंदो व ताराण महाणुभावे।
गंधेसु वा चंदणमाहु सेट्ठं, एवं मुणीणं अपडिन्नमाहु।।

20. जहा सयंभू उदहीण सेट्ठे, नागेसु वा धरणिंदमाहु सेट्ठे।
खोओदए वा रसवेजयंते, तवोवहाणे मुणि वेजयंते।।

21. हत्थीसु एरावणमाहु णाए, सीहो मियाणं सलिलाण गंगा।
पक्खीसु वा गरुले वेणुदेवे, निव्वाणवादीणिह णायपुत्ते।।

22. जोहेसु णाए जह वीससेणे, पुप्फेसु वा जह अरविंदमाहु।
खत्तीण सेट्ठे जह दंतवक्के, इसीण सेट्ठे तह वद्धमाणे।।

23. दाणाण सेट्ठं अभयप्पयाणं, सच्चेसु वा अणवज्जं वयंति।
तवेसु वा उत्तमं बंभचेरं, लोगुत्तमे समणे नायपुत्ते।।

24. ठिईण सेट्ठा लवसत्तमा वा, सभा सुहम्मा व सभाण सेट्ठा।
निव्वाण सेट्ठा जह सव्वधम्मा, ण णायपुत्ता परमत्थि नाणी।।

25. पुढोवमे धुणइ विगयगेही, न संणिहिं कुव्वई आसुपन्ने।
तरिउं समुद्दं व महाभवोघं, अभयंकरे वीरे अणंतचक्खू।।

26. कोहं च माणं च तहेव मायं, लोभं चउत्थं अज्झत्थदोसा।
एआणि वंता अरहा महेसी, ण कुव्वई पाव ण कारवेइ।।

27. किरियाकिरियं वेणइयाणुवायं, अण्णाणियाणं पडियच्च ठाणं।
से सव्वायं इति वेयइत्ता, उवट्ठिए संजम दीहरायं।।

28. से वारिया इत्थि सराइभत्तं, उवहाणवं दुक्खखयट्ठयाए।
लोगं विदित्ता आरं परं च, सव्वं पभू वारिय सव्ववारं।।

29. सोच्चा य धम्मं अरिहंतभासियं, समाहियं अट्ठपदोवसुद्धं।
तं सद्दहाणा य जणा अणाऊ, इंदेव देवाहिव आगमिस्संति।।

।।त्ति बेमि।।

हिन्दी

जन्म कुल से कीर्ति से और ज्ञान दर्शन शील से।
वीर थे सर्वोच्च गिरिवर से महत् नभ नील से।।14।।

निषध आयात पर्वतों में ज्ञानियों में वे प्रवर।
रूचक वर्तुल नगों में तेजस्वियों में वे प्रखर।।15।।

था अनुत्तर सब ही उनका धर्म भी और ध्यान भी।
शुक्लता में शंख चन्द्र नहीं शतांश समान भी।।16।।

बनके सर्वोत्कृष्ट साधक पापमल शोधन किया।
ज्ञान दर्शन शील से सिद्धत्व को था पा लिया।।17।।

देवताओं को सुखद तरु शाल्मलि सा ज्ञान था।
रम्य वन नन्दन सरीखा उनका शील प्रधान था।।18।।

शब्दों में घन गर्जना तारों में चन्द्र महानतम।
गन्ध में चन्दन प्रभु थे मुनिवरों में वे अमम।।19।।

सागरों में ज्यों स्वयम्भू नाग देवों में धरण।
इक्षु-रस माधुर्य में यों ज्ञान तप में वे श्रमण।।20।।

श्रेष्ठ ऐरावत गजों में सिंह मृग गंगा का नीर।
पक्षियों में गरुड़ धर्म-प्रवर्तकों में महावीर।।21।।

वासुदेव अजेय योद्धा पुष्पवर अरविन्द हैं।
शासकों में चक्रवर्ती वर्धमान मुनीन्द्र हैं।।22।।

अभयदानों में बड़ा और सत्य जो न अनिष्ट कर।
ब्रह्मचर्य महान् तप श्रमणों में वीर वरिष्ठतर।।23।।

सर्वार्थ सिद्धों की स्थिति उत्तम सभा देवेन्द्र की।
निर्वाण सुख सबसे बड़ा महिमा यों वीर जिनेन्द्र की।।24।।

अणगार सर्वसह धरावत् सर्वसंग्रह से विरत।
तीर्ण भव सागर से अभंकर तथा कैवल्य रत।।25।।

क्रोध मान तथैव माया लोभ आन्तर रोग हैं।
वमन कर सबको बने निष्पाप निःसंयोग हैं।।26।।

विविध वादों को समझ एकान्त को परिहार कर।
था दिखाया शुद्ध संयममय सुदीर्घ विहार कर।।27।।

रात्रिभुक्ति अब्रह्म त्यागी दीप्त तम स्वाध्याय से।
इह तथा परलोक ज्ञाता विरत जग व्यवसाय से।।28।।

जानकर श्री वीर को और वीर भाषित धर्म को।
मुक्त श्रद्धा होकर क्षीण आयुष्कर्म को।।29।।

महावीराष्टक स्तोत्र

प्राकृत

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचित:,
समं भान्ति ध्रौव्य-व्ययजनि-लसन्तोऽन्तरहिता:।
जगत्-साक्षी मार्ग-प्रकटनपरो भानुरिव यो
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।1।।
अताम्रं यच्चक्षु:-कमल-युगलं स्पन्द-रहितं,
जनान् कोपापायं प्रकटयति वाऽभ्यन्तरमपि।
स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वाति विमला,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु में।।2।।
नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभा-जाल-जटिलम्,
लसत् पादाम्भोज-द्वयमिह यदीयं तनु-भृताम्
भवज्वाला-शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।3।।
यदर्चाभावेन प्रमुदितमाना दर्दुर इह,
क्षणादासीत् स्वर्गी गुण-गण-समृद्ध: सुखनिधि:।
लभन्ते सद्भक्ता: शिव-सुख-समाजं किमु तदा?
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।4।।
कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगत-तनुर्ज्ञान-निवहो,
विचित्रात्माऽप्येको नृपतिवर-सिद्धार्थ-तनय:।
अजन्माऽपि श्रीमान् विगत-भवरागोद्भुतगतिर
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।5।।
यदीया वाग्गंगा विविध-नय-कल्लोल-विमला,
बृहज्ज्ञानाम्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।
इदानीमप्येषा बुधजन-मरालै: परिचिता,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे ।।6।।
अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम सुभट:,
कुमारावस्थायामपि निज बलाद्येन विजित:।
स्फुरन्नित्यानन्द-प्रशमपद-राज्याय स जिन:,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।7।।
महामोहातंक-प्रशमन-पराऽऽकस्मिक्-भिषग्,
निरापेक्षो बन्धुर्विदित-महिमामंगलकर:।
शरण्य: साधूनां भवभयभृतामुत्तम-गुणो,
महावीर स्वामी नयन-पथ-गामी भवतु मे।।8।।
महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम्।
य: पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम्।।

हिन्दी पद्यानुवाद भगवन श्री राम प्रसाद जी महाराज द्वारा

हिन्दी

उत्पत्ति स्थिति विलय आदि, पर्याय सहित सब जड़ चेतन।
जिनकी ज्ञान-चेतना में, उद्भासित होते हैं क्षण-क्षण।
पथ प्रशस्त करते जन-जन का, बन कर जो दिनकर उद्दाम।
ज्ञान-दृष्टि गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।1।।
अचल अमल अविकार रक्तिमा,-वर्जित जिनके नयन-कमल।
अन्तर के अकषाय भाव को, प्रकटित करते हैं अविरल।
अन्त:शान्ति प्रतीक देह थी, जिनकी शान्त कान्त अभिराम।
ज्ञान-दृष्टि गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।2।।
अवनत इन्द्रों के मुकुटों की, मणियों का आभा-मण्डल।
चर्चित करके चरण-चिन्ह को, होता और अधिक उज्जवल।
जिनके चरणों की संस्मृति से, हों प्रशान्त भव-ताप तमाम।
ज्ञान-दृष्टि-गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।3।।
श्रद्धासिक्त हृदय से जिनकी, पर्युपासना को अपना।
क्षुद्र जन्तु नन्दन दर्दुर भी, दिव्य ऋद्धि का पात्र बना।
जिनकी चरण-शरण में मिलता, भक्तों को अविचल विश्राम।
ज्ञान-दृष्टि-गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।4।।
कंचन-वर्ण शरीर कहाते, हो करके भी देह-रहित।
एक तथापि अनन्त रूप, सिद्धार्थ पिता के पुत्र विदित।
फिर भी अजन्मा ऐसा जिनका, अद्भुत जीवन-चरित ललाम।
ज्ञान-दृष्टि-गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।5।।
नय कल्लोलों में इठलाती, गंगा जैसी परम पवित्र।
ज्ञान-वारि से स्नान करा जो, करती जग का शुद्ध चरित्र।
उस वाणी के लिए विबुध जन, करते अब भी जिन्हें प्रणाम।
ज्ञान-दृष्टि-गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।6।।
त्रिभुवन विजयी उग्र काम भट, जब कि सामने था आया।
उगते यौवन में भी उसका, अभिभव करके दिखलाया।
चिदानन्दमय राज्य जिन्होंने, पाया हो करके निष्काम।
ज्ञान-दृष्टि-गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।7।।
महामोह का रोग मिटाने- वाले जग में वैद्य प्रवर।
विश्व-बन्धुता के नाते से, बन्धु सभी के मंगल-कर।
जो संसार भीत सन्तों के, शरण-स्थल रहते अविराम।
ज्ञान-दृष्टि-गोचर हों ऐसे, महावीर जिन मंगल-धाम।।8।।
भागचन्द्र कवीन्द्र ने जो देव वाणी में रचा,
वीर अष्टक स्तोत्र मुझको परम सुखकारी जचा।
तुच्छ सा जन भारती में उसका ये अनुवाद है,
इसमें मेरा कुछ नहीं, उनका ही पुण्य 'प्रसाद' है।

Important Notes

तत्व विभाग

Important Notes

प्रश्नोत्तर (नवकार महामन्त्र)

प्र0 1. मन्त्र शब्द का अर्थ क्या है?

उ0 जिस पद या वाक्य के आश्रय से मनन किया जाए या मन को एकाग्र किया जाए और जिस में शब्द कम तथा भाव अधिक हों उसे मन्त्र कहते हैं। जिसका स्वामी कोई देवता हो, जिसके जाप से इष्ट फल की प्राप्ति हो उसे भी मन्त्र कहते हैं।

प्र0 2. जैन धर्म का मन्त्र कौन सा है?

उ0 जैन धर्म का मन्त्र महामन्त्र नवकार है।

प्र0 3. यह कौन-सी भाषा में लिखा गया है?

उ0 यह प्राकृत भाषा में लिखा गया है। यह भाषा आज से करीब तीन हजार साल पहले भ॰ महावीर के समय में बोली जाती थी। जैन धर्म के 32 शास्त्र इसी प्राकृत भाषा में लिखे गए हैं। भ॰ महावीर ने साधारण मनुष्यों की भाषा में अपने उपदेश दिये और हमारा नवकार महामन्त्र भी इसी भाषा में है।

प्र0 4. नवकार मन्त्र को क्या कहते हैं?

उ0 इसे महामन्त्र कहते हैं। क्योंकि संसार के सभी दूसरे मन्त्रों में भगवान से या देवता से किसी ना किसी प्रकार की मांग की जाती है लेकिन इस मन्त्र में कोई मांग नहीं है। जिस मन्त्र में कोई याचना की जाती है वह छोटा मन्त्र होता है और जिसमें समर्पण किया जाता है वह मन्त्र महान होता है। इस मन्त्र में पाँच पदों को समर्पण और नमस्कार किया गया है इसलिए यह महामन्त्र है तथा इसमें किसी व्यक्ति विशेष को नहीं अपितु आदर्शों को नमस्कार किया गया है। इसलिए भी यह महामन्त्र है। इस मन्त्र में 108 गुण हैं और 35 अक्षर हैं।

प्र0 5. इसे परमेष्ठी मन्त्र क्यों कहते हैं?

उ0 पाँच परमेष्ठी पदों को नमस्कार के कारण परमेष्ठी मन्त्र कहते हैं।

प्र0 6. नमो या णमो कौन सा उचित है?

प्राकृत में वाक्य के प्रारम्भ के 'न' को विकल्प से 'ण' हो जाता है। दिगम्बर सम्प्रदाय णमो, श्वेताम्बर नमो अधिक बोलते हैं। एक-दूसरे को गलत कहना सम्प्रदाय-हठ के सिवाय और कुछ नहीं। दोनों ही उचित हैं।

प्र0 7. माला-आनापूर्वी कब से और कैसे चली?

उ0 आगमों में मुनि या श्रावक के लिए मूर्तिपूजा-माला आनुपूर्वी का विधान नहीं है। वहाँ तो प्रतिक्रमण-सामायिक-स्वाध्याय-ध्यान तथा कायोत्सर्ग का ही वर्णन मिलता है। कालान्तर में बौद्ध-सनातन धर्म में प्रचलित वस्तुओं को भी अपनाया गया।

प्र0 8. मंगल किसे कहते हैं?

उ0 मं का अर्थ है पाप और गल का अर्थ है-नष्ट करने वाला अर्थात् जो पापों को नष्ट करने वाला हो वह मंगल कहलाता है।

प्र0 9. माला करते समय पाँच पदों को ही पढ़ना चाहिए या गाथा भी?

उ0 प्रथम पाँच पदों की ही माला करनी चाहिए, मूल तो 5 पद ही हैं। गाथा पढ़ना या न पढ़ना अपनी इच्छा पर निर्भर करता है।

प्र0 10. अरिहंत किसे कहते हैं व कितने प्रकार के होते हैं?

उ0 अरिहंत के तीन अर्थ हैं:-

1. शत्रुओं को नष्ट करने वाला
2. सब कुछ जानने वाला
3. पूजनीय

जिन आत्माओं ने अपने चारों घाती-कर्म नष्ट कर दिये हों, जिन्हें केवल ज्ञान और केवल दर्शन हो गया हो। इस धरती पर विचरने वाले शरीरधारी भगवान को अरिहंत कहते हैं। जैसे भगवान महावीर ने 42 वर्ष की उम्र में केवल ज्ञान पाया और 72 वर्ष की आयु तक जीवित रहे। इन 30 वर्षों तक वे अरिहंत कहलाये। अरिहंत दो प्रकार के होते हैं-1. सामान्य केवली 2. तीर्थंकर।

प्र0 11. तीर्थंकर कौन होते हैं?

उ0 जिन आत्माओं को जन्म से तीन ज्ञान होते हैं, जिनके पाँच कल्याणकों पर देवता महोत्सव मनाते हैं। पंचकल्याणक इस प्रकार हैं-

1. गर्भ में आने का समय 2. जन्म का समय 3. दीक्षा का समय 4. केवल ज्ञान का समय 5. निर्वाण-मोक्ष गमन का समय तथा जो अरिहंत साधु-साध्वी श्रावक-श्राविका इन चारों तीर्थों की और इनके नियमों की स्थापना करते हैं उन्हें तीर्थंकर कहते हैं।

प्र0 12. सामान्य केवली किसे कहते हैं?

उ0 जिन आत्माओं ने केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन तो पा लिया लेकिन जो तीर्थ की स्थापना नहीं करते उन्हें सामान्य केवली कहते हैं। इनमें से कुछ तो उपदेश देते हैं कुछ नहीं देते। जिस प्रकार गौतम स्वामी, अर्जुन माली, भरत महाराज ये सब केवल ज्ञानी तो हुये लेकिन इन्होंने तीर्थ नहीं चलाया। भ॰ महावीर के 14000 साधुओं में से 700 केवल ज्ञानी हुए और 36000 सतियों में से 1400 सतियां केवल ज्ञानी हुई। ये सब सामान्य केवली थे। तीर्थंकर केवल भ॰ महावीर स्वामी थे।

प्र0 13. सिद्ध किसे कहते हैं?

उ0 जिन आत्माओं ने आठों ही कर्मों को नष्ट कर दिया हो तथा इस शरीर का त्याग करके मोक्ष में जा विराजे हों उन शुद्ध आत्माओं को सिद्ध कहते हैं। उदाहरण के रूप में जैसे- भ॰ महावीर स्वामी ने 72 वर्ष की आयु में पावापुरी नगरी में निर्वाण प्राप्त किया और मोक्ष में जा विराजे और तब से लेकर अनन्तकाल तक वे सिद्ध कहलाते रहेंगे। सिद्ध होने के बाद कोई आत्मा दोबारा जन्म नहीं लेती क्योंकि पुनः जन्म का कारण कर्म होते हैं और सिद्धों ने सभी कर्म नष्ट कर दिये हैं। सिद्ध आत्माओं के शरीर न होने के कारण उन्हें भूख, प्यास, सुख दुःख नहीं होते। उनका न तो कोई नाम

होता है और न ही कोई शक्ल होती है। वे केवल आत्मा रूप होते हैं। जिस प्रकार एक कमरे में हजारों दीपकों का प्रकाश इकट्ठा रह जाता है इसी प्रकार मोक्ष के छोटे से स्थान में अनेक आत्माएँ रहती हैं।

प्र0 14. आचार्य किसे कहते हैं?

उ0 जो साधु-साध्वी श्रावक-श्राविका का रूप चतुर्विध संघ के आचार(चरित्र, संयम) के रक्षक हों, नायक हों, स्वयं भी संयम-मर्यादा में रहने वाले हों उन्हें आचार्य कहते हैं। ये साधु होते हुए भी अन्य मुनियों की अपेक्षा अधिक ज्ञानी होते हैं। इसके साथ-साथ प्रशासन की दृष्टि से भी इनकी अधिक महत्ता व उच्चता होती है। जैसे सभी साधु एम॰ पी॰ हैं, उपाध्याय शिक्षा-मंत्री हैं और प्रधान-मंत्री आचार्य हैं। जैसे प्रधान मंत्री का पद अधिक गरिमा-युक्त है ऐसे ही आचार्य।

प्र0 15. उपाध्याय किसे कहते हैं?

उ0 जो मुनिराज आगम ज्ञान के भंडार हैं। शास्त्रों के शब्द अर्थ और तदुभय अर्थात् दोनों के जानकार हैं और अपने सिद्धान्त और अन्य सिद्धान्तों के ज्ञाता हैं और ज्ञान की अक्षयनिधि हैं उन्हें उपाध्याय कहतें हैं। प्राचीन काल में उपाध्याय को वाचनाचार्य तथा वाचक भी कहते थे।

प्र0 16. नवकार मंत्र किस समय पढ़ना चाहिए?

उ0 नवकार मंत्र प्रात: काल और सांय काल अवश्य पढ़ना चाहिए। किसी भी आवश्यक कार्य को करने से पूर्व विशेषत: जाप करना चाहिए। रोग-शोक होने पर, सुतक पातक और हर स्थिति में इसका जाप करना चाहिए। नवकार मंत्र कभी अपवित्र नहीं होता बल्कि अपवित्र को पवित्र करता है।

प्र0 17. अरिहंताणं और किन रूपों में बोला जाता है?

उ0 कहीं-कहीं अरहंताणं व कहीं अरूहंताणं भी बोलते हैं। व्याकरण की दृष्टि से दोनों शुद्ध हैं पर भावों की व्यापकता व गम्भीरता ज्यादा अरिहंताणं में है। अरिहंताणं शब्द सबसे प्राचीन भी है।

प्रश्नोत्तर (तिक्खुतो सुत्र)

प्र0 1. नमस्कार किसे कहते हैं?

उ0 अपने को छोटा तथा बड़ों का बड़ा समझते हुए तत्सूचक काया का धरती की ओर झुकना नमस्कार है।

प्र0 2. प्रदक्षिणा का क्या अर्थ है?

उ0 जुड़े हुए हाथों का दक्षिणावर्त घुमाव। एक पाठ में 3 बार तथा 3 पाठों में स्वत: नौ बार हो जाता है। दक्षिणावर्त अनुकूलता का, सौभाग्य एवं मंगल का प्रतीक है-आरती के थाल को घुमाना भी प्रदक्षिणा है।

प्र0 3. सत्कार और सम्मान में क्या अन्तर हैं?

उ0 सत्कार में कायिक (झुकना) क्रिया तथा सम्मान में मनो-भाव हैं।

प्र0 4. चेइयं का अर्थ लिखिए।

उ0 चेइयं का अर्थ कुछ लोग चैत्य करते हैं- यह भी एक उचित अर्थ है। परन्तु स्थानकवासी गुरू को ही मन्दिर मानते हैं, वैसे व्याकरण में चेइयं का अर्थ है- ज्ञान, सो गुरुदेव ज्ञान रूप हैं।

प्र0 5. पर्युपासना का अर्थ लिखिए।

उ0 'उप' का अर्थ समीप, 'आसन' का अर्थ बैठना-पास बैठकर उपासना करना, गुरु की विनय करना, गुरु की भक्ति करना तथा उनसे धर्म लाभ लेना पर्युपासना है।

प्र0 6. गुरु वंदना की विधि क्या है?

उ0 गुरुओं के समीप आकर हाथ घुमाते हुए तीन बार तिक्खुतो के पाठ से भूमि पर पंचांग टिकाकर नमस्कार करना।

प्र0 7 पाँच अंग कौन-कौन से हैं?

उ0 दो हाथ, दो पैर तथा एक मस्तक या दो पंजे, दो घुटने, एक मस्तक।

प्र0 8. गुरु वंदना करते समय हाथों को किस दिशा में घुमाना चाहिए?

उ0 जैसे घड़ी की सुइयाँ घूमती हैं उसी प्रकार अपने मस्तक के दाईं ओर से लेकर बाईं तरफ चक्र के आकार में घुमाना चाहिए।

प्र0 9. गुरु वंदना के समय क्या विवेक रखना चाहिए?

उ0 यदि गुरु म० प्रवचन फरमा रहे हों तो भीड़ को चीरकर समीप जाने की बजाए दूर से ही वंदना करनी चाहिए। यदि वे ध्यानावस्था में, निद्रा में या स्वाध्याय में लगे हों या कहीं आ-जा रहे हों, तो दूर से ही वंदना करनी चाहिए। प्रवचन के बाद भी आराम से क्रम से वंदना करनी चाहिए। संघट्टा टालने का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

प्र0 10. पंचांग और साष्टांग नमस्कार में से कौन सा अच्छा है?

उ0 पंचांग वन्दना साष्टांग प्रणाम की अपेक्षा अधिक शालीन व सभ्य है अत: पंचांग नमस्कार की विधि ही ठीक है क्योंकि साष्टांग प्रणाम नारी जाति के लिए भी उचित नहीं लगता है। ज्यादा उठने बैठने के बजाय घुटने टिकाकर ही वन्दना करनी चाहिए।

प्र0 11. गुरुओं को तीन बार वंदना क्यों की जाती है?

उ0 गुरुओं के पास सम्यग् ज्ञान-दर्शन-चारित्र ये तीन रत्न होते हैं, हमें इनसे ये तीन रत्न प्राप्त होते हैं। इसी लक्ष्य से वंदना तीन बार की जाती है। जैसे किसी प्रतिज्ञा या बोली में दृढ़ता प्रकट करने के लिए तीन बार आवाज लगाई जाती है ऐसे ही श्रद्धा की तीव्रता अभिव्यक्त करने के लिए वंदना तीन बार की जाती है। तीन बार की गई वंदना हमारी श्रद्धा को पुष्ट भी करती है। हम तीन योगों से वन्दना करते हैं।

प्र0 12. प्रदक्षिणा दाईं ओर से क्यों की जाती है?

उ0 दाहिनी ओर का अर्थ सदा गुरुओं के अनुकूल चलना होता है। इससे गुरुओं की कृपा प्राप्त होती है। पूज्य व्यक्ति या वस्तु के दाहिनी ओर से ही गमन किया जाता है। साधारण भाषा में कृपा प्राप्त को दाहिना हाथ कहा जाता है। दक्षिण शब्द का अर्थ दाहिना हाथ, चतुर व्यक्ति या उदार मनुष्य भी होता है।

प्र0 13. साधु को वंदना के उत्तर में क्या कहना चाहिए?

उ0 साधु निरवद्य (दोष रहित) भाषा में उत्तर दे सकता है जैसे-जी साहब, हाँ जी, दया पालो, धर्म लाभ आदि। आशीर्वाद रूप में मुनि कुछ नहीं कहता।

प्र0 14. वंदना के बाद क्या पूछना चाहिए?

उ0 वंदना के बाद सुखसाता पूछनी चाहिए। समय हो तो आहार पानी की, योग्य सेवा की विनती करनी चाहिए।

प्र0 15. गुरु सामने न हों तो किसे वंदना करें?

उ0 गुरु सामने न हों तो पूर्व या उत्तर में मुंह करके बीस विहरमानों की साक्षी से गुरु वंदना करें ।

प्र0 16. बहुत मुनियों में पहले किसे वंदना करनी चाहिए?

उ0 सबसे पहले बड़ो को वंदना करनी चाहिए। फिर यथा सम्भव क्रमशः वंदना करनी चाहिए।

प्र0 17. वंदना करते समय क्या सोचना चाहिए?

उ0 वंदना लेना न लेना कोई अर्थ नहीं रखता। मुनि लेगा भी क्यों, मुनि तो प्रत्याभिवादन भी नहीं करता, श्रावक या शिष्य सोचे कि मैं अपनी कर्म-निर्जरा के लिए वंदना कर रहा हूँ। किसी को खुश करने के लिए नहीं। कर्म-निर्जरा ही वंदना का मुख्य लक्ष्य है। इसलिए गुरु म० का ध्यान मेरी वंदना की ओर न भी हो तो भी मेरे तो कर्म कट ही रहे हैं। ये सोचना गलत है कि इन्होंने मेरी वन्दना नहीं ली। साधु-महाराज वंदना ले, न लें, ये उनकी परिस्थिति पर निर्भर करता है।

प्र0 18. उपासना किसे कहते हैं?

उ0 गुरुओं के निकट बैठना उपासना कहलाती है। पास बैठते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि गुरुओं के आसन पर पैर आदि न लगाएँ। घुटनों से ऊपर गुरुओं के किसी अंग को नहीं छूना चाहिए। सर्दियों में एक आसन पर बैठे अनेक मुनियों को वंदना करते समय प्रायः असावधानी वश पैर रखे जाते हैं उस समय विवेक रखना चाहिए। रात्रि के अन्धकार में वन्दना करते समय अधिक विवेक की आवश्यकता है।

प्र0 19. गुरुओं के सामने कैसे बोलना चाहिए?

उ0 गुरुओं के सामने मुख पर हाथ रख कर या मुंहपत्ती लगाकर या रूमाल लगाकर बोलना चाहिए, क्योंकि गुरु के सामने खुले मुंह बोलने से एक तो गुरुओं के ऊपर थूक के छींटे पड़ने की सम्भावना बनी रहती है, दूसरे वायुकाय जीवों की हिंसा होती है।

प्रश्नोत्तर (सामयिक सुत्र)

प्र0 1. सामायिक किसे कहते हैं?

उ0 समता की प्राप्ति को सामायिक कहते हैं। ये भाव सामायिक है। द्रव्य सामायिक –सामायिक का वेश, स्थान विशेष तथा क्रिया विशेष हैं।

प्र0 2. जैन धर्म में सामायिक का क्या महत्व है?

उ0 इस्लाम में नमाज का, सिक्खों में जपूजी का और हिन्दुओं में संध्या व हवन का जो स्थान है वही स्थान जैन धर्म में सामायिक का है तथा निर्दोषता की दृष्टि से भी सामायिक सबसे पवित्र है।

प्र0 3. क्या जैनों के सभी सम्प्रदायों में सामायिक मान्य है?

उ0 हाँ, परन्तु स्थानकवासी समाज में सामायिक का ज्यादा महत्व है। वैसे दिगम्बर सम्प्रदाय में प्रत्येक धार्मिक क्रिया को सामायिक कहा गया है।

प्र0 4. क्या सामायिक बिजली या पंखे के नीचे की जा सकती है?

उ0 सामायिक में बिजली या दीपक की रोशनी का तथा पंखे आदि का बचाव होना चाहिए। सामायिक में श्रावक पाप–पूर्ण क्रियाओं का पच्चक्खान करता है। हम एक और वायुकाय के जीवों की रक्षा के लिए मुँह पर मुँह–पत्ती लगा रहे हैं और दूसरी और पंखा चला रहे हैं तथा बिजली में भी अग्निकाय की व मच्छर आदि की हिंसा स्पष्ट है। अतः यह परस्पर विरोध हास्यास्पद स्थिति बना देते हैं। सामायिक में बिजली एवं पंखे का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्र0 5. लम्बे सफर में क्या सामायिक छोड़ देनी चाहिए?

उ0 सामायिक नियमित रूप से करनी चाहिए। रेल के सफर में मुंह–पट्टी नहीं लगानी चाहिए, इससे अन्य यात्रियों को जैन मुनि के यान सेवन की भ्रान्ति हो सकती है। और रेल में की गई सामायिक पूर्णतः शुद्ध भी नहीं है, क्योंकि उसमें अग्नि और नारी का संघट्टा होता है और साथ ही अपने सामान की चिंता बनी रहती है। अतः रेल में बिना मुंह–पट्टी लगाए मौन भाव से संवर लेना चाहिए।

प्र0 6. करण किसे कहते है?इसके कितने भेद हैं?

उ0 शुभ या अशुभ काम करने की विधि को करण कहते हैं। इसके तीन भेद हैं 1. करना 2. करवाना 3. अनुमोदन करना।

प्र0 7. तीनों करणों को समझाओ?

उ0 जैसे एक राजा युद्ध में स्वयं नही जाता और न ही तलवार से किसी व्यक्ति को मारता है लेकिन उसकी आज्ञा से सब काम हो रहा है। यद्यपि उसकी आज्ञा से एक सैनिक युद्ध लड़ रहा है परन्तु वो राजा उस सैनिक से ज्यादा हिंसक है क्योंकि वह सैनिक तो 20–25 आदमियों को ही मारता है, किन्तु राजा की इच्छा तो (जो कि मरवाने वाला है) हजारों लाखों हत्याओं से भी सन्तुष्ट नहीं होती और उस युद्ध की सारी जनता प्रशंसा करती है और उन्हें सहायता देती है तो उस पाप की भागीदारी सारी जनता होगी । इसके अन्दर सैनिक हिंसा करने वाला है, राजा करवाने वाला है और सारी जनता अनुमोदन करने वाली है।

प्र0 8 सावद्य योग किसे कहते हैं?

उ0 अवद्य का अर्थ है–पाप या दोष, सावद्य का अर्थ है- पाप दोष सहित, निरअवद्य का अर्थ है–पाप दोष रहित।

प्र0 9 योग किसे कहते हैं और वह कितने हैं ?

उ0 योग के तीन भेद हैं 1. मन 2. वचन 3. काया । जैन धर्म में मन, वचन, काया की प्रवृति को योग कहा है (कहीं–2 योग का अर्थ समाधि, ध्यान, साधना आदि भी है) यही योग सामायिक में रोकने चाहिएं, क्योंकि इनसे कर्म–बन्ध होता है।

प्र0 10 पुराने पापों के लिए सामायिक में क्या किया जाता है?

उ0 सामायिक की प्रतिज्ञा में साधक कहता है कि मैं अपने पूर्वकृत पापों का प्रतिक्रमण करता हूँ और अपनी आत्मा से पापों का त्याग करता हूं। ये सभी क्रियाएं पूर्वकृत पापों का इलाज है।

प्र0 11 सामायिक में चंचल–मन को रोकने के लिए क्या करना चाहिए?

उ0 सर्वप्रथम काया की चंचलता को रोकना जरूरी है। शरीर को साधने से मन सधता है। एक स्थान पर निश्चित आसन से बैठकर स्वाध्याय व ध्यान जरूरी है। इधर–उधर नहीं घुमना चाहिए और न ही अंग संचालन करना चाहिए।

प्र0 12 क्या सामायिक में लौकिक सिद्धिदायक मन्त्र–जाप उचित है या नहीं?

उ0 यद्यपि बहुधा ऐसा किया जाता है किन्तु ऐसा उचित नहीं है, क्योंकि उन मन्त्रों के जाप में इच्छा–पूर्ति की भावना अधिक होती है, कर्म–निर्जरा की कम। सामायिक में वही क्रिया करनी चाहिए जिसमें मानसिक शान्ति मिले और कर्म–निर्जरा हो।

प्र0 13 सामायिक में मन स्थिर क्यों नहीं रहता?

उ0 मन की अस्थिरता का कारण है मानव की दैनिक चर्या। वह सारा दिन ज्यादातर काम भोग आदि परिग्रह की दौड़ में लगा रहता है और यही उसके चित्त में विकृति का कारण है। वह 23 घन्टे इसी उधेड़–बुन में लगा रहता है और वह जब सामायिक करता है तब भी उनके दिल में वृत्ति वैसी ही बनी रहती है। इस अभ्यास का टूटना सरल नहीं है। आम आदमी सोचता है कि सामायिक करने मात्र से चमत्कार हो जायेगा और जब वह नहीं होता तो सामायिक से उसकी आस्था टूट जाती है। अतः सामायिक का उद्‌देश्य भौतिक नहीं हो, बल्कि अध्यात्मिकता हो। इसके लिए दैनिक दौड़–धूप में भी परिवर्तन करना चाहिए।

प्रश्नोत्तर (सामयिक समाप्ति सूत्र)

प्र0 1 सामायिक पारने का पाठ कौन सा है?

उ0 सामायिक पारने का पाठ है- नौवें सामायिक व्रत के विषय में कोई अतिचार लगा हो........इत्यादि।

प्र0 2 सामायिक के शेष पाठ प्राकृत में हैं तो ये हिन्दी में क्यों?

उ0 सामायिक पारने के दो पाठ हैं- एक पाठ हिन्दी में और दूसरा प्राकृत में है। वस्तुतः दोनो पाठ श्रावक प्रतिक्रमण सूत्र से लिए गये हैं। वहां पर श्रावक के 12 व्रत दो स्थानों पर लिखें हैं, पहले प्रथम आवश्यक सूत्र में और दूसरे चौथे

आवश्यक में। पहले छोटे व्रतों के नाम से, दूसरे बड़े व्रतों के नाम से जाने जाते हैं। छोटे व्रतों की भाषा हिन्दी या स्थानीय भाषा है। बड़े पाठों की भाषा हिन्दी मिश्रित प्राकृत है। प्रस्तुत स्थान पर हिन्दी वाला पाठ छोटे व्रतों से तथा प्राकृत भाषा वाला पाठ बड़े व्रतों से उठाया गया है और थोड़ा बहुत परिवर्तन करके यहां प्रस्तुत किया गया है।

प्र0 3 हिन्दी वाला पाठ अधिक प्रचलित क्यों हुआ?

उ0 क्योंकि छोटा-बड़ा, बच्चा-बूढ़ा और प्रत्येक नर-नारी इस पाठ को आसानी से याद कर लेते हैं व इसके भाव भी स्पष्ट हैं और प्रतिक्रमण का अंग होने से यह अशास्त्रीय पद्धति भी नहीं है। इसलिए इसका प्रचलन अधिक है। वैसे प्राकृत का पाठ भी याद अवश्य करना चाहिए।

प्र0 4 सामायिक से पहले नौवां शब्द क्यों आता है?

उ0 क्योंकि श्रावक के बारह व्रत हैं और सामायिक का नम्बर नौवां है।

प्र0 5 अतिचार किसे कहते हैं?

उ0 सामायिक में लगने वाले दोषों को अतिचार कहते हैं।

प्र0 6 सामायिक के 32 दोष कौन से हैं?

उ0 10 मन के 10 वचन के और 12 काया के ये 32 दोष हैं। यद्यपि सभी 11 व्रतों के पाँच-2 ही अतिचार हैं लेकिन सामायिक की शुद्धि को सर्वाधिक महत्व देने के कारण जैनाचार्यों ने सामायिक के 32 दोषों का जिक्र किया ताकि इनसे बचा जा सके और सामायिक अधिक गम्भीर बन सके।

प्र0 7 मन के दोषों को टालने की क्या तैयारी करनी चाहिए?

उ0 मन के दस दोषों में सामायिक करने के पीछे क्या उद्देश्य है और सामायिक के समय मन की स्थिति कैसी है-ये दो पहलु शामिल हैं। सामायिक से पहले ये भावना कि यश मिलेगा, परलोक का सुख प्राप्त होगा-ये सब सामायिक की शुद्धि को बिगाड़ने वाली भावनाएं हैं। सामायिक के उद्देश्य का, स्वरूप का और काल का ज्ञान न होना और विवेक खो देना, अंहकार से चूर रहना, डरते-2 सामायिक करना, क्रोध से भरे रहना, संशय-ग्रस्त मन का होना, मन से धर्म और गुरुओं के प्रति विनय और बहुमान ही भूला देना एक प्रकार से सामायिक के स्वरूप को खण्डित करना है। ऐसी मानसिकता ज्यादा तीव्र और स्थायी हो जाए तो सामायिक द्रव्य सामायिक ही रहती है, भाव सामायिक नहीं। यद्यपि इन सब मनो भावनाओं को एकदम समाप्त करना सरल नहीं है। फिर भी इनकी ओर चौकन्नापन इनकी घातकता को कम कर देता है।

प्र0 8 वचन के 10 दोषों के प्रति क्या सावधानी बरतनी चाहिए?

उ0 सामायिक में यद्यपि मौन ही श्रेयस्कर है लेकिन किसी व्यक्ति को स्वाध्याय अच्छा लगता है और किसी को धर्म-चर्चा की रूचि होती है और वह धर्म-चर्चा गुरुओं से या ज्ञानियों से या अनुभवी जनों से या कभी-कभी अपने से कम ज्ञान वाले से प्रारम्भ हो जाती है। ऐसी स्थिति में वाणी कभी-कभी सामायिक को अच्छा बनाने की बजाए दूषित कर देती है। गाली देना, किसी पर दोष लगाना, स्वच्छन्दतापूर्वक बोलना, कलह कर बैठना और चार विकथाओं में सामायिक का सार ही नष्ट हो जाता है और वैसा वातावरण पैदा करने वाली वाणी, सामायिक के अनुकूल नहीं हैं।

शास्त्र या स्तोत्र पढ़ते समय या और किसी धर्म-ग्रंथ का वाचन करते समय उसका संक्षेप करना अशुद्ध बोलना असावधानी से बोलना और अस्पष्ट मुनमुन करते हुए बोलना भी सामायिक में दोष का कारण है।

प्र0 9 काया के दोषों के प्रति क्या सावधानी बरतनी चाहिए?

उ0 काया की चंचलता या प्रमाद प्रायः मन को अस्थिर रखती है। यदि पूरी तरह से 48 मिनट तक कायोत्सर्ग में रहना सम्भव न हो तो कुछ समय के लिए तो करना ही चाहिए। आसन की अशुद्ध मुद्रा या जल्दी-जल्दी आसन बदलना, दृष्टि को इधर-उधर घुमाना, दीवार का सहारा लेना, अंगों को फैलाना या सिकोड़ना, आलस्य करना इत्यादि सभी मुख्य क्रियाएं जिनसे सामायिक में शुद्धि नहीं रहती और भी अन्य पाप युक्त, हिंसा प्रधान क्रिया यदि शरीर से हो रही हो तो सामायिक खतरे में पड़ जाती है। अतः इन सारी क्रियाओं से बचना चाहिए।

प्र0 10 सामायिक का स्थान कौन सा अच्छा है?

उ0 सामायिक घर की बजाय स्थानक में आकर करनी चाहिए क्योंकि घर के अन्दर शोर-शराबा मचा रहता है। बच्चे उछलते-कूदते रहते हैं और परिवार में ममता बनी रहती है। इसलिए सभी कारणों को ध्यान में रखते हुए सामायिक एकान्त स्थल पर, स्थानक में ही करनी चाहिए।

प्र0 11 क्या साधुओं से सामायिक परवाई जाती है?

उ0 नहीं। सामायिक लेनी हो तो साधुओं से पच्चाखां लो, लेकिन पारनी हो तो साधु सामायिक नहीं परवायेगा अपितु आप को अपने आप ही नवकार मन्त्र पढ़कर या सामायिक पारने के पाठ से सामायिक पारनी चाहिए।

सामायिक का वेष

सामायिक के लिए वेष भी निर्धारित है, उसे भी धारण करना आवश्यक है। बहनें सादे वस्त्रों में सामायिक करें तथा भाई खुले वस्त्र यानि धोती दुपट्टा आदि (संतों जैसे वस्त्र) धारण करके मुखवस्त्रिका लगाकर सामायिक करें। सर्दी में लोई, कम्बल आदि ले सकते हैं। रूई भरा हुआ वस्त्र ग्रहण नहीं कर सकते।

प्रश्न होता है कि समता शान्ति का संबंध तो मन से है फिर वेष परिवर्तन क्यों? उत्तर में कहना है कि नंबर एक तो जिन महापुरूषों ने वेष की व्यवस्था बनाई है उनकी आज्ञा का पालन होता है जो कि हमारा कर्त्तव्य है।

नंबर दो: समानता का भाव पैदा होता है, सबके वस्त्र एक जैसे होने से अमीर, गरीब, छोटे-बड़े का भेद नजर नहीं आता। जैसे स्कूल में सभी बच्चों की वर्दी एक जैसी होती है। पढ़ना तो उन्हें दिमाग से है फिर वर्दी क्यों? खानी तो रोटी व सब्जी हैं फिर थाली व कटोरी क्यों?

नंबर तीन: वैसे ही वेष में होने से वैसा ही भाव, उत्साह, जोश पैदा होता है। जैसे वेष से सुसज्जित सैनिक में देश रक्षा तथा कर्तव्य पालन की भावना प्रबल रहती है।

सामायिक के उपकरण

पूर्ण शुद्ध वेष, मुखवस्त्रिका, आसन, पूंजनी, माला, आनुपूर्वी, धार्मिक पुस्तक या शास्त्र आदि।

सामायिक का समय 'मुहूर्त्त' क्यों

सामायिक वैसे तो हर समय की है। साधु की सामायिक जीवन भर की होती है। लेकिन गृहस्थ सामायिक के वेष में हर समय नहीं रह सकता। अत: उसके लिए समय निर्धारित किया गया है। लेकिन उस सामायिक का असर लंबे समय तक, जीवन भर रहना चाहिए।

एक सामायिक का समय है- एक मुहूर्त्त यानि 48 मिनट या दो घड़ी। सामायिक में लगा एक मुहूर्त ही सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त है। ये समय इतना अधिक भी नहीं कि कोई दे न सके, इतना कम भी नहीं कि हम कुछ कर न सकें। दिन रात के तीस मुहूर्तों में हमारा सारा समय संसार, व्यापार तथा काम भोगों में ही न बीते, कम से कम एक मुहूर्त तो हम आत्मचिंतन, आत्मशुद्धि, इष्टस्मरण, भगवद् स्तुति व भक्ति के लिए अवश्य निकालें। जैसे पानी के लिए कुएं में बाल्टी डालने वाली बहन थोड़ी सी रस्सी अपने हाथ में रखती है ताकि बाल्टी भी वापिस मिल सके व पानी भी, इसी तरह कुछ समय अपने हाथ में रखें। अनादि मिथ्यादृष्टि जीव यानि जो अनादि काल (जिसकी शुरूआत न हो) से नास्तिक हैं- देव, गुरु, धर्म, लोक, परलोक, आत्मा, परमात्मा आदि को नहीं मानता, ऐसे को यदि समकित मिल जाए अर्थात यदि वो आस्तिक बन जाए, देव आदि को मानने लगे और साधना करे तो, एक मुहूर्त के अंदर-अंदर संपूर्ण कर्मो को नष्ट करके केवल ज्ञान प्राप्त करके भगवान बन सकता है।

(जैसे किसी कमरे में सौ साल से अंधेरा हो तो उसे प्रकाशित करने के लिए सौ साल ही नहीं चाहिए, माचिस जलाते ही सैकिंडों में रोशनी हो जाती है।) इस महत्व को दिखाने के लिए भी सामायिक का समय एक मुहूर्त रखा गया है कि हम इस एक मुहूर्त में ऐसी साधना करें कि यदि भगवान न बन सकें तो कम से कम भगवान के निकट तो रहें, नजदीक तो पहुँचें।

ध्यान का उत्कृष्ट (अधिकतम) काल भी एक मुहूर्त का होता है। जैसे धागा डली हुई सूई गुम नहीं होती, यदि कभी गुम भी हो जाए तो जल्दी मिल जाती है वैसे ही सामायिक करने वाला संसार में भटकता नहीं।

यदि आत्मा का सुधार व उद्धार करना चाहते हो तथा तनाव मुक्त सुंदर जीवन जीना चाहते हो तो प्रतिदिन धर्मस्थान में या घर के एंकात स्थान में शुद्ध भाव से अठारह पाप व बत्तीस दोष टालकर सविधि सामायिक करनी चाहिए। सामायिक में बिजली व पंखे का प्रयोग नहीं करना चाहिए। सामायिक में संसार, परिवार व व्यापार आदि के किसी कार्य में दखल नहीं देना चाहिए।

प्रश्नोत्तर (सम्यक्तव सूत्र)

प्र0 1 इस पाठ का क्या नाम है ?

उ0 इस पाठ का नाम सम्यक्त्व सूत्र है । इसमें देव, गुरू, धर्म का मूल रूप तथा गुरूओं के 36 गुण बताए गए हैं ।

प्र0 2 सम्यक्त्व किसे कहते है ?

उ0 सच्चाई को सम्यक्त्व कहा गया है । जिस प्रकार संसार की वस्तुओं के बारे में सच्चाई जानने की इच्छा सबके मन में रहती है उसी तरह धर्म के रहस्यों की सच्चाई जानने की इच्छा होनी चाहिए । बाहरी पदार्थों का ज्ञान न हो या मिथ्या ज्ञान हो जाए तो भी आत्मा को इतनी हानि नहीं होती परन्तु धर्म के बारे में ज्ञान न होना या मिथ्या ज्ञान होना बहुत ही खतरनाक बातें हैं, क्योंकि धर्म के बारे में जो एक विश्वास जम जाता है फिर वह आसानी से बदला नहीं जा सकता है और न ही बदलना चाहिए। इसलिए किसी भी धार्मिक तत्व के बारे में विश्वास करने से पहले सम्यक् ज्ञान आवश्यक है, तभी सम्यक् दर्शन टिकेगा, नहीं तो अंध-विश्वास बढ़ने का डर रहता है। इसलिए धर्म की मूल भूत तीन मान्यताओं के बारे में ज्ञान - पूर्वक श्रद्धा होनी जरूरी है, यही सम्यकत्व है।

प्र0 3 गुरू कौन होते हैं ?

उ0 पाँच महाव्रतों की साधना करने वाले गुरू हैं । केवल जैन धर्म का प्रचार करने वाले या जैन-साधु का वेश धारण करने वाले साधु को गुरू नहीं मानना चाहिए । जैन-धर्म पुरोहित को या तंत्र-मंत्र देने वाले साधु को साधु नहीं मानता है। जिसमें साधना होती है वही गुरू होता है। कई धर्मों में ब्राह्मण परिवार में जो भी पैदा हो जाए, उसे गुरू माना जाता है लेकिन जैन धर्म ने इसे स्वीकार नहीं किया । जिसके पास में औरतें हो, बाल-बच्चें हों, जमीन जायदाद हो तथा भांग-सुल्फा आदि का सेवन करता हो, और धन सम्पति जमीन जायदाद रखता हो उसे गुरू मानना अंध-विश्वास है।

प्र0 4 अरिहन्तो के पाठ में गुरूओं के गुण विशेष रूप से क्यों गिनाए गए हैं ?

उ0 भगवान दिखाई नहीं देते और न ही इस समय यहाँ मौजूद हैं । धर्म भी न दिखाई देने वाली चीज है । केवल गुरू ही हमें दिखाई देते हैं अतः गुरू का हमारे लिए विशेष महत्व है। इसलिए गुरू के गुणों को पहले समझ लेना जरूरी है और फिर इन गुणों से युक्त जो भी साधु हो, उस पर श्रद्धा करनी चाहिए । फिर वे भगवान और धर्म के बारे में जो भी बतायेंगे उस पर आसानी से श्रद्धा हो जायेगी ।

प्र0 5 छत्तीस गुणों की क्या विशेषता है ?

उ0 गुरूओं के छत्तीस गुण, आचार्यों के भी गुण हैं । इन गुणों में कोई भी ऐसा वर्णन नहीं है जिसमें यह बताया गया हो कि जो अपने शिष्य को उपदेश दे या जो धर्म प्रचार करे वही गुरू होता है। यहाँ तो साधना करने वालों को ही गुरू बताया गया है, उपदेशक या प्रचारक को नहीं ।

प्र0 6 गुरू का स्वर्गवास होने पर क्या नया गुरू बनाना चाहिए ?

उ0 नहीं । जिस प्रकार माता - पिता का स्वर्गवास होने पर नये नहीं बनाये जा सकते वैसे ही पुराने गुरू ही माने जाते हैं । यदि कोई साधु संयम छोड़ दे या हमारी श्रद्धा उस पर बिल्कुल न रहे, उस समय नई गुरू-धारणा ली जा सकती है ।

प्र0 7 गुरू धारणा में क्या विवेक रखना चाहिए ?

उ0 श्रावक को यह सोचना चाहिए, जो भी संयम का पालन करे वही मेरे गुरू हैं। यदि अपने जीवन में आलम्बन के रूप में किसी खास साधु से हमारा लगाव अधिक हो जाए तो वह गल्त नहीं है, लेकिन उनके राग-द्वेष में आकर किसी और साधु-साध्वी की बुराई न करूँगा । सबकी समान-भाव से सेवा करूँगा और अपने धर्म की वृद्धि करूँगा, ऐसा भाव रखना चाहिए । गुरू धारणा में साम्प्रदायिक कट्टरता नहीं हो, ताकि विषमता से बचे रहें ।

प्रश्नोत्तर (इरियावहियं - आलोचना सूत्र)

प्र0 1 इच्छा कारेणं के पाठ का क्या नाम है ?

उ0 इसका नाम ईर्यापथि की आलोचना सूत्र है ।

प्र0 2 इस पाठ का क्या तात्पर्य है ?

उ0 सामायिक, स्वाध्याय, तप, भिक्षाचारी इत्यादि कोई भी कार्य करना हो तो गुरू से पूछकर करना-इच्छाकार समाचारी है ।

प्र0 3 ईर्या पथ किसे कहते हैं ?

उ0 चलना और चलने से होने वाली छोटी-बड़ी क्रिया 'इर्या पथ' कहलाती है ।

प्र0 4 क्या ईर्या से चलना अर्थ ही लिया जाए ?

उ0 नहीं, बैठना-उठना, खाना-पीना, सोना, हंसना-रोना, बोलना आदि जीवन की प्रत्येक क्रिया को ईर्या कह सकते हैं और इन क्रियाओं से उत्पन्न कर्म बन्ध को ईर्या पथ कहते हैं ।

प्र0 5 क्या इन क्रियाओं से कर्म-बंध होता है ?

उ0 हाँ, जब तक जीव के पास कषाय शेष हैं तब तक इन क्रियाओं से कर्म-बन्ध होगा और तब तक सभी क्रियाएं साम्परायिक क्रियाएं कहलाएगीं । साम्परायिक क्रिया से कर्मो में स्थिति और रस डलते हैं ।

प्र0 6 यदि जीव कषाय रहित हो जाए तो क्या कर्म-बंध नहीं होता ?

उ0 उस स्थिति में कर्म आते हैं और चले जाते हैं । न वे ठहरते हैं और न वह फल देते हैं, उस समय की प्रत्येक क्रिया को ईर्या पथिकी क्रिया कहते हैं । जैसे तीर्थंकर भगवान आहार-विहार करते हैं, लेकिन उन्हें कर्म-बन्ध नहीं होता है ।

प्र0 7 क्या ईर्यापथ में हिंसा जन्य दोषों को ही सम्मिलित किया गया है ?

उ0 इसमें हिंसा-झूठ-चोरी-भोग-संग्रह इन सबसे होने वाले दोषों को सम्मिलित किया गया है लेकिन जैन-धर्म में सबसे अधिक अहिंसा को प्रमुखता दी गई है चूँकि अहिंसा में सारे गुण सम्मिलित हो जाते हैं। और हिंसा में सारे पाप सम्मिलित कर लिये जाते हैं । इसलिए इस पाठ में हिंसा के भिन्न-भिन्न प्रकारों को गिनाया गया है और जीव हिंसा से उत्पन्न अतिचारों के प्रतिक्रमण करने की भावना अभिव्यक्त की गई है ।

प्र0 8 प्रतिक्रमण किसे कहते हैं ?

उ0 ग्रहीत (ग्रहण किए हुए) नियमों में जो दोष लग गये हैं उनसे पीछे हटने को प्रतिक्रमण कहते हैं ।

प्र0 9 आने जाने में किन जीवों की अधिक हिंसा होती है ?

उ0 बीज, हरियाली, ओंस, कीड़ी आदि के बिल, काई, पानी, सचित मिट्टी, मकड़ी आदि के जाले इत्यादि अनेक प्रकार के जीव बहुत शीघ्र मर जाते हैं । मनुष्यों की असावधानी के कारण से इनकी विशेष हिंसा होती है । ये प्राणी ऐसे हैं जिनका मनुष्य की जीवन यात्रा में बहुत अधिक काम पड़ता है । चाहे इनकी हत्या जानबूझ कर भी न की जाए तो भी किसी न किसी प्रकार से इनकी हिंसा हो जाती है । यहां तक की साधु-मुनि जो कि अधिक सावधानी एवं विवेक

रखता है उनसे भी इस प्रकार की हिंसा हो जाती है । विशेष रूप से जब वे शौच आदि के लिए खेत वगैरह में जा रहे हों या विहार कर रहे हों, मकान की प्रतिलेखना कर रहे हों, उस समय उनके मरने की सम्भावना रहती है ।

प्र0 10 जीवों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर रखने में तथा अन्य क्रियाओं में हिंसा होती है या उन्हें पीड़ा होती है ?

उ0 साधक को न केवल जीवों की हत्या की ग्लानि होती है अपितु किसी भी प्रकार से यदि उन्हें उनकी स्वतन्त्र जीवन पद्धति में बाधा पहुंचती है तो उसका खेद भी साधक को होता है। यदि कीड़ी को बचाने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर रखा जाए तो क्या पता कि कीड़ी को क्या महसूस हो रहा है । पेड़ को पानी देने से भी दु:ख हो सकता है । इसलिए ज्ञात, अज्ञात रूप से किसी भी प्रकार जीव हिंसा हो तो श्रावक और साधु उसका दु:ख मानते हैं । अत: इन सब स्थितियों का यहाँ नाम उल्लेखन किया गया है जैसे-अभिहनन (चोट आई हो) वर्तन (लपेट दिये हों) संश्लिष्ठा (पिचकाएं हों) संघाटन (टकराए हों) संघर्षण (संघट्टा हुआ हो) परितापन (झुलस गए हों) किलामना (थकाए हों) अपद्रवण (हमला हो गया हो) संक्रमण (स्थानान्तर पर पहुँचाया हो) व्यपरोपन (प्राण हानि की हो) किसी भी क्रिया से दु:ख हुआ हो, वह दु:ख है। साधु और श्रावक उसके लिए अपने आप को दोषी मानता है और अपने पाप को मिथ्या करने की भावना रखता है ।

प्र0 11 पाप मिथ्या कैसे होते हैं ?

उ0 पाप को पाप समझने से ही पाप मिथ्या हो जाता है अर्थात् पाप पाप नहीं रहता और जीव पाप का दुष्परिणाम भोगने से बच जाता है। जिस प्रकार परीक्षा पत्र में गल्त उत्तर लिखकर यदि उस पर क्रास (X) का निशान लगा दिया जाए तो वह गलत प्रश्न नहीं रहता और न ही उसके उत्तर के कारण वह फेल होता है। इसी प्रकार पश्चाताप और प्रायश्चित, आलोचना और प्रतिक्रमण से दुष्कृत् अर्थात् पाप, मिथ्या हो जाता है । इसको मिच्छामि दुक्कड़ं कहते हैं ।

प्र0 12 क्या मिच्छामि दुक्कड़ं कहने मात्र से पाप खंडित हो जायेगा ?

उ0 केवल वाणी से मिच्छामि दुक्कड़ं कहने मात्र से पाप खंड़ित नहीं हो जाते । मन का सहयोग भी इसमें आवश्यक है । शुभ-शुद्ध भावना से मिच्छामि दुक्कड़ं करनी चाहिए ।

प्रश्नोत्तर (उत्तरीकरण सूत्र)

प्र0 1 तस्स उत्तरी के पाठ का असली नाम क्या है ?

उ0 इस पाठ के दो भाग हैं- पहले का नाम 'कायोत्सर्ग-प्रतिज्ञा सूत्र' व दूसरे का नाम 'आगार सूत्र' है ।

प्र0 2 दो भाग करने का क्या तात्पर्य है ?

उ0 पहले भाग में कायोत्सर्ग (ध्यान) का उद्देश्य तथा दूसरे में कार्योत्सर्ग का स्वरूप दिखलाया गया है ।

प्र0 3 कायोत्सर्ग किसे कहते हैं ?

उ0 शरीर की समस्त चेष्टाओं को रोककर खड़े होना, बैठना, लेटना कार्योत्सर्ग होता है ।

प्र0 4 ध्यान किसे कहते हैं ?

उ0 मन को एकाग्र करके चिन्तन करना ध्यान कहलाता है ।

प्र0 5 ध्यान और कायोत्सर्ग में क्या अन्तर है ?

उ0 ध्यान और कायोत्सर्ग में यह अंतर है कि ध्यान तो चलते-फिरते भी रहता है । वह तो मन की स्थिरता और एकाग्रता से जुड़ा हुआ है, जबकि कायोत्सर्ग में शरीर निरोध पर अधिक बल है । यद्यपि कायोत्सर्ग में भी खड़े होने, मौन रखने, ध्यान रखने का स्पष्टत: उल्लेख है । किन्तु प्रधानता फिर भी काय चेष्टा निरोध की है । कायोत्सर्ग में प्राय: 2-3 क्रियाएं ही की जाती हैं। या तो साधु के पांच महाव्रतों तथा श्रावक के बारह व्रतों के अतिचारों का चिन्तन किया जाता है या लोगस्स की संख्या निर्धारित करके (4, 8, 12, 20 या 24 बार) जाप किया जाता है या नवकार मन्त्र पढ़ा जाता है जबकि ध्यान में आत्म-चिंतन प्रमुख होता है ।

प्र0 6 कायोत्सर्ग में शरीर-चेष्टाओं के निरोध की प्रतिज्ञा होने पर भी छूट क्यों रखी गई ?

उ0 शरीर की चेष्टाएं तीन प्रकार की होती हैं- 1. अपने आप होने वाली AUTOMATIC, जैसे खून का शरीर में ऊपर-नीचे आना, सांस का चलना, बलगम आना, खांसी, छींक इत्यादि इन क्रियाओं को न तो रोका जा सकता है और न ही रोका जाना चाहिए। इससे शारीरिक हानि होने की सम्भावना रहती है । 2. दूसरी क्रियाएं मानव की इच्छा और प्रयत्न से उत्पन्न होती हैं, जैसे हम अपनी इच्छा से ही उठते-बैठते, हिलते, बोलते, खाते-पीते हाथ हिलाते हैं । कायोत्सर्ग में इन सब क्रियाओं को रोकना बहुत जरूरी है । 3. तीसरे ढंग की वे क्रियाऐं हैं जो हमारे अचेतन मन से संचालित होती हैं, उन्हें सावधानी से रोका जा सकता है। इस प्रकार कुछ क्रियाएं ऐसी हैं जो हमारे वश में है लेकिन इनको रोकने के लिए साधारण मनुष्य ध्यान नहीं देते । कायोत्सर्ग के समय इन चेष्टाओं को रोकने का विवेक रखा जाता है ।

प्र0 7 कायोत्सर्ग में किन-किन क्रियाओं का आगार रखा गया है ?

उ0 सांस लेना-छोड़ना, खांसी, छींक, जम्हाई, डकार, गैस निकालना, चक्कर बनना, मितली आना, सूक्ष्म अंगो की हलचल, बलगम का गिरना, बन्द आंखों में पुतली का हिलना ये सब कुछ स्वाभाविक क्रियाएं हैं । ये गतिविधियां चलती रहती हैं तो भी कायोत्सर्ग भंग नहीं होता ।

प्र0 8 कायोत्सर्ग कितनी देर तक किया जा सकता है ?

उ0 कुछ व्यक्ति समय के आधार पर एक घंटा, दो घंटे आदि का कायोत्सर्ग करते हैं लेकिन इस पाठ में यह सूचित किया गया है कि कायोत्सर्ग करने के बाद समय का सही–सही ज्ञान नहीं हो पाता क्योंकि उस समय आंखें भी बन्द होती हैं। किसी से पूछना भी बन्द होता है इसलिए जब तक नवकार मंत्र न पढ़ लिया जाए तब तक कार्योत्सर्ग चलता रहेगा।

प्र0 9 कायोत्सर्ग में आंखे बन्द करनी चाहिए या नहीं ?

उ0 दृष्टि को हो सके तो नाक के अग्र भाग पर रखना चाहिए । आंखे मूंदने से निद्रा का भय रहता है । बिल्कुल खोलने से चित्त का विकेन्द्रीकरण (बिखरना) अधिक होता है ।

प्रश्नोत्तर (चतुर्विंशतिस्तव सूत्र)

प्र0 1. लोगस्स के कितने नाम हैं और क्यों है?

उ0 प्रथम शब्द के कारण लोगस्स, 24 तीर्थंकरों की स्तुति के कारण चतुर्विंशति स्तव है।

प्र0 2. मूल पाठ में नाम के साथ 'श्री या नाथ' शब्द क्यों नहीं है?

उ0 मूल आगमों में ऐसा कुछ नहीं, इकहरे नाम ही हैं। ये तो मात्र आदर या बोलने में सुविधा रहे अत: श्री या नाथ लगाया जाता है

प्र0 3. तीर्थंकरों की ऐतिहासिकता सिद्ध की जा सकती है?

उ0 हाँ। भ० ऋषभ का उल्लेख भागवत में है तथा आजकल के इतिहासकार अरिष्टनेमि, पार्श्वनाथ और महावीर जी को तो मान ही रहे हैं तथा अन्य तीर्थंकरों को भी स्वीकार करते हैं।

प्र0 4. क्या सिद्ध स्तुति हमें कुछ देती है?

उ0 हाँ, प्रत्यक्ष रूप या वरदान रूप में नहीं, परन्तु भावात्मक रूप में सब कुछ मिलता है। हिमालय खड़ा है, कुछ करता नहीं परन्तु उसके निमित से होने वाली समृद्धियों को हिमालय की दी हुई कहते हैं।

प्र0 5. लोगस्स का चमत्कारिक रूप बताइए।

उ0 लोगस्स का नित्य-प्रति पाठ अनेकों ऋद्धि-सिद्धि देने वाला है। मृत्यु-हानि-लाभ आदि का स्वप्न या जागृति में आभास मिलता है। अकाल मृत्यु तथा दरिद्रता नहीं आती।

प्र0 6. नवकार मन्त्र और लोगस्स में से किसका अधिक महत्व है?

उ0 समर्पण भावना की दृष्टि से तथा जैन धर्म की मूल-भूत मान्यताओं की प्राप्ति की दृष्टि से नवकार मंत्र का अधिक महत्व है लेकिन चमत्कार की दृष्टि से लोगस्स का। जब किसी व्यक्ति पर विशेष संकट या परेशानी आती है तो उसके निराकरण के लिए लोगस्स का पाठ बताया जाता है। क्योंकि नवकार मन्त्र में अरिहंत आदि को केवल नमस्कार मात्र है, किसी तीर्थंकर का या उनके आदर्शों का बोध नहीं है। जबकि लोगस्स के पाठ में नमस्कार के अतिरिक्त कीर्तन, वंदना और महिमा भी है। उनके नाम के साथ-साथ उनका आदर्श जीवन भी याद आता है। ये चौबीस तीर्थंकर हमारे इतिहास के रचियता हुए हैं। इस अवसर्पिणी काल में भरत क्षेत्र में जो ऐसे परोपकारी महापुरूष हुए हैं उनकी स्तुति करने से उनके उपासक, देवी-देवता हम पर प्रसन्न होते हैं और खुश हो करके संकट निवारण करते हैं।

प्र0 7. क्या सिद्ध भगवान प्रसन्न होते हैं या प्रसन्न होकर हमें आरोग्य-बोधि या सिद्धि-बोधि देते हैं?

उ0 अरिहंतों और सिद्धों की प्रसन्नता साधारण मनुष्य की भांति नहीं होती। मनुष्यों की प्रसन्नता कभी अप्रसन्नता में भी बदल जाती है लेकिन वे तो सदा ही प्रसन्न रहते हैं। और वे सदा आरोग्य, बोधि व सिद्धि प्रदान करते हैं। और यह सिद्धि भौतिक स्तर की नहीं होती, आध्यात्मिक स्तर पर ही होती है। सर्वप्रथम साधारण मनुष्य अपनी भक्ति के द्वारा स्वयं को पात्र बनाता है फिर उनके दिए हुए ज्ञान-दर्शन चारित्र को माध्यम बनाता है यही उनकी कृपा है, यही उनका सिद्धि-दान है और उनसे याचना का फल है। कोई भी तीर्थंकर या सिद्ध इस प्रकार से धन-सम्पत्ति प्रदान नहीं करता

जिस प्रकार एक सेठ एक याचक को वस्त्र भोजन या पैसा देता है। भगवान तो आध्यात्मिक लक्ष्मी ही प्रदान करते हैं। इसी को लोगस्स की भाषा में आरोग्य, बोधि या सिद्धि–दान कहा है।

प्र0 8 24 तीर्थंकरों में से इतिहास में कितने तीर्थंकरों के नाम आते है?

उ0 सारे विश्व भर में भ० महावीर को जैन धर्म का संस्थापक माना जाता है और उन्हें ऐतिहासिक भी माना जाता है लेकिन कुछ अधिक गहन अन्वेषी इतिहासकारों ने बौद्ध साहित्य के आधार पर ये प्रमाणित किया है कि भगवान पार्श्वनाथ ने जैन धर्म को चलाया था। ये दोनों मन्तव्य जैन दर्शन की दृष्टि से गलत हैं लेकिन उन दो महापुरूषों को इतिहास ने स्वीकारा अवश्य है तथा जिन इतिहासकारों ने कृष्ण को ऐतिहासिक माना है, उन्होने उनके चचेरे भाई भ० अरिष्टनेमि को भी ऐतिहासिक माना है। इस प्रकार से तीन तीर्थंकर इतिहास द्वारा मान्य हैं बाकि 21 तीर्थंकर प्राक् ऐतिहासिक काल में हुए। भगवान ऋषभदेव का वर्णन भागवद् पुराण में तथा ऋग्वेद में आता है।

प्र0 9 क्या हम कुछ तीर्थंकरों के नाम अशुद्ध बोलते हैं?

उ0 दो तीर्थंकरों के नाम प्राय: अशुद्ध बोले जाते हैं–छठे और आठवें तीर्थंकर के असली नाम पद्मप्रभ और चन्द्रप्रभ हैं। जिस का अर्थ होता है कमल के समान शोभा वाले, चन्द्रमा के समान कान्ति वाले। लेकिन सामान्य श्रावक इन्हें चन्द्रप्रभु एवं पद्मप्रभु बोलते हैं।

प्रश्नोत्तर (प्रणिपात सूत्र - नमोत्थुणंः)

प्र0 1 नमोत्थुणं के पाठ का दूसरा नाम क्या है?

उ0 इसका दूसरा नाम शक्रस्तव है। आगम में जहाँ इन्द्र द्वारा तीर्थंकरों की वंदना एवं स्तुति का प्रसंग आता है, वहां इन्द्र इसी पाठ से वन्दना करते हैं। 'शक्र' इन्द्र को कहते हैं। अतः इस पाठ को शक्रस्तव कहते हैं।

प्र0 2 इस पाठ को किस समय पढ़ना चाहिए?

उ0 जैसे-मिश्री को कभी भी खाइए वह मिठास ही देगी इसको भी किसी भी समय पढ़ लेना चाहिए परन्तु सायं काल या सोते समय पढ़ने से काफी लाभदायक सिद्ध होता है।

प्र0 3 जब अरिहंत-तीर्थंकर गर्भ में आते हैं, उस समय उन्हें अरिहंत या सिद्ध मानकर वंदना क्यों की जाती है?

उ0 भविष्य काल को समीप जानकर, वर्तमान वत् समझकर। वन्दना करने वालों के भाव शुद्ध होते हैं, जैसे भरत महाराज ने मरीचि को बहुत भवों पहले ही भ॰ महावीर स्वामी समझकर वंदना की थी। ऐसे ही इन्द्र गर्भ में आते ही भव्य आत्माओं व तीर्थंकरों को नमस्कार करते हैं।

प्र0 4 तीर्थ और तीर्थंकर किसे कहते हैं?

उ0 स्वयं तैरकर औरों को तिराने वाले तीर्थंकर कहलाते हैं। भाव-दृष्टि से साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका चार तीर्थ कहलाते हैं। जो इन्हें धर्म के मार्ग पर स्थापित कर सकें, इनके नियमों का निर्धारण करें, वे ही तीर्थंकर कहलाते हैं।

प्र0 5 वे लोक का क्या हित करते हैं?

उ0 वे लोक को 18 पापों से हटाकर, आश्रव बन्ध से छुटाकर धर्म के और मोक्ष के मार्ग पर चलाते हैं। यह आत्मा का सबसे बड़ा हित है। ऐसा हित करने वाले हितकारी तीर्थंकर होते हैं।

प्र0 6 वे लोक के नाथ किस प्रकार हैं?

उ0 जो रक्षा करने में समर्थ हो उसे नाथ कहते हैं। तीर्थंकर महाराज छः जीवनिकाय की स्वयं रक्षा करते हैं तथा औरों को रक्षा करने का उपदेश देते हैं। उन्हीं के कारण अनाथ लोग भी शान्ति अनुभव करते हैं। अतः वे लोक के नाथ हैं।

प्र0 7 लोक के दीपक और उद्योतकर का क्या अर्थ है?

उ0 संसार में ज्ञान-दर्शन-चरित्र का प्रकाश फैलाने वाले, हर बुझे हुए भव्य-दीप को जलाने वाले होने से लोक दीपक और उद्योतकर कहलाते हैं।

प्र0 8 वे अभय दाता कैसे हैं?

उ0 वे सभी जीवों में अहिंसा-धर्म का मूल-मन्त्र फूंकते है तथा कोई भी प्राणी उनसे भयभीत नहीं होता। उनके समवशरण में शेर और गाय अपने-अपने वैर का परित्याग करके एक घाट पर पानी पीते हैं। इसलिए वे अभयदाता हैं।

प्र0 9 वे चक्षुदाता कैसे हैं?

उ0 सत्यज्ञान से रहित व्यक्ति अन्धा होता है। जिसे शास्त्र के माध्यम से सत्य का बोध हुआ है वह आँखों वाला होता है। तीर्थंकर महाराज महान शास्त्रों के प्रवर्तक होते हैं। वे ज्ञान दृष्टि से द्वादशांग का प्रसार करते हैं। द्वादशांगी ही असली नेत्र हैं। वे ज्ञान रूपी आँखें देते हैं।

प्र0 10 वे मार्गदाता कैसे हैं?

उ0 संसार में भटकते हुए प्राणी उनसे ज्ञान-दर्शन-चारित्र रूप मोक्ष मार्ग को प्राप्त करते हैं और मुक्ति रूपी मंजिल पर पहुँच जाते हैं अत: वे मार्गदाता हैं।

प्र0 11 वे शरणदाता कैसे हैं?

उ0 शरण मकान को कहते हैं जैसे घर से भटके हुए बालक को कोई उनके घर पहुँचा दे या किसी बेघर को कोई घर दे दे या शक्तिशाली से डरे हुए को कोई सहारा दे तो वह शरणदाता कहलाता है। वे भी इसी तरह भटके हुए को धर्म-शरण देते हैं।

प्र0 12 वे बोधिदाता कैसे हैं?

उ0 सोये हुए व्यक्ति को जगाने वाला बोधिदाता कहलाता है। मोह नींद में सोये हुए प्राणी को ये ज्ञान-दर्शन से जगाते हैं। अत: ये बोधिदाता है।

प्र0 13 ये जीवन दाता कैसे हैं?

उ0 जैसे किसी मरणासन्न व्यक्ति को कोई चिकित्सक अपने इलाज से जिंदा कर दे तो वह जीवन दाता है। ऐसे अरिहंत भगवान भव्य प्राणियों को जन्म-मरण से छुटकारा दिलाकर सही जीवन में और सही जीवन के स्वरूप में प्रवेश देते हैं। इसलिए वे जीवन दाता हैं।

प्र0 14 वे धर्म दाता कैसे हैं?

उ0 यद्यपि धर्म-आत्मा का मूल गुण है परन्तु मिथ्यात्व एवं कषाय के कारण वो प्रकट नहीं होता। तीर्थंकर मिथ्यात्व और कषाय का क्षय करवा कर धर्म को प्रकट करवाते हैं, इसलिए वे धर्म दाता हैं।

प्र0 15 उन्हें सर्वज्ञ और सर्वदर्शी क्यों कहा गया है?

उ0 जैन धर्म ये मानता है कि जिसका ज्ञानावरण और दर्शनावरण समाप्त हो गया है उन्हें तीन काल और तीन लोक की रूपी-अरूपी प्रत्येक वस्तु एक समय में ही हस्तामलकवत् दिखाई देती हैं। ज्ञान आत्मा का स्वाभाविक धर्म है। जब कर्मों का आवरण हट जाता है तब सर्वज्ञता और सर्वदर्शिता अपने आप प्रकट हो जाती है। भ० महावीर ने अपनी सर्वज्ञता के आधार पर ऋषभदेव भगवान के समय की तथा उससे भी पूर्व की घटनाएँ फरमाईं तथा भविष्य में क्या होगा ये भी उन्होने फरमाया, एकेन्द्रिय तथा वनस्पति आदि के विषय में जो सूक्ष्म ज्ञान उन्होनें हमें दिया वह उस समय बिना सर्वज्ञता के संभव नही था। अणु आदि के विषय में जो जानकारी जैन-शास्त्रों में मिलती हैं वही उनकी सर्वज्ञता को प्रमाणित करती है। गौतम आदि गणधरों की शंकाओं का तथा मेघकुमार आदि की शिथिलताओं का इलाज भ० महावीर ने अपनी सर्वज्ञता के आधार पर किया था यद्यपि कुछ धर्म ऐसा कहते हैं कि सब कुछ जानना सम्भव व उचित नही हैं लेकिन जैन धर्म ऐसा नहीं मानता। वह तो सर्वज्ञता को स्वीकार करता है और तीर्थंकर सर्वज्ञ होते हैं।

वर्तमान अवसर्पणीकाल के तीर्थंकर, गणधर एवं सतियों के नाम

चौबीस तीर्थंकर

1 श्री ऋषभदेव जी
2 श्री अजितनाथ जी
3 श्री संभवनाथ जी
4 श्री अभिनन्दन जी
5 श्री सुमतिनाथ जी
6 श्री पदमप्रभ जी
7 श्री सुपार्श्वनाथ जी
8 श्री चन्द्रप्रभ जी
9 श्री सुवधि नाथ जी
10 श्री शीतलनाथ जी
11 श्री श्रेयांसनाथ जी
12 श्री वासुपूज्य जी
13 श्री विमलनाथ जी
14 श्री अनन्त नाथ जी
15 श्री धर्मनाथ जी
16 श्री शान्तिनाथ जी
17 श्री कुन्थुनाथ जी
18 श्री अरनाथ जी
19 श्री मल्लिनाथ जी
20 श्री मुनिसुव्रत जी
21 श्री नमिनाथ जी
22 श्री अरिष्टनेमि जी
23 श्री पार्श्वनाथ जी
24 श्री महावीर स्वामी जी

बीस विहरमान तीर्थंकर

1 श्री सीमंधर स्वामी जी
2 श्री युग मन्दिर स्वामी जी
3 श्री बाहु स्वामी जी
4 श्री सुबाहु स्वामी जी
5 श्री सुजात स्वामी जी
6 श्री स्वयंप्रभ स्वामी जी
7 श्री ऋषभानन स्वामी जी
8 श्री अनन्त वीर्य स्वामी जी
9 श्री सूरप्रभ स्वामी जी
10 श्री विशाल स्वामी जी
11 श्री वज्रधर स्वामी जी
12 श्री चन्द्रानन स्वामी जी
13 श्री चन्द्र-बाहु स्वामी जी
14 श्री भुजंग स्वामी जी
15 श्री ईश्वर स्वामी जी
16 श्री नेमीश्वर स्वामी जी
17 श्री वीरसेन स्वामी जी
18 श्री महाभद्र स्वामी जी
19 श्री देवयश स्वामी जी
20 श्री अजित वीर्य स्वामी जी

ग्यारह गणधर

1 श्री इन्द्रभूति जी
2 श्री अग्निभूति जी
3 श्री वायुभूति जी
4 श्री व्यक्त स्वामी जी
5 श्री सुधर्मा स्वामी जी
6 श्री मण्डित पुत्र जी
7 श्री मौर्य पुत्र जी
8 श्री अकंपित जी
9 श्री अचल भ्राता जी
10 श्री मेतार्य स्वामी जी
11 श्री प्रभास स्वामी जी

सोलह सतियाँ

1 श्री ब्रह्मी जी
2 श्री सुन्दरी जी
3 श्री कौशल्या जी
4 श्री सीता जी
5 श्री राजीमति जी
6 श्री कुन्ती जी
7 श्री द्रौपदी जी
8 श्री चन्दनबाला जी
9 श्री मृगावती जी
10 श्री पुष्पाचुला जी
11 श्री प्रभावती जी
12 श्री सुभद्रा जी
13 श्री दमयन्ती जी
14 श्री सुलसा जी
15 श्री शिवादेवी जी
16 श्री पदमावती जी

धर्म

जीवात्मा को दु:खदायी पाप-कर्म से बचाकर, शाश्वत सुखदायी मोक्ष प्रदान करने वाला आचरण **धर्म** कहलाता है।

ध्यान रखिए: पाप कर्म करने से जीव को दुर्गति (अशुभ गति, यथा-नरक-गति, पशु, पक्षी, मक्खी, मच्छर, मिटटी, पानी, वनस्पति या कीट योनि) मिलती है और वहां जन्म लेने से नाना प्रकार के दुख भोगने पड़ते हैं।

पाप क्या है?

1. किसी जीव की हिंसा करना, उसे मारना, सताना, तड़पाना या प्राण ले लेना पाप है।
2. मांस खाना, अण्डा खाना, मांस-अण्डे से युक्त पदार्थ खाना पाप है।
3. जुआ खेलना, शिकार खेलना, शराब पीना, सब प्रकार के नशे करना पाप है।
4. झूठ बोलना, चोरी करना, व्यभिचार करना पाप है।
5. दीन-हीनों का शोषण करना, अनावश्यक वस्तुओं का संग्रह करना पाप है।
6. क्रोध करना, अभिमान करना, छल करना, लोभ करना पाप है।
7. किसी के प्रति अशुभ राग करना, द्वेष करना या झूठा दोषारोपण करना पाप है।

धर्म क्या है?

1. छोटे-बड़े सभी जीवों की रक्षा और उन पर दया करना धर्म है। (रक्षा= किसी जीव की हिंसा न करना। दया = दुखी जीवों की सहायता करना।)
2. सत्य बोलना, चोरी न करना धर्म है।
3. व्यभिचार न करना, पराई स्त्री या पर-पुरुष के प्रति पवित्र भाव रखना धर्म है।
4. आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह न करना, सन्तोष रखना धर्म है। ऐसे धर्म का आचरण करता हुआ जीव जन्म-मरण के बंधन काट कर मोक्ष-रूपी महल में प्रवेश करता है।

याद रखिए -

धर्म जीव-मात्र की रक्षा करना सिखाता है।

धर्म जीव-मात्र के प्रति मित्रता की भावना सिखाता है।

धर्म कभी किसी को लड़ना, मारना, लूटना, पीटना, शोषण करना नहीं सिखाता।

क्या आप जानते हैं कि विश्व में भिन्न-भिन्न समयों में अनेक धर्मों का प्रचलन हुआ। विश्व के प्रमुख धर्म ये हैं- हिंदू धर्म, इस्लाम धर्म, सिख धर्म, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, पारसी धर्म, ताओ धर्म, शिन्तो धर्म और कन्फ्यूशियस का धर्म।

जैन धर्म

(विश्लेषण-1)

जैन धर्म में भगवान के लिए कई शब्दों का प्रयोग किया जाता है जैसे वीतरागी, अरिहन्त, तीर्थंकर, केवलज्ञानी, सिद्ध, जिनेन्द्र आदि। जिनेन्द्र को जिन भी कहते हैं। जो 'जिन' या 'जिनेन्द्र' देवों को अपना भगवान मानता है, वह जैन है। और जो धर्म जिनेन्द्र भगवान ने फरमाया वो धर्म 'जैन धर्म' है। जैसे 'शिव' की उपासना करने वाला शैव धर्म, 'विष्णु' की उपासना करने वाला 'वैष्णव' धर्म है, उसी प्रकार 'जिन' भगवान की उपासना करने वाला जैन धर्म है।

'जिन' कौन है? जिन महापुरूषों ने राग और द्वेष रूपी आत्मिक शत्रुओं को पूर्णरूप से जीत लिया है, जो इस जन्म-मरण रूपी संसार के चक्र से छूट गए हैं, वे 'जिन' कहलाते हैं। जैन धर्म की स्थापना भगवान् ऋषभदेव ने की। जैन इतिहास में 24 तीर्थंकरों का वर्णन आता है। प्रभु ऋषभदेव उनमें सर्वप्रथम तीर्थंकर थे। सभ्यता व संस्कृति के आदिकाल में उन्होंने असि, मसी व कृषि विद्याओं का प्रवर्तन (शुरुआत) किया। पुरुषों की 72 और स्त्रियों की 64 कलाएं सिखाई। कई लोग ये सोचते हैं कि जैन धर्म की स्थापना भगवान महावीर ने की, पर नहीं, वे तो 24वें तीर्थंकर थे। उनसे पहले 23 तीर्थंकर हो चुके थे।

जैन धर्म किसी जाति-विशेष का धर्म नहीं है। यह जन-धर्म है। यह सम्प्रदाय-गत नहीं, मानव-गत है। प्राचीन काल में सभी जाति के लोग इसके अनुयायी हुए और अपनी साधना से जन-जन को आलोकित किया।

जैन धर्म में व्यक्ति-पूजा को मान्यता नहीं दी गई है, वह गुणों का पुजारी है। इसका प्रत्यक्ष साक्ष्य है- नमस्कार महामंत्र और चतु:शरण सूत्र। इनमें किसी व्यक्ति-विशेष को नमस्कार न करके गुणों और व्यक्तित्व-विकास को ही वन्दना की गई है।

जैन धर्म के तीन सिद्धांत हैं-

1. आचार में अहिंसा, 2. व्यवहार में अपरिग्रहवाद, 3. विचार में अनेकान्तवाद।

भगवान् महावीर ने धर्म, आचार और व्यवहार के जिन तीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, वे आज भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं, जितने ढाई हजार वर्ष पूर्व थे। आइए, इन पर विचार करें।

1. अहिंसा

सब जीवों के प्रति संयम रखना, समभाव रखना तथा आत्मवत् बुद्धि को विकसित करना अहिंसा है। महावीर ने अहिंसक क्रांति के लिए ये सूत्र प्रस्तुत किए-

* किसी का वध मत करो, क्योंकि जिसे तुम मारना चाहते हो, वह और कोई नहीं, तुम स्वयं हो।
* वैर करने से वैर की परम्परा बढ़ती है, अत: किसी से वैर मत करो।
* मैं सब जीवों को क्षमा करता हूं, सब जीव मुझे क्षमा करें। मेरी समस्त जीवों के प्रति मैत्री है, किसी से मेरा वैर नहीं है।
* हिंसा, किसी भी रूप में, ग्रन्थि-रूप है, मोह-रूप है, नरक-रूप है और मृत्यु-रूप है।

2. अपरिग्रह

इसका अर्थ है ममता और मूर्छा का अभाव। वस्तु परिग्रह नहीं है, परिग्रह है उस वस्तु के प्रति ममता, मूर्छा, आसक्ति का भाव। आज समाजवाद और साम्यवाद की चर्चा चल रही है, पर हमारी आशाएं, आकांक्षाएं आसमान को छूने को उतावली हैं। इस सम्बन्ध में महावीर ने इच्छा-परिमाण का व्रत दिया, यह उनकी महान् देन है।

3. अनेकान्तवाद

प्रत्येक वस्तु अनन्त स्वभाव (अन्त/रूप) वाली है, उसे किसी एक रूप या परिप्रेक्ष्य में न देखकर विभिन्न दृष्टिकोणों द्वारा समग्र रूप में देखने/समझने का भाव रखना। उदाहरण : एक बार श्रीराम ने हनुमान से पूछा-बताओ, अशोक-वाटिका में किस रंग के फूल थे?हनुमान ने कहा- लाल रंग के। वही प्रश्न सीता जी से किया गया, तो उन्होंने सफेद फूल कहा। परस्पर-विरोधी उत्तर होने से बात खिंचने लगी, तो श्रीराम ने समाधान की भाषा में कहा- तुम दोनों ही सही हो। उस समय हनुमान की आंखें क्रोध से लाल थी, अतः उन्हें फूल लाल रंग के दिखाई दिए। सीता शान्त बैठी थी, अतः फूलों का रंग सफेद दिखाई दिया। भगवान् महावीर की आधुनिक युग को ये सबसे बड़ी देन है। हम अपने व्यवहार में सापेक्षता को प्रयोग नहीं करते, अतःएव सामाजिक और साम्प्रदायिक वैमनस्य पनपते हैं। विज्ञान के क्षेत्र में अल्बर्ट आइंस्टीन ने इसी सापेक्षता (Theory of Relativity) के सिद्धान्त द्वारा नए-नए तथ्यों की व्याख्या की।

भगवान् महावीर के युग में भारतीय समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शुद्र चार वर्णों (वर्गों) में बंटा हुआ था। महावीर ने इस मान्यता को सिरे से नकारते हुए कहा कि व्यक्ति की उच्चता, नीचता का आधार जन्म न होकर कर्म ही है। उन्होंने सभी जातियों को अपने धर्मसंघ में दीक्षित करके 'मनुष्य जाति एक है', इस सत्य को स्थापित किया।

इसके अतिरिक्त महावीर ने दास-प्रथा और स्त्री की पराधीनता का विरोध करते हुए उनको मानवीय धरातल पर समान आँकने का उपदेश दिया।

इस प्रकार भगवान् महावीर के सभी सिद्धान्त आज भी उसी रूप में उपयोगी और कल्याणकारी हैं, हमें इनका पालन करना चाहिए।

जैन धर्म

(विश्लेषण-2)

प्राणि-मात्र के कल्याण-हेतु श्रेष्ठ आचरण को धर्म कहते हैं। विश्व में अनेक धर्म हैं। उन सभी की अपनी-अपनी मान्यताएं और आचार-पद्धति है। उनका कभी संक्षेप में और कभी विस्तार में निरूपण किया जाता है। जैन धर्म को सार-संक्षेप में समझने के लिए निम्नलिखित श्लोक प्रसिद्ध है-

स्याद्वादो वर्तते यस्मिन्, पक्षपातो न विद्यते। नास्त्यन्यपीडनं किंचिद्, जैनधर्मः स उच्यते ।।

अर्थात् जिस धर्म-शासन में स्याद्वाद शैली में सब तत्वों का विवेचन होता है, सैद्धान्तिक विचारों में कोई पक्षपात नहीं होता तथा किसी भी सूक्ष्म-स्थूल जीव को पीड़ा नहीं दी जाती, वह जैन धर्म है। आइए, इन तीन बातों को तनिक विस्तार से समझें ।

1. स्याद्वाद या अनेकान्त

किसी वस्तु का सम्पूर्ण स्वरूप उपलब्ध करने के लिए अनेक अन्त (अपेक्षा/दृष्टिकोण) से उस पर विचार करना अनेकान्तवाद है। इसको प्रकट करने की शैली 'स्याद्वाद' कहलाती है। उदाहरणार्थ-एक ही व्यक्ति विभिन्न दृष्टियों से पिता, पुत्र, भाई, चाचा, ताऊ, मामा, मौसा आदि कहलाता है। लौकिक व्यवहार करते वक्त एक समय में एक ही सम्बन्ध ग्रहण किया जाता है-यथा-'शामलाल सुनील के पिताश्री हैं। इसे दार्शनिक भाषा में (स्याद्वाद शैली में) कहेंगे- 'स्यात् श्यामः सुनीलस्य जनकः' अर्थात् पितृ-सम्बन्ध से शामलाल सुनील का पिता है, 'स्यात्' लगाने का तात्पर्य यही है कि अन्य सम्बन्धों को न नकारते हुए, किसी एक सम्बन्ध/अपेक्षा को ग्रहण करना। एक और उदाहरण लें। जैसे-कौआ काला है। यहां कौअे की त्वचा के रंग की अपेक्षा वह काला है, पर खून की अपेक्षा लाल, हड्डी की अपेक्षा सफेद तथा अन्य अंगों की अपेक्षा अन्य रंग वाला भी है। जब हम 'कौआ काला ही है' इस आग्रहवृत्ति में पड़ जाते हैं, तब वैचारिक संघर्ष छिड़ते हैं। जब 'ही' के स्थान पर 'भी' वृत्ति आ जाती है (अर्थात् कौआ काला है, पर खून की अपेक्षा लाल 'भी' है, हड्डियों की अपेक्षा सफेद 'भी' है) तभी वैचारिक द्वन्द्वशान्त होते हैं। स्याद्वाद शैली (अनेकान्त सिद्धान्त) इसी दुराग्रह वृत्ति को समाप्त करके वैचारिक समरसता का संचार करती है। भगवान् महावीर ने जीवन व जगत् के सभी रहस्यों को इसी अनेकान्त सिद्धान्त के आधार पर खोला है।

2. पक्षपात-रहितता

जैन धर्म-शासन के प्रवर्तक (संस्थापक) तीर्थंकर भगवान् अनन्त ज्ञान के भण्डार होते हैं। जगत् के सब जीवों के कल्याण-हेतु, जैसा वे अपने ज्ञान में देखते हैं, उसी रूप में तत्वों का प्रतिपादन करते हैं। इसका कारण यह है कि मोहनीय कर्म समाप्त होने की वजह से उनकी आत्मा में किसी प्रकार का राग, द्वेष या स्वार्थ-भाव नहीं रहता। पक्षपात वही करता है, जिसकी आत्मा में राग-द्वेष आदि नकारात्मक भाव हों। चूंकि भगवान् वीतराग हैं, अतः आत्मा, परमात्मा, लोक, परलोक, कर्म-बन्ध, कर्मक्षय आदि के सम्बन्ध में जो उन्होंने विचार दिए हैं, वे पूर्णतः सत्य, तथ्य एवं पक्षपात से रहित हैं।

3. प्राणि-पीड़ा का निषेध

विश्व में जैन धर्म ही एकमात्र ऐसा धर्म है, जिसमें शुरू से ही, चलने-फिरने वाले स्थूल जीवों की हिंसा के निषेध के साथ-साथ, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं वनस्पति के जीवों की हिंसा का भी स्पष्ट निषेध किया है। आज से 2500 वर्ष पूर्व (जब वैज्ञानिक युग की शुरूआत भी नहीं हुई थी) भगवान् ने अपने ज्ञान-बल से पृथ्वी आदि को जीव-युक्त देखा और उनकी हिंसा का निषेध किया। यह वैज्ञानिक यन्त्रों का वर्तमान युग में कमाल है कि वे पूर्वोक्त पृथ्वी आदि पांच में से, अग्नि को छोड़कर, शेष चारों को जीव-युक्त (सचेतन) मानने लगे हैं। इन सब जीवों की हिंसा न करने से जहां पर्यावरण की सुरक्षा होती है, वहां आध्यात्मिक स्तर पर भी आत्मा, अशुभ कर्म-बन्ध से बचकर, नीच गतियों में जन्म-मरण नहीं करती।

कई धर्मों में सांसारिक कार्यों के लिए की गई हिंसा तो वर्जित की गई है, पर धार्मिक कार्यों में की जाने वाली हिंसा को दोष-मुक्त कह दिया गया। 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'यज्ञार्थं पशवः सृष्टाः', 'जीवो जीवस्य भोजनम्' आदि विधान इसी सोच के परिणाम हैं। पर जैन धर्म ने स्पष्ट कहा कि ' हिंसा हिंसा है, चाहे उसका उद्देश्य कुछ भी हो'। हिंसा स्वयं में मोह-रूप है, ग्रन्थि-रूप है, मृत्यु-रूप है और नरक-रूप है। जैसे विश्व में सुमेरू पर्वत से ऊंची और आकाश से विशाल अन्य कोई वस्तु नहीं है, उसी प्रकार अहिंसा से बढ़कर अन्य कोई धर्म नहीं है। यदि इतना नहीं जाना कि 'पर-प्राणी को पीड़ा नहीं देनी चाहिए', तो करोड़ों ग्रन्थों का पढ़ना भी निस्सार है। हिंसक व्यक्ति की सभी जप, तप, दान, पुण्य, साधना आदि क्रियाएं व्यर्थ हैं।

सप्त (सात) कुव्यसन

प्रत्येक बच्चे को निम्न सात कुव्यसनों को त्याग अवश्य करना चाहिए। इससे जीवन निर्मल, पवित्र व पावन बन जाता है। तथा जीवन के सर्वांगीण विकास की संभावना बनती है।

दोहा-

मद्यमांसा वेश्यागमन, परनारी अरु शिकार।
जुआ चोरी, जो सुख चहै, सातों व्यसन निवार।।

1. **मद्य :** शराब, गांजा, चरस, भांग, अफीम, बीड़ी, सिगरेट, जरदे (तम्बाखू) का गुटका, स्मैक, हेरोइन का सेवन करना।

2. **मांस :** मांस, मछली, अण्डे खाना। जहाँ शाकाहारी, मांसाहारी भोजन के सामुहिक होटल हो वहाँ खाना-पीना करना, ठहरना। अण्डे, मांस एवं अंडे मांस युक्त वस्तु खाना।

3. **वेश्यागमन :** वेश्या के घर जाना। केबरे डांस देखना।

4. **परस्त्रीगमन :** अपनी विवाहित स्त्री के सिवाय अन्य स्त्री के साथ अब्रह्मचर्य का सेवन करना। हस्त मैथुन करना, अश्लील साहित्य पढ़ना।

5. **शिकार :** शस्त्र, गिलोल आदि से सिँह, मृग, खरगोश, चिड़ियाँ, कबूतर आदि पशुपक्षियों को क्रीड़ा कौतुक के लिए मारना। जीवों को मारने की दवाई छिड़कना।

6. **जुआ :** ताश, पत्ती, चौपड़, शतरंज आदि के माध्यम से पैसे लगाकर खेलना, सट्टा करना, लाट्री ड्रॉ के कारोबार करना।

7. **चोरी :** सेंध आदि लगाकर, जेब आदि काटकर, रास्ते में लूटकर या और किसी उपाय से किसी का धन हरण करना।

भगवान महावीर की मुख्य आठ शिक्षाएँ

1. हमें शास्त्र/आगम की जिन बातों को या जिन आगमो को न सुना हों, उन्हें सुनने के लिए परिश्रम करना चाहिए।

2. हमें सुने हुए शास्त्रों को हृदय में बिठाकर उनकी स्मृति को स्थायी बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

3. हमें संयम द्वारा पाप कर्म रोकने की कोशिश करनी चाहिए।

4. हमें तप के द्वारा पूर्वोपार्जित कर्मो की निर्जरा करते हुए आत्म-विशुद्धि के लिए यत्न करना चाहिए।

5. हमें बीमार की उत्साह पूर्वक वैयावृत्य (सेवा) करने के लिए यत्न करना चाहिए।

6. साधुओ को नये शिष्यों को आचार, विचार और ज्ञान सिखलाने की कोशिश करनी चाहिए।

7. साधुओ को नये शिष्यों का संग्रह करने के लिए कोशिश करनी चाहिए।

8. साधुओ को सधर्मियों में विरोध होने पर राग द्वेष से रहित होकर अथवा आहरादि और शिष्यादि की अपेक्षा से रहित होकर बिना भेदभाव के विरोध दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

श्रावक के 21 गुण

1 अक्षुद्र-उदार हृदय वाला

2 यशवन्त

3 सौम्य प्रकृति वाला

4 लोकप्रिय

5 अक्रूर-क्लेश व्यवहार न करने वाला

6 पापभीरू

7 अशठ-माया युक्त व्यवहार न करने वाला

8 सदाक्षिण्य-परोपकार करने में चतुर

9 लज्जावान्

10 दयालु

11 मध्यस्थ स्वभाव वाला

12 गंभीर, सहिष्णु तथा विवेकी

13 गुणानुरागी

14 धर्मोपदेश करने वाला

15 सुदीर्घदर्शी

16 विशेषज्ञ-हित अहित को अच्छी तरह जानने वाला

17 वृद्धानुगत-परिपक्व बुद्धि वाले बड़े आदमियों के पीछे-पीछे चलने वाला

18 विनयशील

19 कृतज्ञ-उपकार मानने वाला

20 पर-हितार्थकारी

21 लब्ध लक्ष्य-श्रावक के धर्म को अच्छी प्रकार से समझने वाला।

गुरूदेवों की सुखसाता पूछने का पाठ

अहो गुरूदेव जी महाराज! हम आपके, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, संयम, यात्रा एवं शरीर की सुखसाता पूछते हैं और आपके, स्वास्थ्य की शुभ मंगल कामना करते हैं तथा मस्तक झुकाकर 3 बार तिक्खुत्तो के पाठ से वंदना करते हैं।

श्रावकजी के पाँच अभिगम

भगवान के समवसरण में या साधु-साध्वी के पास उपाश्रय, स्थानक आदि में जाने से पहले हमें जिन नियमों का पालन करना चाहिए, उन्हें हम **अभिगम** कहते हैं। और ये अभिगम पाँच तरह के होते हैं।

1. सचित का त्याग

देव, गुरू के समीप जाते समय इलायची, दाख, बादाम, पान, फल, फूल, बीज, अनाज, दातुन, शाक आदि सचित वनस्पति, कच्चा पानी, नमक, लालटेन, चालू टार्च आदि साथ नहीं ले जाना।

2. अचित का विवेक

दर्प सूचक (अभिमान सूचक) वस्तुएँ जैसे छत्र, चामर, जूते, लाठी, वाहन, शस्त्र आदि एक तरफ रखकर एवं वस्त्र व्यवस्थित कर देव -गुरू को वन्दना करना। भाईयों को सामयिक के लिए महासती जी व बहिनों के सामने वस्त्र नहीं बदलने चाहियें, अपितु एक तरफ जाकर वस्त्र बदलने चाहियें।

3. उत्तरासंग

मुंहपत्ति या रूमाल मुंह के ऊपर रखना। देव गुरू के समक्ष खुले मुंह से नहीं बोला जाता है।

4. अञ्जलिकरण

जहाँ से देव, गुरू दिखाई दें, वहीं से अञ्जलि (जोड़े हुए दोनों हाथ) ललाट से लगाकर विनय पूर्वक वन्दना करना।

5. मन की एकाग्रता

गृहकार्य के प्रपंच या पापकार्यो से मन हटाकर देव-गुरू क्या फरमाते हैं, उस तरफ एकाग्रता रखकर सुनना और देव, गुरू में श्रद्धा रखना।

श्रावक / श्राविका के तीन मनोरथ

1. पहले मनोरथ में श्रावक / श्राविका को यह भावना भानी चाहिए कि वह शुभ समय कब प्राप्त होगा, जब मैं अल्प या अधिक परिग्रह का त्याग करूँगा / करूँगी।

2. दूसरे मनोरथ में श्रावक / श्राविका को यह चिन्तन करना चाहिए कि वह शुभ समय कब प्राप्त होगा, जब मैं गृहस्थावास छोड़कर, मुंडित होकर प्रव्रज्या अंगीकार करूँगा / करूँगी।

3. तीसरे मनोरथ में श्रावक / श्राविका को यह विचार करना चाहिए कि वह शुभ अवसर कब प्राप्त होगा, जब मैं अंत समय में संलेखना स्वीकार कर, आहार-पानी का त्याग कर, पण्डित-मरण अंगीकार कर, जीवन-मरण की इच्छा न रखते हुए, अन्तिम समय व्यतीत करूँगा / करूँगी।

ज्ञान वृद्धि के कारण

1. परिश्रम करना
2. बड़ों की विनय करना
3. निद्रा त्यागना
4. कपट रहित तप करना
5. ऊनोदरी तप करना
6. संसार असार जानना
7. अल्प बोलना
8. सीखे हुए ज्ञान को पुनः पुनः विचारना
9. पंडित पुरुषों की संगति करना
10. ज्ञानवंत के पास पढ़ना
11. इन्द्रियों के विषय त्यागना

ज्ञान हानि के सात कारण

1. आलस्य करना
2. चिन्ता अधिक करना
3. निद्रा अधिक लेना
4. रोगी अधिक रहना
5. क्लेश करना
6. कुटुम्ब परिवार के मोह में डूबे रहना
7. शोक करना

जैन वचन विवेक

1. कम बोलना
2. काम पड़ने पर बोलना
3. मीठा बोलना
4. निःस्वार्थ होकर बोलना
5. मर्म कारी वचन न बोलना
6. सूत्र एवं सिद्धान्त के अनसार बोलना
7. सभी को साताकारी बोलना

रात्रि भोजन त्याग के लाभ

1 स्वास्थ्य ठीक रहता है, शरीर का लाघव रहता है।

2 अहिंसा का पालन होता है। मच्छर, कीड़े-मकोड़े आदि नहीं मरते।

3 तपस्या का लाभ होता है।

4 अतिथि सेवा एवं संतों को निर्दोष आहार दान का लाभ होता है।

5 दिनचर्या नियमित होती है, कार्य समय पर सम्पन्न होते हैं।

6 धार्मिक क्रियाओं में मन लगता है।

कुछ अच्छे काम

(भाग-1)

1 हर रोज सुबह सूर्य निकलने से पहले उठकर भगवान् का भजन करो एवं गुरूदेवों को वंदना करो।

2 अपने माता-पिता तथा बड़ों को प्रणाम करो, उनका कहना मानो और उनकी सेवा करो।

3 बड़ों को सदा 'आप' कहो, 'तुम' नहीं।

4 अपने से बड़ा कोई तुम्हें बुलावें तो 'जी साहब' या हाँ साहब कह कर बोलना चाहिए।

5 घर में भाई-बहनों के साथ प्रेम से रहो।

6 कोई भी खाने-पीने की वस्तु हो, सब बाँटकर खाओ। अकेले कभी न खाओ।

7 असहाय एवं रोगी की सेवा करो।

8 किसी दूसरे की वस्तु बिना पूछे मत लो। यह चोरी है और चोरी करना बड़ा पाप है।

9 अगर कभी कोई गलती हो जाय तो साफ-साफ कह दो, छिपाओ नहीं।

10 गाली या भद्दा बोलना जंगलीपन है, इसलिए कभी किसको बुरे शब्द मत कहो।

11 प्रतिदिन 10-15 मिनट के लिये धार्मिक पुस्तक पढ़ो।

12 सदा निर्भय रहो। मन में भूत-प्रेत, चुड़ैल आदि किसी तरह का भय न रखो। इनमें ऐसी कोई ताकत नहीं है, जो तुम्हें दुःख दे सके। नमस्कार-मंत्र के जाप से सर्व भय दूर होते हैं।

जीव-अजीव प्रश्नोत्तर

प्र0 1. श्रीमद्भगवद् गीता में जीव (आत्मा) का क्या लक्षण बताया गया है?

उ0 नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो, न च शोषति मारुतः।।
अर्थात् आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते, अग्नि जला नहीं सकती, पानी गीला नहीं कर सकता और हवा सुखा नहीं सकती।

प्र0 2. जन्म-मरण के दुख कौन सहन करते हैं?

उ0 जन्म-मरण के दुख अनन्त जीव सहन करते हैं, जैसे-मनुष्य, स्त्री, हाथी, घोड़ा, चींटी, मेंढ़क, जल, वृक्ष, नारकी, देव आदि।

प्र0 3. अजीव किसे कहते हैं?

उ0 जिसमें जानने, देखने की शक्ति नहीं होती, उसे अजीव कहते हैं, जैसे- लकड़ी, पैन, गाड़ी, कापी, चाक, टीवी, पंखा आदि।

प्र0 4. शरीर का स्वभाव कैसा है?

उ0 पूरण (मिलना), गलन (पुराना पड़ना), सड़न (टूट कर अलग होना) और विध्वंसन (नष्ट होना) स्वभाव वाला।

प्र0 5. क्या जीव अजीव हो सकता है?

उ0 नहीं! जीव कभी भी अजीव नहीं हो सकता और अजीव कभी भी जीव नहीं हो सकता।

प्र0 6. जन्म-मरण का दुख जीव भोगता है या अजीव?संसारी भोगता है या मुक्त?

उ0 जन्म-मरण का दुख जीव भोगता है और वह भी संसारी।

प्र0 7. क्या जीव और शरीर एक हैं?

उ0 जैसे बिजली का तार और करंट, तिल और तेल तथा दूध और मक्खन परस्पर अलग हैं, उसी तरह जीव और शरीर भी अलग-अलग हैं। हमें सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र की साधना के द्वारा जीव को शरीर से पृथक् करके मोक्ष प्राप्त करना चाहिए।

जीव-परिचय

प्र0 1. जीव किसे कहते हैं?

उ0 जिसमें जानने-देखने की शक्ति होती है, उसे जीव कहते हैं। जैसे-मनुष्य, चींटी, मच्छर गाय, बैल, घोड़ा आदि।

प्र0 2. जीव कितने प्रकार के होते हैं?

उ0 जीव दो प्रकार के होते हैं- 1. मुक्त जीव 2. संसारी जीव।

प्र0 3. मुक्त जीव किसे कहते हैं?

उ0 जो जन्म-मरण के दुःखों से हमेशा के लिए छुटकारा पा गये हैं, उन्हें मुक्त जीव कहते हैं। इन्हें सिद्ध भगवान् भी कहते हैं।

प्र0 4. संसारी जीव किसे कहते हैं?

उ0 जो आठ कर्मों के कारण इस जन्म-मरण-रूप संसार में जन्म-मरण करते हैं, वे संसारी जीव हैं। इनके दो भेद हैं- स्थावर और त्रस जीव।

प्र0 5. स्थावर जीव किसे कहते हैं?

उ0 जिनके एकमात्र स्पर्शन इन्द्रिय होती है, उन्हें स्थावर जीव कहते हैं। स्थावर जीव के पांच भेद हैं-

1. पृथ्वीकायिक 2. जलकायिक 3. अग्निकायिक 4. वायुकायिक 5. वनस्पतिकायिक।

1. पृथ्वीकायिक-पृथ्वी ही जिनका शरीर होता है, जैसे-मिट्टी, पत्थर आदि।

2. जलकायिक- जल ही जिनका शरीर होता है, जैसे- जल, बर्फ आदि।

3. अग्निकायिक- अग्नि ही जिनका शरीर होता है, जैसे- अग्नि, बिजली आदि।

4. वायुकायिक- वायु ही जिनका शरीर होता है, जैसे- हवा, आंधी आदि।

5. वनस्पतिकायिक- वनस्पति ही जिनका शरीर होता है, जैसे- वृक्ष, अंकुर, लता आदि।

प्र0 6. त्रस जीव किसे कहते हैं?इनके कितने भेद हैं?

उ0 चलने फिरने की शक्ति रखने वाले जीव त्रस हैं, इनके शरीर में दो या दो से अधिक इन्द्रियाँ होती हैं। त्रस जीवों के चार भेद हैं-

1. दो इन्द्रिय, जैसे- सीप, शंख, केंचुआ, लट आदि।

2. तीन इन्द्रिय, जैसे- जू, चींटी, मकड़ी, सुरसी आदि।

3. चार इन्द्रिय, जैसे- मक्खी, मच्छर, भंवरा, टिड्डी, बिच्छू आदि।

4. पंचेन्द्रिय, जैसे- मनुष्य, पशु, पक्षी, नरकगति व देवगति के जीव आदि।

देव-गुरू-धर्म प्रश्नोत्तरी

प्र0 1. तुम्हारे देव कौन हैं?

उ0 अरिहन्त व सिद्ध।

प्र0 2. अरिहन्त किसे कहते हैं?

उ0 चार घनघाती कर्म-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय एवं अन्तराय को क्षय करके जिन्होंने केवलज्ञान-केवलदर्शन को प्राप्त किया है तथा धर्म -तीर्थ की स्थापना की है, वे अरिहन्त कहलाते हैं।

प्र0 3. देव का स्वरूप क्या है?

उ0 देव राग-द्वेष-रहित वीतरागी, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी होते हैं। वे यथावस्थित तत्वों का उपदेश करते हैं और सत्यधर्म का प्रवर्तन करते हैं।

प्र0 4. देव साकार हैं या निराकार?

उ0 अरिहन्त देव साकार होते हैं, क्योंकि वे मनुष्य-शरीरधारी हैं। जब वे आठों कर्मो का नाश कर करके 'सिद्ध' हो जाते हैं, तब निराकार होते हैं।

प्र0 5. देव के कौन-कौन से नाम हैं?

उ0 अरिहन्त, जिन, परमात्मा, परमेश्वर, प्रभु, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, देवाधिदेव आदि।

प्र0 6. भैरूं, भवानी, वैष्णो देवी, ज्वाला जी, चिन्तपूर्णी आदि देव दुनिया में माने जाते हैं, तो क्या वे देव नहीं हैं?

उ0 वे धर्म-प्रवर्तक देव नहीं है, जन-मन कामना-पूरक लौकिक देव हैं।

प्र0 7. गुरु किसे कहते हैं?

उ0 पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति का पालन करने वाले साधु को गुरू कहते है।

प्र0 8. धर्म किसे कहते हैं?

उ0 'आत्मशुद्धि-साधनं धर्मः'- जिन उपायों से आत्म-शुद्धि होती है, उनको धर्म कहते हैं।

प्र0 9. वे उपाय कौन-कौन से हैं?

उ0 दो है- 1. संवर अर्थात् आत्मा में प्रवेश करते हुए कर्मो को रोकना।

2. निर्जरा अर्थात् आत्मा से चिपके हुए कर्मो को अलग करना।

5 पापों पर प्रश्नोत्तरी

प्र0 1. पाप किसे कहते हैं?

उ0 बुरे कार्य को पाप कहते हैं।

प्र0 2. पाप कितने होते हैं एवं कौन से हैं?

उ0 यूं तो पाप के अगणित भेद हैं, पर मुख्य पाप पाँच होते हैं- 1. हिंसा 2. झूठ 3. चोरी 4. कुशील 5. परिग्रह।

प्र0 3. हिंसा पाप किसे कहते हैं?

उ0 किसी जीव को दुख देना, सताना, पीड़ा पहुंचाना हिंसा पाप कहलाता है। जैसे-मच्छर काट रहा था, तो उसको मार दिया, यह हिंसा पाप है।

प्र0 4. हिंसा पाप से क्या हानि है?

उ0 हिंसा करने वालों को हिंसक, हत्यारा, कसाई कहते हैं और मृत्यु के बाद उन्हें अनेक दुख भोगने पड़ते हैं।

प्र0 5. झूठ पाप किसे कहते हैं?

उ0 जो पदार्थ जैसा देखा, सुना, वैसा न कहना झूठ पाप है। जैसे-प्रज्ञा ने मम्मी की पेटी में से दस रुपये चुपके से निकाल लिए। मम्मी ने पूछा-बेटी, क्या तुमने पेटी से रुपये निकाले हैं?.... तो प्रज्ञा ने कहा-नहीं। यह झूठ पाप है।

प्र0 6. झूठ बोलने से क्या हानि है?

उ0 झूठ बोलने वाले पर कोई विश्वास नहीं करता, लोग उसे दगाबाज और झूठा कहते हैं।

प्र0 7. चोरी पाप किसे कहते हैं?

उ0 किसी की गिरी हुई, रखी हुई, भूली वस्तु को बिना पूछे ले लेना चोरी पाप है। जैसे- माँ अलमारी में रसगुल्ला रखकर मन्दिर चली गई, इधर संगीता ने चुपके से दो रसगुल्ले निकालकर खा लिए, यह चोरी पाप हुआ।

प्र0 8. चोरी पाप करने से क्या हानि है?

उ0 चोरी करने वाले को सभी चोर, डाकू कहते हैं। उसे सभी शंका की निगाह से देखते हैं। पकड़े जाने पर कई बार जेल जाना पड़ता है।

प्र0 9. कुशील पाप किसे कहते हैं?

उ0 दूसरे की माँ, बहन को बुरी निगाह से देखना कुशील पाप है। जैसे-रावण ने सीता को कुदृष्टि से देखा, तो यह कुशील पाप है।

प्र0 10. कुशील पाप से क्या हानि है?

उ0 कुशील पाप करने वाले को व्यभिचारी कहते हैं, लोग उसकी निंदा करते हैं, राजा उसे दंड देता है।

प्र0 11. परिग्रह पाप किसे कहते हैं?

उ0 आवश्यकता से अधिक पदार्थों का संग्रह करना परिग्रह पाप कहलाता है, जैसे प्रतीक का दो पैन से काम चल सकता है, लेकिन वह आठ पैन रखता है तथा और पाने की इच्छा करता है, यह परिग्रह पाप है।

प्र0 12. पाप का फल क्या है?

उ0 पाप का फल नरक, तिर्यंच गति के दुख भोगना है।

प्र0 13. पाप का बाप कौन-सा है?

उ. लोभ पाप का बाप है।

प्र0 14. सबसे बड़ा पाप कौन-सा है?

उ0 सबसे बड़ा पाप परिग्रह है।

प्र0 15. लोभ पाप का बाप है तो पाप की माँ कौन है?

उ0 तृष्णा पाप की माँ है।

कषाय-परिचय और प्रश्नोत्तरी

प्र0 1. कषाय किसे कहते हैं?

उ0 जो अशुभ विचार आत्मा को कसे अर्थात् दु:ख दे, उसे कषाय कहते हैं।

प्र0 2. कषाय के कितने भेद हैं?

उ0 कषाय के चार भेद होते हैं (1) क्रोध (2) मान (3) माया (4) लोभ।

प्र0 3. क्रोध कषाय किसे कहते हैं?

उ0 गुस्से को क्रोध कषाय कहते हैं। जैसे-दिनेश ने अपने भाई से बैट बॉल के लिए पैसे मांगे, भाई ने नहीं दिये, तो दिनेश आँखें लाल कर उल्टासीधा बोलने लगा। यह क्रोध कषाय हुई।

प्र0 4. मान कषाय किसे कहते हैं?

उ0 घमण्ड करने को मान कषाय कहते हैं। जैसे-विभीषण ने रावण से कहा, 'भैया! राम के चरणों में प्रणाम करके उनसे क्षमा मांग लो और उनकी पत्नी सीता को उन्हें लौटा दो', पर रावण मान कषाय के वशीभूत होकर अपने हठ पर अड़ा रहा।

प्र0 5. माया कषाय किसे कहते हैं?

उ0 छल-कपट को माया कषाय कहते हैं। जैसे-सौरभ का मन पढ़ने में कम, खेलने में ज्यादा लगता है, सदा खेलता रहता है। किन्तु मां के आने पर उसे धोखा देने को पुस्तक पढ़ने लगता है, तो यह उसकी माया कषाय हुई।

प्र0 6. लोभ कषाय किसे कहते हैं?

उ0 लालच को लोभ कषाय कहते हैं। जैसे अहिंसा को एक पेंसिल की जरूरत है, लेकिन मम्मी से हठ करके बहुत-सी पेंसिलें खरीदवा लेती है, यह लोभ कषाय हुई।

प्र0 7. सबसे अच्छी और सबसे खराब कषाय कौन-सी है?

उ0 कषाय तो अच्छी होती ही नहीं है, चारों ही कषाय खराब होती हैं।

प्र0 8. कषाय-रहित जीव कौन से हैं?

उ0 अरिहंत और सिद्ध कषाय-रहित जीव हैं।

प्र0 9. हमें किसको किस गुण से जीतना चाहिए?

उ0 हमें क्रोध कषाय को क्षमा से जीतना चाहिए। मान कषाय को विनय से जीतना चाहिए। माया कषाय को सरलता से जीतना चाहिए। लोभ कषाय को संतोष से जीतना चाहिए।

प्र0 10. किस गति में किस कषाय की बहुलता (अधिकता) पाई जाती है?

उ0 नरक गति में क्रोध की, मनुष्य गति में मान की, तिर्यंच गति में माया की और देव गति में लोभ की बहुलता पाई जाती है।

प्र0 11. हमें कषाय क्यों नहीं करना चाहिए?

उ0 क्योंकि कषाय करने से आत्मा का पतन होता है, पाप का बंध होता है आत्मा दुर्गति में जाती है और कष्ट भोगना पड़ता है।

25 बोल

- गति 4
- जाति 5
- काया 6
- इन्द्रिय 5
- पर्याप्ति 6
- प्राण 10
- शरीर 5
- योग 15
- उपयोग 12
- कर्म 8
- गुणस्थान 14
- 6 इन्द्रियों के 23 विषय + 240
- मिथ्यात्व के 10 भेद
- छोटी नवतत्व के 115 भेद
- आत्मा 8
- दण्डक 24
- लेश्या 6
- दृष्टि 3
- ध्यान 4
- षटद्रव्य के 30 भेद
- राशी 2
- श्रावक के 12 व्रत
- साधु जी के 5 महाव्रत
- प्रत्याख्यान के 49 भांगे
- चारित्र 5

आत्मा (जीव) के भेद

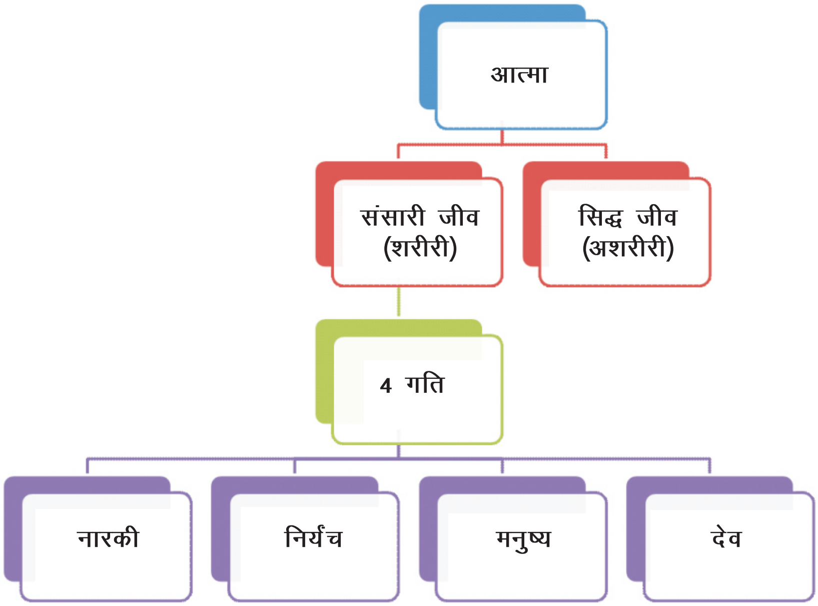

जाति 5

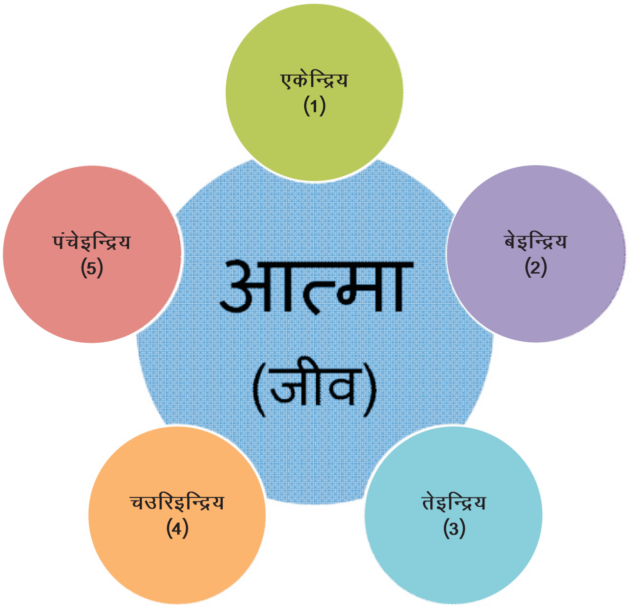

एकेन्द्रिय
(1)
बेइन्द्रिय
(2)
तेइन्द्रिय
(3)
चउरिइन्द्रिय
(4)
पंचेइन्द्रिय
(5)
आत्मा
(जीव)

काय 6

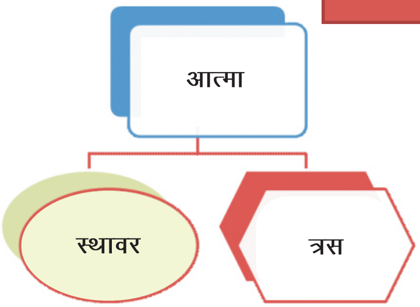

आत्मा
स्थावर
त्रस

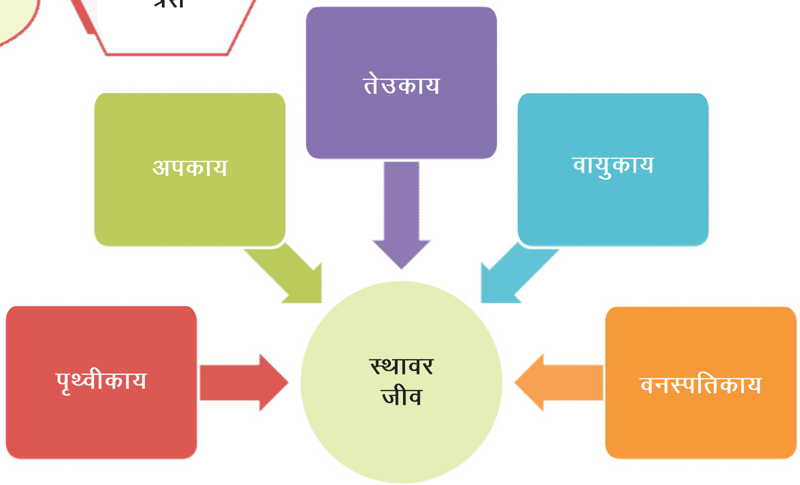

तेउकाय
अपकाय
वायुकाय
पृथ्वीकाय
स्थावर
जीव
वनस्पतिकाय

इन्द्रिय 5

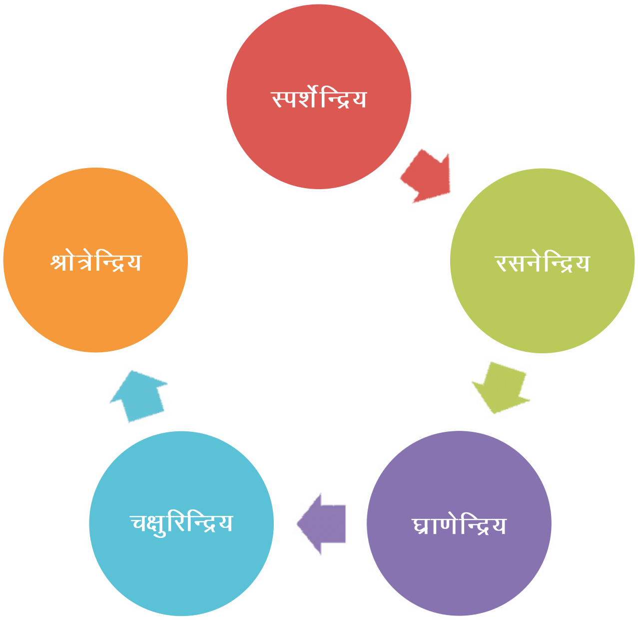

प्रयाप्ति 6

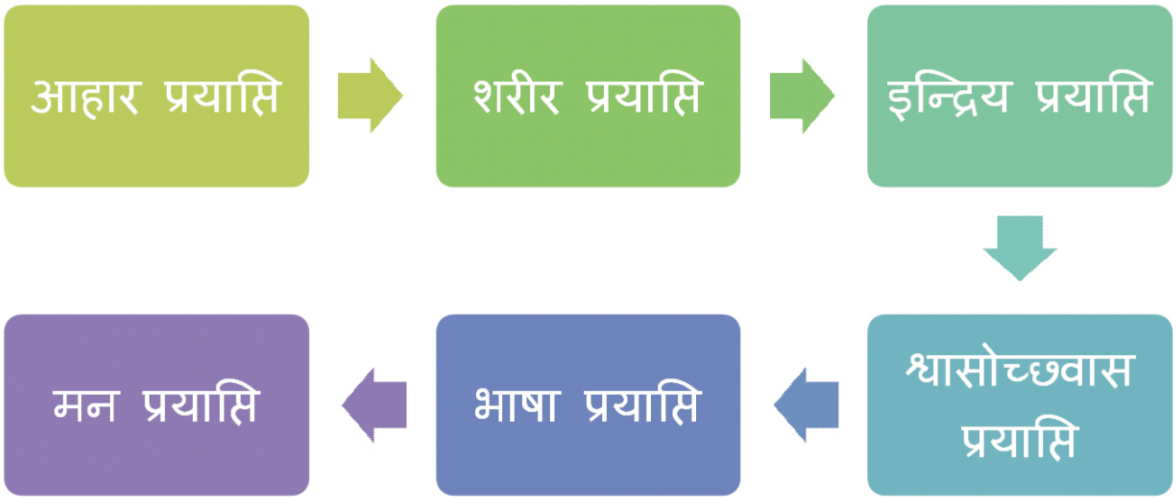

प्राण 10

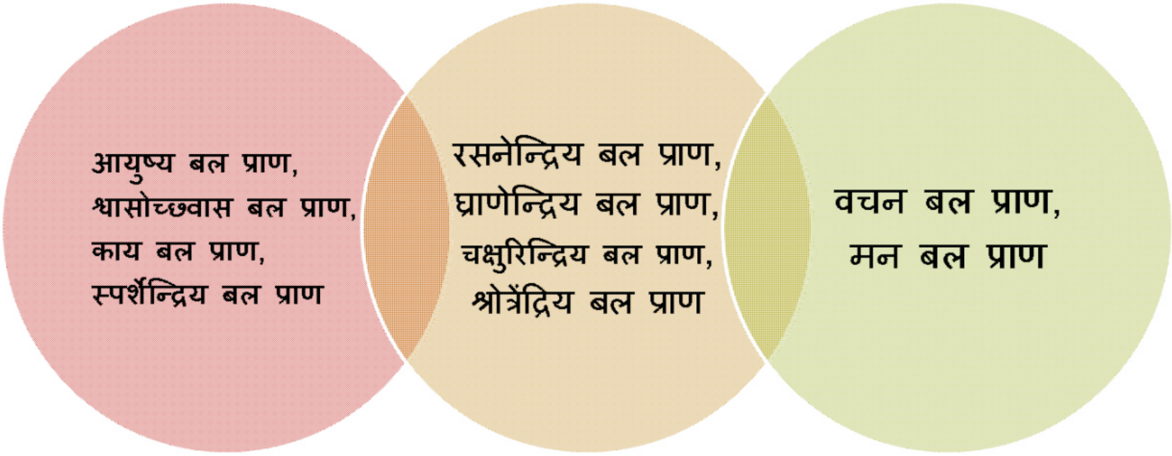
आयुष्य बल प्राण,
श्वासोच्छ्वास बल प्राण,
काय बल प्राण,
स्पर्शेन्द्रिय बल प्राण
रसनेन्द्रिय बल प्राण,
घ्राणेन्द्रिय बल प्राण,
चक्षुरिन्द्रिय बल प्राण,
श्रोत्रेंद्रिय बल प्राण
वचन बल प्राण,
मन बल प्राण

शरीर 5

औदारिक शरीर
वैक्रिय शरीर
कार्मण शरीर,
तेजस शरीर
आहारक शरीर

योग 15

4 मन के

- सत्य मनोयोग
- असत्य मनोयोग
- मिश्र मनोयोग
- व्यवहार मनोयोग

4 वचन के

- सत्य वचन योग
- असत्य वचन योग
- मिश्र वचन योग
- व्यवहार वचन योग

7 काया के

- औदारिक काय योग
- औदारिक मिश्र काय योग
- वैक्रिय काय योग
- वैक्रिय मिश्र काय योग
- आहारक काय योग
- आहारक मिश्र काय योग
- कार्मण काय योग

उपयोग 12

5 ज्ञान

- मति ज्ञान
- श्रुत ज्ञान
- अवधि ज्ञान
- मन:पर्यव ज्ञान
- केवल ज्ञान

3 अज्ञान

- मति अज्ञान
- श्रुत अज्ञान
- अवधि अज्ञान (विभंग ज्ञान)

4 दर्शन

- चक्षु दर्शन
- अचक्षु दर्शन
- अवधि दर्शन
- केवल दर्शन

कर्म 8

घाती 4

- ज्ञानावरणीय
- दर्शनावरणीय
- मोहनीय
  - दर्शन मोहनीय
  - चारित्र मोहनीय
- अंतराय

अघाती 4

- वेदनीय
  - साता वेदनीय
  - असाता वेदनीय
- नाम
  - शुभ नाम
  - अशुभ नाम
- गोत्र
  - उच्च गोत्र
  - नीच गोत्र
- आयुष्य
  - 1.देव 2.मनुष्य
  - 3. त्रियंच 4. नरक

गुणस्थान 14 (1-4)

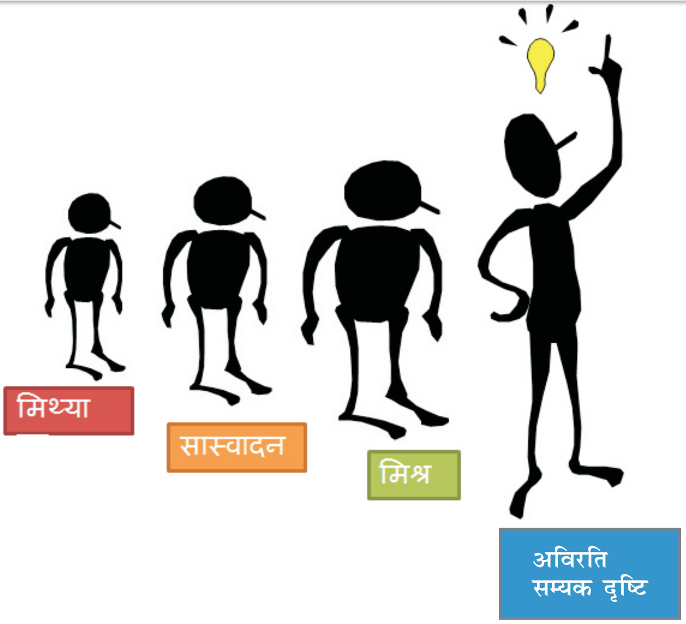

क्रमश:

गुणस्थान 14 (5,6,7)

देश विरति श्रावक

प्रमादी साधु

अप्रमादी साधु

गुणस्थान 14 (8-12)

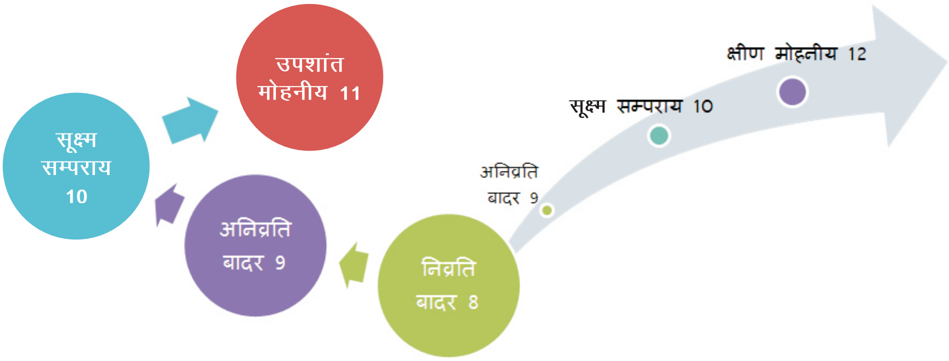

क्रमश:

गुणस्थान 14 (13-14)

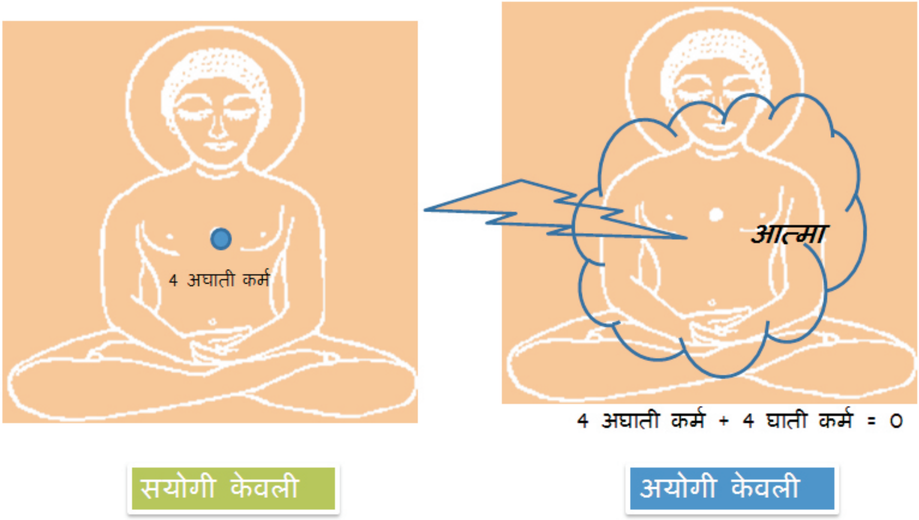

5 इंद्रियो के 23 विषय + 240 विकार

श्रोत्रेन्द्रिय के 3 विषय (+ 12 विकार)

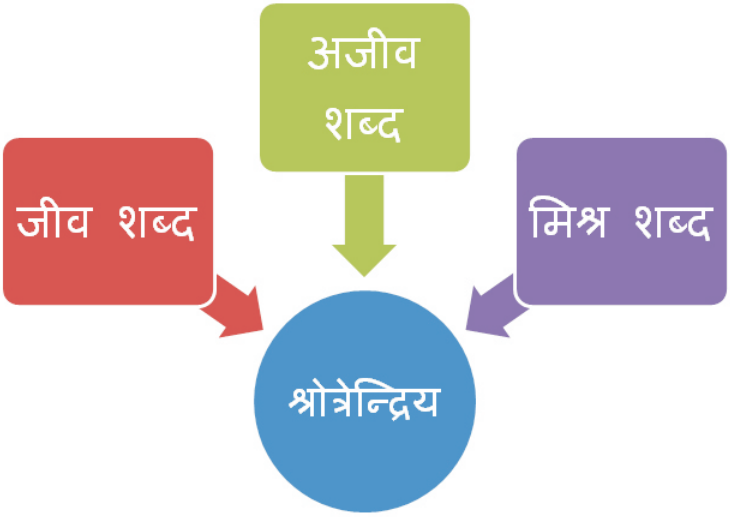

5 इंद्रियो के 23 विषय + 240 विकार

चक्षुरिन्द्रिय के 5 विषय (+ 60 विकार)

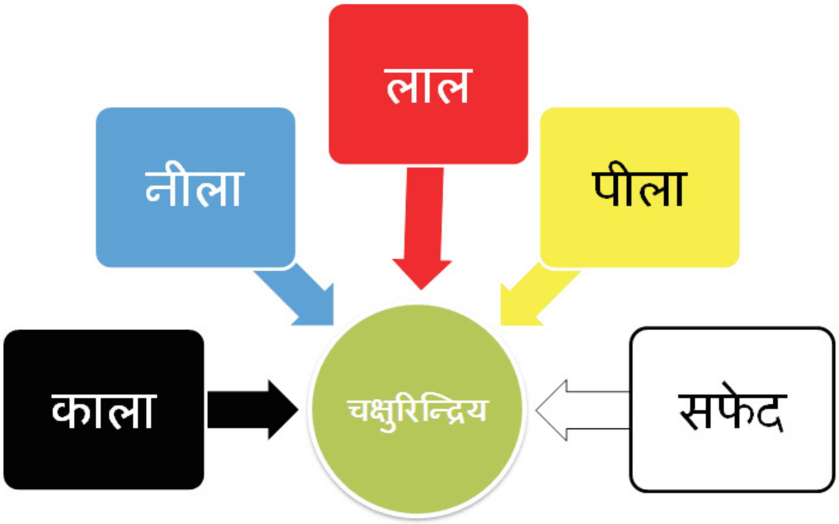

5 इंद्रियो के 23 विषय + 240 विकार

घ्राणेन्द्रिय के 2 विषय (+ 12 विकार)

5 इंद्रियो के 23 विषय + 240 विकार

↓

रसनेन्द्रिय के 5 विषय (+ 60 विकार)

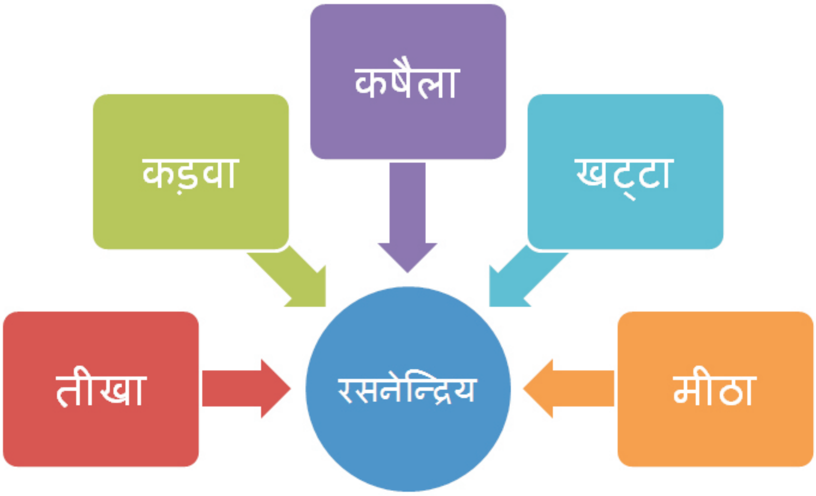

5 इंद्रियो के 23 विषय + 240 विकार

↓

स्पर्शेन्द्रिय के 8 विषय (+ 96 विकार)

मिथ्यात्व के 10 भेद

- जीव को अजीव समझना
- अजीव को जीव समझना

- धर्म को अधर्म समझना
- अधर्म को धर्म समझना

- साधु को असाधु समझना
- असाधु को साधु समझना

- मोक्ष मार्ग को संसार मार्ग समझना
- संसार मार्ग को मोक्ष मार्ग समझना

- कर्मो से मुक्त को अमुक्त समझना
- कर्मो से अमुक्त को मुक्त समझना

छोटी नवतत्व के 115 भेद
(नवतत्व के संक्षिप्त भेद)

जीव के 14 (सुक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त आदि)

अजीव के 14 (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, अकाशास्तिकाय, काल, पुद्‌गलास्तिकाय इत्यादि)

पुण्य के 9 (अन्न, पान, लयण, शयन, वस्त्र, मन, वचन, काया, नमस्कार)

पाप के 18 (हिंसा, झूठ, चोरी, कामभोग, परिग्रह, क्रोध, मान इत्यादि)

आस्रव के 20 (मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग इत्यादि)

संवर के 20 (सम्यक्त्व, विरति, अप्रमाद, अकषाय, अयोग इत्यादि)

निर्जरा के 12 (6 बाह्य तप, 6 आभ्यंतर तप)

बंध के 4 (प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश)

मोक्ष के 4 (सम्यक ज्ञान, सम्यक दर्शन, सम्यक चारित्र, सम्यक तप)

आत्मा के 8 भेद

दण्डक 24

लेश्या 6

दृष्टि 3

ध्यान 4

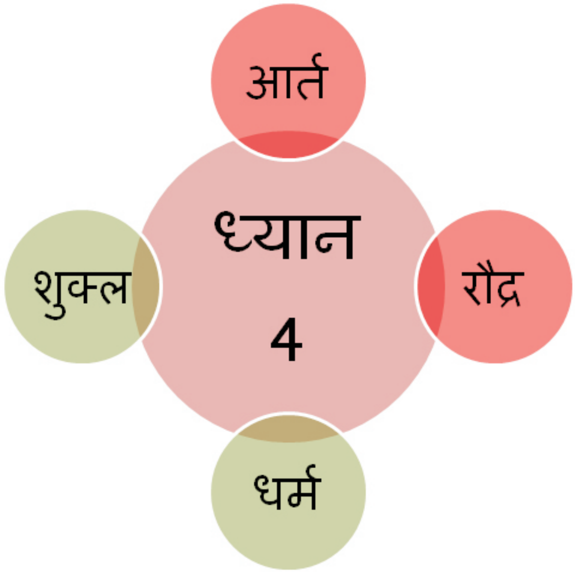

षट्द्रव्य के 30 भेद

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण

राशि 2

- राशि
  - जीव राशि के 563 भेद
    - नारकी 14
    - त्रिर्यच 48
    - मनुष्य 303
    - देव 198
  - अजीव राशि के 560 भेद
    - अरुपी अजीव 30
    - रुपी अजीव 530

श्रावक के 12 व्रत

मुख्यव्रत (5)

- अहिंसा अणुव्रत
- सत्य अणुव्रत
- अचौर्य अणुव्रत
- ब्रह्मचर्य अणुव्रत
- अपरिग्रह अणुव्रत

गुणव्रत (3)

- दिशा परिमाण
- उपभोग परिमाण
- अनर्थदंड विरमण

शिक्षा व्रत (4)

- सामायिक
- देशावगासिक
- पौषध
- अतिथि संविभाग

साधु/ साध्वी के 5 महाव्रत

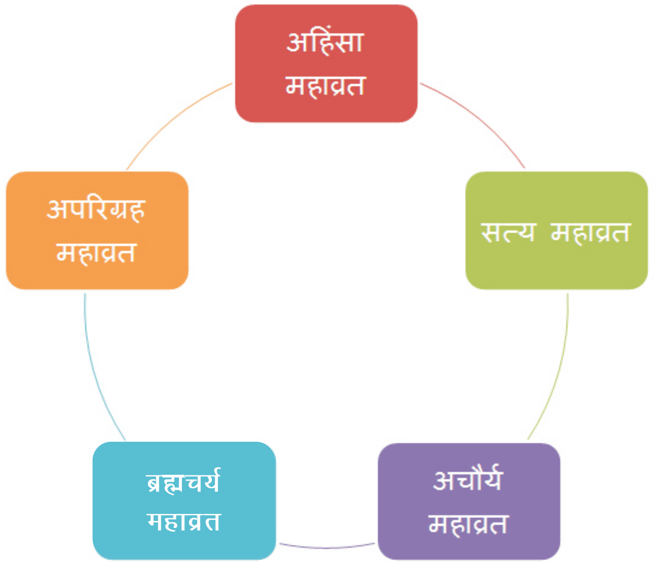

प्रत्याख्यान के 49 भांगे

करना, कराना, समर्थन = करण

मन, वचन, काया= योग

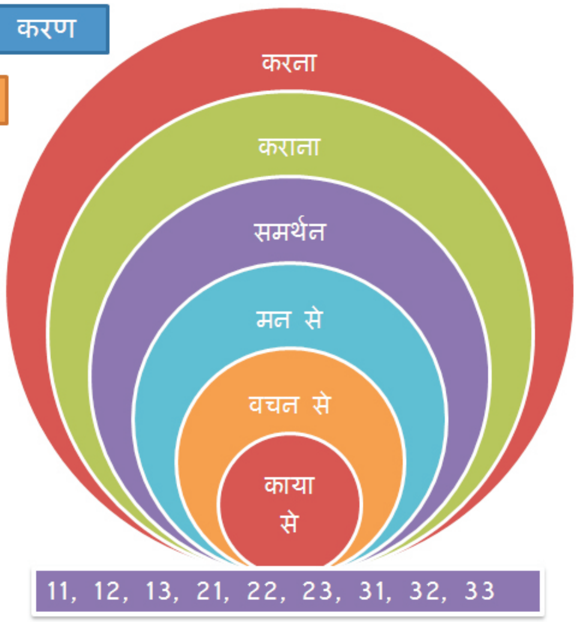

चारित्र 5

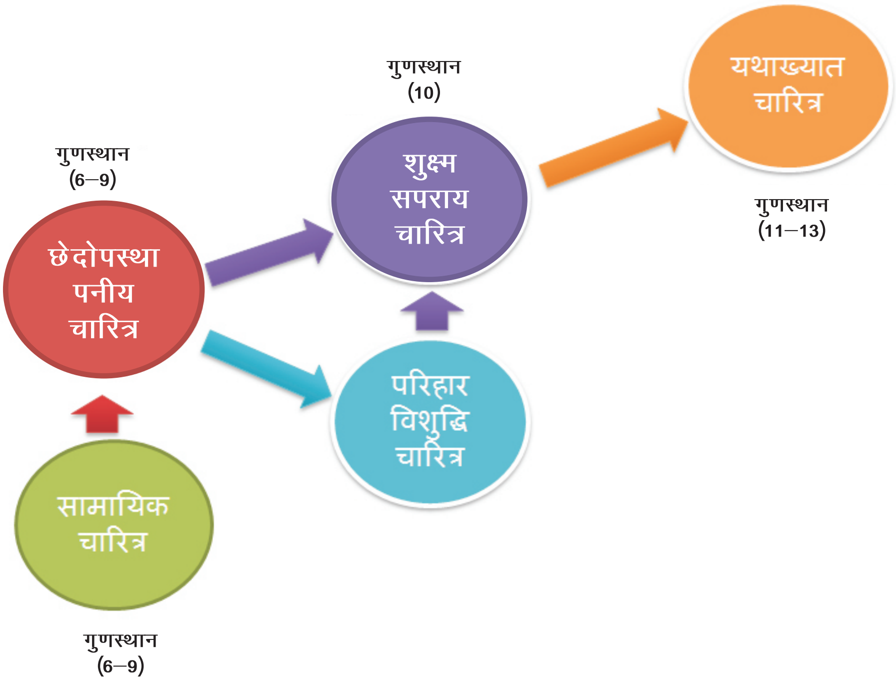
गुणस्थान
(10)
यथाख्यात चारित्र
गुणस्थान
(6–9)
शुक्ष्म सपराय चारित्र
गुणस्थान
(11–13)
छेदोपस्थापनीय चारित्र
परिहार विशुद्धि चारित्र
सामायिक चारित्र
गुणस्थान
(6–9)

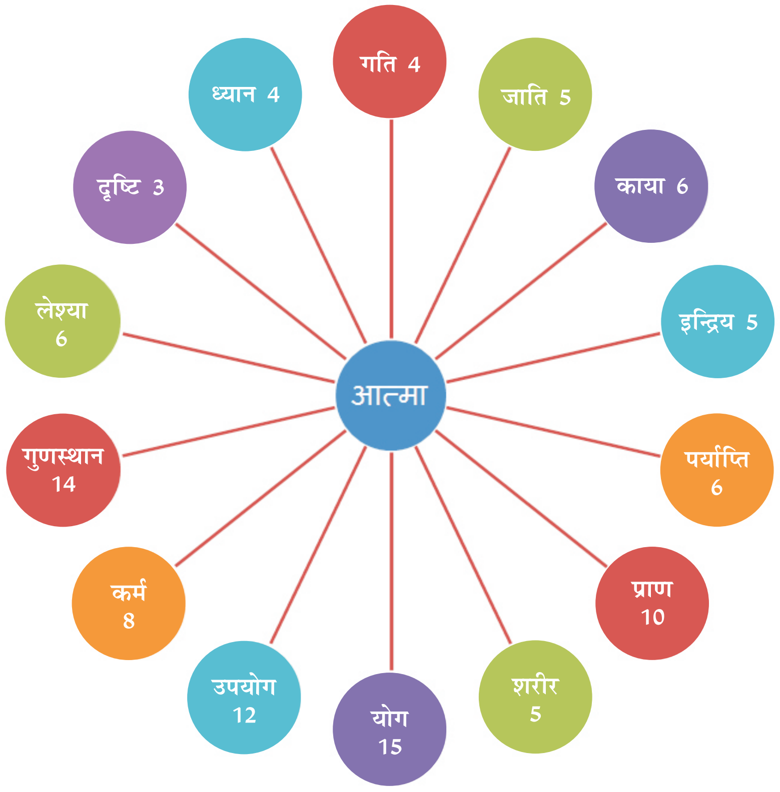
आत्मा
गति 4
जाति 5
काया 6
इन्द्रिय 5
पर्याप्ति 6
प्राण 10
शरीर 5
योग 15
उपयोग 12
कर्म 8
गुणस्थान 14
लेश्या 6
दृष्टि 3
ध्यान 4

तत्व के 9 भेद

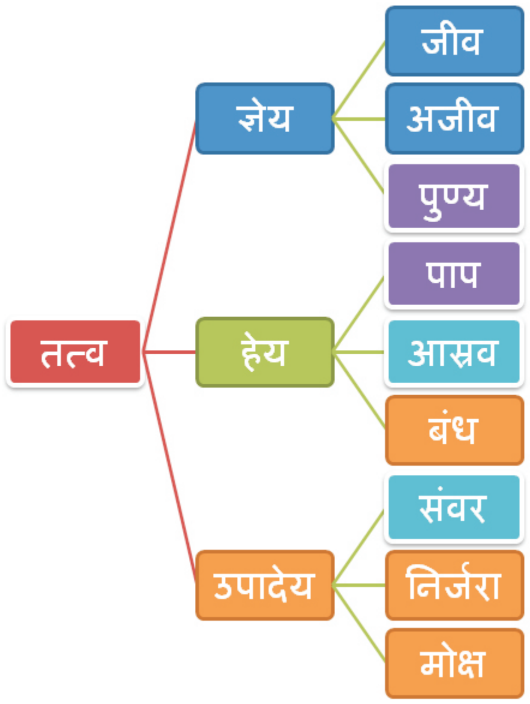
तत्व
ज्ञेय
हेय
उपादेय
जीव
अजीव
पुण्य
पाप
आस्रव
बंध
संवर
निर्जरा
मोक्ष

25 बोल के आधार पर कुछ बोलों का वर्णन

पहला बोल

गति-4

इस संसार में जितने भी जीव हैं, वे चार प्रकार की गतियों (जन्म-स्थानों) में जन्म ग्रहण करते हैं। चार गति के नाम ये हैं- 1. नरक गति, 2. तिर्यंच गति, 3. मनुष्य गति, 4. देव गति।

1. **नरक गति**- यह लोक के अधोभाग में स्थित है। नरक सात हैं। यहाँ पैदा होने वाले जीव नारकी कहलाते हैं। अपने द्वारा किए गए अशुभ कर्मों के फलस्वरूप नारकी जीव यहाँ हजारों वर्षों तक दुःख भोगते हैं।

   मांस-अण्डा खाने से, शराब पीने से, जुआ-शिकार खेलने से, पर-पुरुष व पर-नारी पर कुदृष्टि रखने से, बहुत जीवों की हिंसा करने से, बहुत परिग्रह (धन) इकट्ठा करने से जीव नरक गति में जाते हैं।

2. **तिर्यंच गति**-यह लोक के मध्यभाग में स्थित है। पशु, पक्षी, कीट, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा वनस्पति के जीव तिर्यंचगति के जीव कहलाते हैं। झूठ बोलने से, ठगी- चोरी बेईमानी करने से जीव तिर्यंच गति में जाते हैं।

3. **मनुष्य गति**- यह भी लोक के मध्य भाग में स्थित है। हम सब मानव मनुष्य गति के ही जीव हैं। मन में सरलता रखने से, सब के प्रति विनय और आदरभाव रखने से, ईर्ष्या व द्वेष नहीं रखने से, दान, शील, तप व दया का आचरण करने से जीव को मनुष्य गति मिलती है।

4. **देव गति**- यह ऊर्ध्वलोक में स्थित है। देवगति में जन्म लेने वाले जीव देव या देवता कहलाते हैं। वे वहाँ अक्षय (कभी समाप्त न होने वाले) सुखों का भोग करते हैं।

संयम का पालन करने से, साधु व श्रावक के व्रत ग्रहण करने से, तप करने से, आए हुए कष्टों को समभाव-पूर्वक सहन करने से जीव देवगति में जाते हैं।

चौथा बोल

इन्द्रिय 5

प्र0 1. इन्द्रिय किसे कहते हैं?

उ0 ज्ञान के साधन-भूत अंग को इन्द्रिय कहते हैं।

प्र0 2. इन्द्रियाँ कितनी एवं कौन-कौन सी हैं?

उ0 इन्द्रियाँ 5 हैं- 1. स्पर्शन 2. रसना 3. घ्राण 4. चक्षु: 5. श्रोत्र।

प्र0 3. स्पर्शन इन्द्रिय किसे कहते हैं?

उ0 जो पदार्थ को छूकर स्पर्श का ज्ञान करती है, उसे स्पर्शन इन्द्रिय कहते हैं जैसे- हलका, भारी, रूखा, चिकना, कठोर, नर्म, शीत, ऊष्ण। इसे त्वचा भी कहते हैं।

प्र0 4. रसना इन्द्रिय किसे कहते हैं?

उ0 जो चखकर पदार्थ के स्वाद का ज्ञान करती है, उसे रसना इन्द्रिय कहते हैं। जैसे- खट्टा, मीठा, कड़वा, कषायला, चटपटा। इसे जिहवा भी कहते हैं।

प्र0 5. घ्राण इन्द्रिय किसे कहते हैं?

उ0 जो सूंघकर पदार्थ की गंध का ज्ञान करती है, उसे घ्राण इन्द्रिय कहते हैं। जैसे-सुगंध, दुर्गंध। इसे नाक भी कहते हैं।

प्र0 6. चक्षु: इन्द्रिय किसे कहते हैं?

उ0 जो देखकर पदार्थ के रंग का ज्ञान करती है, उसे चक्षु: इन्द्रिय कहते हैं। जैसे- काला, नीला, लाल, पीला, सफेद। इसे नेत्र या आंख भी कहते हैं।

प्र0 7. श्रोत्र इन्द्रिय किसे कहते हैं?

उ0 जो सुनकर शब्द का ज्ञान करती हैं, उसे श्रोत्र इन्द्रिय कहते हैं। जैसे- सा, रे, ग, म, प, ध, नि। इसे कान भी कहते हैं।

प्र0 8. किन जीवों के कितनी इन्द्रियां हैं?

उ0 पृथ्वी, वृक्ष आदि के एक इन्द्रिय (स्पर्शन) हैं।
लट, केंचुआ आदि के दो इन्द्रिय (स्पर्शन, रसना) हैं।
चींटी, खटमल आदि के तीन इन्द्रिय (स्पर्शन, रसना, घ्राण) हैं।
मक्खी, मच्छर आदि के चार इन्द्रिय (स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु:) हैं।
मनुष्य, हाथी, देव, नारकी के पाँचों इन्द्रिय हैं।

प्र0 9. क्या काना व्यक्ति साढ़े चार इन्द्रिय वाला है?

उ0 नहीं, काना व्यक्ति साढ़े चार इन्द्रिय वाला जीव नहीं, अपितु पंचेन्द्रिय जीव है।

प्र0 10. सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण इन्द्रिय कौन सी है?

उ0 रसना इन्द्रिय सबसे ज्यादा महत्तवपूर्ण है।

प्र0 11. रसना इन्द्रिय के दो-दो काम कौन से हैं?

उ0 1 चखना, 2. बोलना।

प्र0 12. आपने ज्यों ही रसगुल्ला जीभ पर रखा, त्यों ही गरम-गरम लगा, तो किस इन्द्रिय का विषय बना?

उ0 स्पर्शन इन्द्रिय का।

प्र0 13. चींटी की आंखें तो हैं नहीं, फिर वह चीनी के डिब्बे के पास कैसे पहुंच जाती है?

उ0 घ्राण इन्द्रिय के बल पर चींटी चीनी के डिब्बे के पास पहुंच जाती है।

प्र0 14. पाँचों इन्द्रिय के विषय में कौन-कौन से जीव आसक्त हैं?

उ0 स्पर्शन इन्द्रिय में हाथी। रसना इन्द्रिय में मछली। घ्राण इन्द्रिय में भ्रमर। चक्षु: इन्द्रिय में पतंगा। श्रोत्र इन्द्रिय में हिरण। विशेष:-ये जीव एक-एक इन्द्रिय के विषय में आसक्त होकर प्राण गँवा देते हैं, तो उस जीव (मनुष्य) की क्या दशा होगी, जो पाँचों इन्द्रियों के विषयों में आसक्त है।

22वां बोल

जैन श्रावक के 12 व्रत

पांच अणुव्रत-

1. अहिंसा अणुव्रत 2. सत्य अणुव्रत 3. अस्तेय अणुव्रत 4. ब्रह्मचर्य अणुव्रत 5. अपरिग्रह अणुव्रत

तीन गुणव्रत

6. दिशा-परिमाण व्रत 7. भोगोपभोग-परिमाण व्रत 8. अनर्थदण्ड-विरमण व्रत

चार शिक्षाव्रत-

9. सामायिक व्रत 10. देशावकाशिक व्रत 11. पौषध व्रत 12. अतिथि-संविभाग व्रत।

1. अहिंसा अणुव्रतः चलते-फिरते निरपराध प्राणी को जान-बूझकर नहीं मारना। न ही मारने की प्रेरणा देना। पहला व्रत ग्रहण करने से सब जीवों के प्रति मैत्री-भावना बढ़ती है।
2. सत्य अणुव्रतः किसी निर्दोष प्राणी की हिंसा हो या वह कष्ट में फंस जाये, वैसा असत्य नहीं बोलना। लेन-देन के मामले में प्रामाणिकता रखना।
3. अस्तेय अणुव्रतः जिस चोरी से राज्य-दण्ड मिले, लोग निन्दा करें, ऐसी चोरी का त्याग करना।
4. ब्रह्मचर्य अणुव्रतः जीवन में कामुकता को निरन्तर कम करना। पर-स्त्री सेवन का त्याग। अपनी स्त्री की मर्यादा करना।
5. अपरिग्रह अणुव्रतः सोना, चांदी, मकान, धन, वस्त्र आदि परिग्रह की मर्यादा करना।
6. दिशा-परिमाण व्रतः पूर्व, पश्चिम आदि दिशाओं की सीमा बांधकर, उसके बाहर हर तरह के पाप-कार्य का त्याग करना।
7. भोगोपभोग-परिमाण व्रतः अतिहिंसक व्यापार का त्याग करना तथा भोजन, वस्त्र एवं उपयोग में लाने योग्य वस्तुओं की मर्यादा करना।
8. अनर्थ-दण्ड-विरमण व्रतः बिना प्रयोजन हिंसा, झूठ की प्रवृत्ति नहीं करना, जैसे फूल-पत्ती तोड़ना, आतिशबाजी छोड़ना, नाच, गान, भंगड़ा डालना व्यर्थ पानी बहाना आदि।
9. सामायिक व्रतः 48 मिनट तक पाप- क्रिया का त्याग कर, स्वभाव में स्थिर होने का अनुष्ठान करना।
10. देशावकाशिक व्रतः निश्चित समय के लिए, ग्रहण किये हुए पूर्वोक्त व्रतों को और भी संकुचित करना। द्रव्यों की मर्यादा करना।
11. पौषध व्रतः एक दिन-रात (8 प्रहर) के लिये अन्न-जल का त्याग कर, कोई भी पापयुक्त सांसारिक प्रवृत्ति नहीं करना।
12. अतिथ-संविभाग व्रतः साधु-साध्वी को निर्दोष शुद्ध दान देने की भावना रखना।

23वां बोल

जैन साधु के पाँच महाव्रत

जीवन भर के लिए धारण और पालन की जाने वाली बड़ी और कठोर प्रतिज्ञाओं को महाव्रत कहते हैं। जैन साधु और साध्वियां दीक्षा लेते समय इन पाँच महाव्रतों को ग्रहण करते हैं-

1. अहिंसा महाव्रतः- चार गति, चौरासी लाख जीव योनि के सभी सूक्ष्म और स्थूल जीवों की न स्वयं हिंसा करना, न अन्य से करवाना, न हिंसा करने वाले व्यक्ति का अनुमोदन (समर्थन) करना, मन से, वचन से और काया से, जीवन भर के लिए।

2. सत्य महाव्रतः- क्रोध से, लोभ से, भय से या हँसी से न कभी स्वयं मिथ्या भाषण करना, न करवाना, न मिथ्या भाषण करने वाले का अनुमोदन करना, मन से, वचन से और काया से, जीवन भर के लिए।

3. अचौर्य महाव्रतः- इसे अस्तेय महाव्रत भी कहते हैं। स्वामी की आज्ञा के बिना तृण मात्र वस्तु भी न स्वयं ग्रहण करना, न करवाना, न ग्रहण करने वाले का अनुमोदन करना, मन से, वचन से और काया से, जीवनभर के लिए।

4. ब्रह्मचर्य महाव्रतः- देव-संबंधी, मनुष्य-संबंधी या पशु-पक्षी-संबंधी किसी भी विजातीय स्त्री-पुरुष के प्रति वासनामयी दृष्टि न रखना, न रखने वाले का अनुमोदन करना, मन से, वचन से, काया से, जीवनभर के लिए।

5. अपरिग्रह महाव्रतः- वस्त्र, पात्र या अन्य उपकरणों के प्रति राग-भाव नहीं रखना। अनावश्यक वस्तुओं का संग्रह न करना, न करवाना, न करने वाले का अनुमोदन करना, मन से, वचन से, काया से, जीवनभर के लिए।

विशेषः- इन पाँच महाव्रतों के अतिरिक्त एक छठा व्रत 'रात्रि-भोजन-विरमण-व्रत' भी है। वैसे यह अहिंसा महाव्रत का ही का ही एक पूरक अंग है। सूर्यास्त से लेकर सूर्योदय तक (अर्थात् सम्पूर्ण रात्रि) चारों प्रकार के आहार-अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य को न खाना, न पीना, न अन्य को खिलाना, न खाने वाले का अनुमोदन करना, मन से, वचन से काया से, जीवन भर के लिए।

10वां बोल

कर्म आठ

जीव के दो भेद हैं- सिद्ध और संसारी। ये दो भेद कर्मों के कारण हैं। सिद्ध जीव सर्व कर्मों से रहित होने से शाश्वत मोक्ष में विराजमान हैं। संसारी जीव आठ कर्मों से बंधे हैं। जैसे सूर्य पर बादल छा जाते हैं, दीवार पर रोगन चिपक जाता है और चिकने शरीर पर धूलि जम जाती है, उसी प्रकार यह जीवात्मा कर्मरूपी आवरण से ढ़क जाती है। कर्म अपने स्वभाव के अनुसार जीव को विभिन्न फल देते हैं। जीव-आत्मा को कर्म करने व उसका फल भोगने के लिए शरीर के माध्यम की जरूरत होती है। शरीर में स्थित मन-वचन-काया रूपी तीन योगों के स्पन्दन (हलचल) से कर्मरूपी धूली आत्म-प्रदेशों की तरफ आकृष्ट होती है और राग-द्वेष का बल पाकर वह आत्मा से चिपक जाती है। निश्चित समय आने पर कर्म आत्मा को शुभ-अशुभ फल देते हैं। आत्मा के आठ गुण हैं- 1. अनन्त ज्ञान 2. अनन्त दर्शन 3. अव्याबाध (बाधा-रहित) सुख 4. क्षायिक सम्यक्त्व, 5. अटल अवगाहना 6. अमूर्तता 7. अगुरुलघु भाव 8. अनन्त बल। इनका आवरण करने वाले कर्म भी क्रमशः आठ हैं-1. ज्ञानावरणीय 2. दर्शनावरणीय 3. वेदनीय 4. माहनीय 5. आयु 6. नाम 7. गोत्र 8. अन्तराय। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है-

1. **ज्ञानावरणीय कर्म**- आत्मा अनन्त ज्ञान का पुंज है। यह कर्म आत्मा के ज्ञान-गुण (विशेष ज्ञान) पर पर्दा डालता है। इसका स्वभाव आंखों पर बंधी पट्टी के समान है।
2. **दर्शनावरणीय कर्म**- यह आत्मा के दर्शन-गुण (सामान्य ज्ञान) को रोकता है। इसका स्वभाव राजा का दर्शन रोकने वाले द्वारपाल के तुल्य है। नींद भी इसी कर्म के उदय से आती है।
3. **वेदनीय कर्म**- यह आत्मा को भौतिक सुख-दुख प्रदान करता है। इसका स्वभाव शहद से लिपटी हुई तलवार के समान है। पहले शहद का मजा, फिर जीभ कटने का दुःख। ऐसे ही सांसारिक सुख-भोग हैं।
4. **मोहनीय कर्म**- यह आत्मा के स्वरूप-दर्शन और स्वरूप-प्राप्ति में बाधा डालता है। सम्यक् श्रद्धा को रोकता है और चारित्र-प्राप्ति नहीं होने देता। इसका स्वभाव मदिरा के समान है। मिथ्यात्व, चार कषाय, विषय-वासना सब इसी के कारण हैं।
5. **आयु कर्म**- आत्मा स्वभाव से अजर-अमर है, किन्तु इस कर्म के कारण आत्मा शरीर-रूप में जन्मती-मरती है। इसके होने से ही शरीर जीवित रहता है और इसके समाप्त होने से मृत्यु हो जाती है। इसका स्वभाव कारागार (जेल) के समान है।
6. **नाम कर्म**- यह आत्मा को अनेक प्रकार के शरीर, इन्द्रिय, अंगोपांग, संस्थान, वर्ण आदि प्रदान करता है। इसका स्वभाव चित्रकार के तुल्य है।
7. **गोत्र कर्म**- यह आत्मा को ऊंचे, नीचे अनेकविध कुलों में जन्म दिलाता है। इसका स्वभाव कुम्हार के समान है।
8. **अन्तराय कर्म**- यह आत्मा की दान, लाभ, भोग, उपभोग और बल-रूप शक्तियों में बाधा डालता है। इसका स्वभाव राज-भण्डारी (खजांची) के तुल्य है। इन आठ कर्मों में ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय, ये चार कर्म आत्मा के मूल-गुणों का घात करते हैं, इसलिए ये घाती कर्म कहलाते हैं। इनको नष्ट करने के उपरान्त केवल-ज्ञान की प्राप्ति होती है। शेष चार कर्म अघाती हैं। ये शरीर से सम्बन्ध रखते हैं। ये केवल-ज्ञान होने में बाधा नहीं डालते। केवली भगवान की आयु पूरी होने पर ये चारों स्वतः समाप्त हो जाते हैं।

नव तत्व

प्र0 1. तत्व किसे कहते हैं?

उ0 1. सत्य वस्तु को तत्व कहते हैं, जैसे दूध को दूध कहना।

2. वस्तु का स्वभाव भी तत्व कहलाता है, जैसे अग्नि का स्वभाव उष्ण है, यह तत्व हुआ।

3. मोक्ष-प्राप्ति के लिए अवश्य रूप से जानने-योग्य विषयों को भी तत्व कहते हैं, ये नौ हैं।

प्र0 2. नौ तत्व कौन-कौन से हैं?

उ0 जीव तत्व, अजीव तत्व, पुण्य तत्व, पाप तत्व, आस्रव तत्व, संवर तत्व, निर्जरा तत्व, बन्ध तत्व, मोक्ष तत्व।

प्र0 3. नौ तत्वों की परिभाषा लिखिए।

उ0 1. **जीव**-जो जीता है, प्राण धारण करता है, चेतना-शक्ति से सम्पन्न है, वह जीव कहलाता है, यथा हाथी, घोड़ा, पशु, पक्षी, मनुष्य आदि।

2. **अजीव**-जो जीव का विरोधी तत्व है, अर्थात् जीवित नहीं रहता तथा चैतन्य-शक्ति से रहित है, वह अजीव कहलाता है, जैसे-मेज, कुर्सी, पलंग आदि।

3. **पुण्य**-जिस शुभ क्रिया से जीव को कालान्तर में सुख मिलता है, वह पुण्य कहलाता है, जैसे-अन्न-दान, जल-दान, वस्त्र-दान आदि।

4. **पाप**-जिस अशुभ क्रिया से जीव को कालान्तर में दुख मिलता है, वह पाप कहलाता है, जैसे- हिंसा, झूठ, चोरी आदि।

5. **आस्रव**-जिन मार्गों से आत्मा में कर्मों का प्रवेश होता है, वे आस्रव कहलाते हैं, जैसे-मिथ्यात्व -(धर्मविषयक विपरीत ज्ञान), अविरति -(सांसारिक विषय-भोगों को न त्यागना) प्रमाद (धर्म-कार्यों में आलस्य), कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ) आदि।

6. **संवर**-जिन मार्गों से आत्मा में कर्मों का प्रवेश रुकता है, वे संवर कहलाते हैं, जैसे सम्यक्त्व, विरति, अप्रमाद, अकषाय आदि।

7. **निर्जरा**-आत्मा से लगे कर्मों का कुछ अंश में अलग होना निर्जरा कहलाती है। अनशन (अन्न, जल का त्याग) ऊनोदरी (भूख से कम खाना) आदि निर्जरा के उपाय हैं।

8. **बन्ध**-दूध और पानी की तरह, घी और खिचड़ी की तरह आत्मा और कर्मों का एकमेक होकर बंध जाना बन्ध कहलाता है।

9. **मोक्ष**-आत्मा से सम्पूर्ण कर्मों का पृथक् हो जाना मोक्ष कहलाता है। मोक्ष हो जाने के बाद आत्मा का जन्म-मरण रूप भव-भ्रमण समाप्त हो जाता है। इन नौ तत्वों में जीव व अजीव ज्ञेय (जानने योग्य) संवर, निर्जरा व मोक्ष उपादेय (ग्रहण करने योग्य) हैं। पाप, आस्रव व बन्ध हेय (छोड़ने योग्य) हैं। पुण्य तत्व सांसारिक दृष्टि से उपादेय है, परन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से हेय है।

बत्तीस शास्त्र (आगम)

जगत् के सब जीवों की रक्षा और दया के लिए तीर्थंकर भगवान् धर्म-देशना देते हैं। भगवान् की यह वाणी सूत्र, शास्त्र या आगम कहलाती है।

आगम के तीन भेद हैं- सूत्रागम, अर्थागम और उभयागम। 'धम्मो मंगलमुक्किट्ठं-' यह मूल पाठ सूत्रागम है। 'धर्म उत्कृष्ट मंगल है' यह अर्थागम है। दोनों मिलकर उभयागम या तदुभयागम कहलाते हैं। तीर्थंकर भगवान् अर्थरूप आगम की देशना देते हैं, उनके प्रधान शिष्य (गणधर) उनको सूत्र-रूप में ग्रथित करते हैं। इनके आधार पर कुछ विशिष्ट-ज्ञानी आचार्य अन्य सुत्रों की भी रचना करते हैं।

तीर्थंकर प्रभु का सम्पूर्ण उपदेश बारह अंगों में समाविष्ट होता है। उस उपदेश को उनके गणधर यत्नपूर्वक संभाल कर रखते हैं, इसलिए सम्पूर्ण शास्त्र-भंडार 'द्वादशांग-गणि-पिटक' कहलाता है।

भगवान् महावीर स्वामी ने भी तीर्थ-स्थापना करते हुए गौतम आदि 11 गणधरों को द्वादशांग-वाणी का उपदेश दिया। वीर-निर्वाण के 1000 वर्ष बाद 12 वां अंग 'दृष्टिवाद' काल-प्रभाव से लुप्त हो गया। अन्य 11 आगमों के भी बहुत से पाठ समाप्त हो गए। सिन्धु में से बिन्दु-मात्र ही शेष रहा।

वर्तमान में 11 पूर्वोक्त एवं 21 अन्य, कुल 32 आगम उपलब्ध हैं। इनकी भाषा अर्धमागधी प्राकृत है। स्थानकवासी व तेरापन्थी सम्प्रदाय इनको मान्य करते हैं। श्वेताम्बर मूर्तिपूजक इन 32 के अतिरिक्त 13 और, कुल 45 आगम मानते हैं। दिगम्बर इनको स्वीकार नहीं करते। समयसार, नियमसार, प्रवचनसार, अष्ट-पाहुड आदि उनके शास्त्र हैं। 32 आगम पांच भागों में विभक्त हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं-

(A) 11 अंग-सूत्र

1. आचारांग 2. सूत्रकृतांग 3. स्थानांग 4. समवायांग 5. व्याख्या-प्रज्ञप्ति (भगवती) 6. ज्ञाताधर्म-कथांग 7. उपासक-दशांग 8. अन्तकृद्-दशांग 9. अनुत्तरौपपातिक 10. प्रश्न-व्याकरण 11. विपाक श्रुत।

(B) 12 उपांग-सूत्र

1. उववाई 2. राय-पसेणी 3. जीवाजीवाभिगम 4. प्रज्ञापना 5. जम्बूद्वीप- प्रज्ञप्ति 6. चन्द्र-प्रज्ञप्ति 7. सूर्य-प्रज्ञप्ति 8. निरयावलिया 9. कप्पवडंसिया 10. पुप्फिया 11. पुप्फचूलिया 12. वण्हिदसा।

(C) 4 छेद-सुत्र

1. व्यवहार 2. बृहत्कल्प 3. निशीथ 4.दशा-श्रुतस्कन्ध।

(D) 4 मूल-सूत्र

1. दशवैकालिक 2. उत्तराध्ययन 3. नन्दी 4. अनुयोगद्वार।

(E) 1. आवश्यक-सूत्र।

इन 32 शास्त्रों के मूल, अर्थ या उभय का स्वाध्याय करने से ज्ञानावरण-कर्म का क्षय होता है, मोहनीय-कर्म की श्रृंखलाएं टूटती हैं और विकास करती-करती आत्मा अरिहन्त और सिद्ध अवस्था को प्राप्त करती है।

भ0 महावीर के मुख्य सूत्र (प्राकृत भाषा में)

शास्त्र-प्रसिद्ध कुछ सूत्र

1. अहिंसा-सूत्र

1. तुमंसि नाम सच्चेव जं हंतव्वं ति मन्नसि (आचारांग-सूत्र)-हे पुरुष! जिसका तू हनन करना चाहता है, वह तू ही है।
2. सव्वे पाणा ण हंतव्वा, एस धम्मे धुवे, णिइए, सासए (आचारांग-सूत्र)-किसी प्राणी की हिंसा न करो। यह धर्म ध्रुव, नित्य और शाश्वत है।
3. अप्प-समे मन्निज्ज छप्पि काए-छहों काय के जीवों को अपने समान समझो।

2. सत्य-सूत्र

1. पुरिसा! सच्चमेव समभिजाणाहि (आचारांग-सूत्र)-हे पुरुष! तू सत्य को पहचान
2. सच्चं खु भगवं (प्रश्न-व्याकरण-सूत्र)-सत्य ही भगवान् है।
3. सच्चं लोयम्मि सारभूयं-सत्य लोक में सारभूत है।

3. अप्रमाद-सूत्र

1. उट्ठिए णो पमायए-जब जाग उठे हो, तो प्रमाद मत करो।
2. सव्वओ पमत्तस्स भयं, सव्वओ णत्थि अपमत्तस्स भयं (आचारांग-सूत्र)-प्रमत्त व्यक्ति को सब ओर से भय होता है, अप्रमादी को कहीं से भी कोई भय नहीं होता है।

4. आत्मविजय-सूत्र

1. अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य। अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठिओ सुप्पट्ठिओ। (उत्तराध्ययन-सूत्र)-आत्मा ही सुख-दुख का बन्ध करने वाली और उनका क्षय करने वाली है। सत्य-प्रवृत्ति में लगी हुई आत्मा मित्र है और दुष्प्रवृत्ति में लगी हुई आत्मा शत्रु है।

5. शिक्षा-सूत्र

1. अलं बालस्स संगेणं - अज्ञानी की संगति मत करो।
2. काले कालं समायरे-प्रत्येक कार्य को ठीक समय पर करो।
3. राइणिएसु विणयं पउंजे- बड़ों का सन्मान करो।
4. सुयलाभे ण मज्जिज्जा-ज्ञान का गर्व मत करो।
5. विवेगे धम्ममाहिए-विवेक ही धर्म है।

6. खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे। मित्ती मे सव्व-भूएसु, वेरं मज्झं न केणइ।

–आवश्यक सूत्र

अर्थ: मैं सभी जीवों को क्षमा करता हूँ। सब जीव मुझे क्षमा करें। संसार में सभी प्राणियों से मेरी मित्रता है, किसी से भी मेरा वैर नहीं है।

7. एगो मे सासओ अप्पा, नाण-दंसण-संजुओ। सेसा मे बाहिरा भावा, सव्वे संजोग-लक्खणा।

अर्थ- ज्ञान और दर्शन से युक्त मेरी आत्मा ही मेरा शाश्वत साथी है। शेष धन, जन, पुत्र, परिवार आदि पदार्थ आत्म-बाह्य हैं। ये सभी संयोगानुसार मिलते-बिछुड़ते रहते हैं।

8. कोहो पीइं पणासेइ, माणो विणय-नासणो। माया मित्ताणि नासेइ, लोभो सव्व-विणासणो।
उवसमेण हणे कोहं, माणं मद्दवया जिणे। मायमज्जवभावेण, लोभं सन्तोसओ जिणे।

–दशवैकालिक-सूत्र

अर्थ-क्रोध प्रीति का नाश करता है। मान विनय का नाश करता है। माया मित्रता का नाश करती है और लोभ सभी गुणों का नाश करता है। क्रोध को क्षमा से जीतें। मान को मृदुता (कोमलता) से जीतें। माया को सरलता से जीतें और लोभ को सन्तोष-भाव से जीतें।

9. कम्मुणा बम्भणो होइ, कम्मुणा होइ खत्तिओ। वइसो कम्मुणा होइ, सुद्दो हवइ कम्मुणा।।

–उत्तराध्ययन सूत्र

अर्थ-कर्म से ब्राह्मण होता है, कर्म से क्षत्रिय होता है, कर्म से वैश्य होता है और कर्म से ही शूद्र होता है।

10. सरीरमाहु नाविति, जीवो वुच्चइ नाविओ। संसारो अण्णवो वुत्तो, जं तरन्ति महेसिणो।।

–उत्तराध्ययन सूत्र

अर्थ-शरीर नौका है, जीवात्मा नाविक है, जन्म-मरण-रूप संसार समुद्र है। ज्ञान-दर्शन-चारित्र के धारक महर्षि-जन इसे पार कर जाते हैं।

11. श्री हरिकेशबल मुनि यज्ञ-कर्ता ब्राह्मणों को आध्यात्मिक यज्ञ का स्वरूप फरमाते हुए कहते हैं-

तवो जोई जीवो जोइठाणं, जोगा सुया सरीरं कारिसंगं।
कम्मेहा संजम-जोग-सन्ती, होमं हुणामि इसिणं पसत्थं।।

–उत्तराध्ययन सूत्र

अर्थ-तप ज्योति है, जीव-आत्मा ज्योति-स्थान (होमकुण्ड) है, मन-वचन-काया की कड़छी है, मनुष्य-शरीर उपला (गोबर की पाथी) है, आठ कर्म की लकड़ी हैं, सयंम-युक्त कार्य शान्ति-मन्त्र हैं, इस प्रकार मैं ऋषि-मुनियों के लिए आचरणीय श्रेष्ठ यज्ञ को करता हूं।

अन्तर बताइए और ज्ञान बढ़ाइये

1. अरिहन्त व सिद्ध में

	अरिहन्त	सिद्ध
1.	सशरीरी हैं।	अशरीरी हैं।
2.	चार कर्म नष्ट हुए हैं।	आठ कर्म नष्ट हुए हैं।
3.	चार कर्म शेष हैं।	कोई कर्म शेष नहीं हैं।
4.	दिखाई देते हैं।	दिखाई नहीं देते हैं।
5.	धर्मोपदेश देते हैं।	धर्मोपदेश नहीं देते हैं।
6.	संख्यात हैं।	अनन्त हैं।

2. शरीर व आत्मा में

	शरीर	आत्मा
1.	जड़ पदार्थों से बना है।	चैतन्य रूप है।
2.	वर्ण, गंध, रस, स्पर्श से युक्त है।	वर्णादि चार से रहित है।
3.	वैज्ञानिक यन्त्रों से परीक्षण होता है।	यन्त्रों की पकड़ से बाहर है।
4.	बिजली के तार के समान है।	तार में व्याप्त करण्ट के समान है।
5.	गति अनुसार भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण करता है।	सदा एकरूप रहता है।
6.	बचपन, जवानी, बुढ़ापा मृत्यु आती है।	अजर, अमर, अविनाशी है।
7.	अनन्त परमाणुओं के संयोग से बना है।	असंख्यात-प्रदेशी है।
8.	मृत्यु के बाद सब प्रदेश बिखर जाते हैं।	कभी भी कोई प्रदेश अलग नहीं होता।
9.	मृत्यु के बाद यहीं रह जाता है।	परभव में या मोक्ष में चली जाती है।
10.	कर्म करने व फल भोगने का साधन है।	मूलरूप से कर्म का कर्ता व फल का भोक्ता है।
11.	मोक्ष सम्भव नहीं है।	मोक्ष सम्भव है।

3. गुरु व मूर्ति में

	गुरु	मूर्ति
1.	चैतन्य-स्वरूप हैं।	जड़ है।
2.	सम्यक्ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र से युक्त हैं।	सम्यक्ज्ञान आदि से रहित है।
3.	आत्म-कल्याण करके मोक्ष में जाते हैं।	संसार में ही रहती है।
4.	जनता के जीवन का निर्माण करते हैं।	जीवन-निर्माण की प्रेरणा नहीं देती।
5.	स्वयं साधना करके गुरु-पद पाया है।	कारीगर द्वारा निर्मित है।

जैन शब्दों का अर्थ

देव

हम जैन हैं। **अरिहंत और सिद्ध भगवान**, हमारे परम् आराध्य देव हैं। वे वीतरागी, सर्वज्ञ सर्वदर्शी होते हैं। राग, द्वेष, मोह और अज्ञान का सर्वथा नाश करके वे देव हुए हैं। अर्हंत भगवन्तों ने जगत के समस्त जीवों की रक्षा एवं दया के लिए उपदेश दिया कि ''सुखार्थियों! यदि सुख चाहते हो तो किसी भी जीव को दुःख मत दो। छोटे बड़े समस्त जीवों को अपनी आत्मा के समान समझो। संयम से रहो। हिंसा, झूठ, चोरी, दुराचार, क्रोध, अभिमान, कपटाई, लोभ, लड़ाई झगड़ा मत करो। मन को वश में रखो। संतोष धारण करो और अपने विचार सदैव पवित्र और ऊँचे रखो''।

गुरू

जिन्होंने समस्त पापों का सर्वथा त्याग कर दिया है, संसारी संबंधो को छोड़ दिया है, जिनका न कोई घर होता है और न स्थायी निवास होता है। जो अपने पास एक पैसा तक नहीं रखते, निर्दोष गोचारी से निर्वाह करते हैं, पैदल चलते हैं और पाँच महाव्रतो का जीवन भर पालन करते हैं। संयम, तप तथा स्वाध्याय, ध्यान आदि से अपनी आत्मा को उन्नत बनाते हैं। भव्य जीवों को हितोपदेश देते हैं। ऐसे **सर्वत्यागी निग्रन्थ** हमारे गुरू हैं।

धर्म

जिनेश्वर भगवान का बताया हुआ **आचार** धर्म है। यह **अहिंसा, सत्य, अचार्य, ब्रह्मचर्य** और **अपरिग्रह** रूप है। पाप कर्मो का त्याग, कषाय विवेक अर्थात् राग और द्वेष पर विजय पाना एवं देव, गुरू की भक्ति, ज्ञान, ध्यान, स्वाध्याय आदि से आत्मा को विशुद्ध और पवित्र करने वाले चरित्र का पालन करना धर्म है। वह श्रावकधर्म और मुनिधर्म ऐसे दो प्रकार का है। इसका पालन करके जीवन को अधिक से अधिक धर्ममय बनाना प्रत्येक प्राणी का कर्तव्य है।

शास्त्र (सुत्र, आगम)

जिनेश्वर भगवान श्री महावीर स्वामी की वाणी के अनुसार रचित शास्त्र ही हमारे लिए आधारभूत है, जो आचाररांग आदि 32 (स्थानकवासी परम्परा के अनुसार) हैं। इनका और इनके अनुकूल साहित्य का पठन, पाठन, श्रवण, स्वाध्याय, चिंतन एवं मनन हमारा श्रुतधर्म है। वे ही शास्त्र परम सुख की प्राप्ति में सहायक होते है, जिनमें हिंसा, झूठ, दूराचार तथा क्रोधादि को त्यागने की और अहिंसा, संयम तथा तप अंगीकार करने की प्रेरणा दी गई हो। जैन आगम, जीव को पाप का त्याग कर संयमी बनने की प्रेरणा देते हैं, और सच्चे सुख का मार्ग बताते हैं।

जैन धर्म स्थान

स्थानक, उपाश्रय, मन्दिर आदि हम जैनों के बहुत की पवित्र धर्म-स्थान हैं। वहाँ हम सामयिक, संवर आदि धर्म-ध्यान और भगवान महावीर आदि महापुरूषों का भजन करते हैं। जब कभी गुरूदेव पधारते है, तो वहाँ उनके दर्शन करते है। और व्याख्यान, प्रवचन आदि सुनते हैं।

अपने धर्म स्थान की मान-मर्यादा का ध्यान रखना, हमारा मुख्य कर्त्तव्य है। यदि हम ही अपने धर्मस्थान का गौरव न रखेंगे, तो फिर दूसरा कौन रखेगा। इसलिए धर्म स्थान में जाकर निम्नलिखित बातों का हमें अवश्य ध्यान रखना चाहिए।

1. जूते अन्दर नहीं ले जाने।
2. रेशम के बने हुए अपवित्र वस्त्र नहीं पहनने।
3. मैले और गन्दे कपड़े भी नहीं रखने।
4. पान-सुपारी आदि भी नहीं चबाना।
5. इधर-उधर हर जगह नहीं थूकना।
6. ताश, चौपाड़ आदि कोई खेल नहीं खेलना।
7. आपस में लड़ना-झगड़ना नहीं।
8. किसी को गाली नहीं देना, क्रोध नहीं करना।
9. झूठ नहीं बोलना।
10. सिनेमा आदि के गन्दे गीत नहीं गाने।
11. धर्मपुस्तकों को लापरवाही से नहीं डालना।
12. गुरूदेव के आसन को पैर नहीं लगाना।
13. गुरूदेव की ओर पीठ नहीं करना।
14. व्याख्यान, प्रवचन आदि के समय आपस में बातें नहीं करना।

आनुपूर्वी एवं उसे पढ़ने की विधि

प्रत्येक आनुपूर्वी में 5x6=30 कोष्ठक हैं। प्रत्येक आनुपूर्वी के पृष्ठ पर बायें से दायें 5-5 कोष्ठक वाली 6-6 पंक्तियां हैं। अत: आनुपूर्वी बायें से दायें पढ़ी जाती है। इन कोष्ठकों में 1 से 5 तक के अंक के लिखे हुए हैं। अत: निम्न प्रकार से पढ़ें।

1 के स्थान पर ''**नमो अरिहताणं**''

2 के स्थान पर ''**नमो सिद्धाणं**''

3 के स्थान पर ''**नमो आयरियाणं**''

4 के स्थान पर ''**नमो उवज्झायाणं**''

5 के स्थान पर ''**नमो लोए सव्वसाहूणं**''

1

1	2	3	4	5
2	1	3	4	5
1	3	2	4	5
3	1	2	4	5
2	3	1	4	5
3	2	1	4	5

2

1	2	4	3	5
2	1	4	3	5
1	4	2	3	5
4	1	2	3	5
2	4	1	3	5
4	2	1	3	5

3

1	3	4	2	5
3	1	4	2	5
1	4	3	2	5
4	1	3	2	5
3	4	1	2	5
4	3	1	2	5

4

2	3	4	1	5
3	2	4	1	5
2	4	3	1	5
4	2	3	1	5
3	4	2	1	5
4	3	2	1	5

5

1	2	3	5	4
2	1	3	5	4
1	3	2	5	4
3	1	2	5	4
2	3	1	5	4
3	2	1	5	4

6

1	2	5	3	4
2	1	5	3	4
1	5	2	3	4
5	1	2	3	4
2	5	1	3	4
5	2	1	3	4

7

1	3	5	2	4
3	1	5	2	4
1	5	3	2	4
5	1	3	2	4
3	5	1	2	4
5	3	1	2	4

8

2	3	5	1	4
3	2	5	1	4
2	5	3	1	4
5	2	3	1	4
3	5	2	1	4
5	3	2	1	4

9

1	2	4	5	3
2	1	4	5	3
1	4	2	5	3
4	1	2	5	3
2	4	1	5	3
4	2	1	5	3

10

1	2	5	4	3
2	1	5	4	3
1	5	2	4	3
5	1	2	4	3
2	5	1	4	3
5	2	1	4	3

11

1	4	5	2	3
4	1	5	2	3
1	5	4	2	3
5	1	4	2	3
4	5	1	2	3
5	4	1	2	3

12

2	4	5	1	3
4	2	5	1	3
2	5	4	1	3
5	2	4	1	3
4	5	2	1	3
5	4	2	1	3

13

1	3	4	5	2
3	1	4	5	2
1	4	3	5	2
4	1	3	5	2
3	4	1	5	2
4	3	1	5	2

14

1	3	5	4	2
3	1	5	4	2
1	5	3	4	2
5	1	3	4	2
3	5	1	4	2
5	3	1	4	2

15

1	4	5	3	2
4	1	5	3	2
1	5	4	3	2
5	1	4	3	2
4	5	1	3	2
5	4	1	3	2

16

3	4	5	1	2
4	3	5	1	2
3	5	4	1	2
5	3	4	1	2
4	5	3	1	2
5	4	3	1	2

17

2	3	4	5	1
3	2	4	5	1
2	4	3	5	1
4	2	3	5	1
3	4	2	5	1
4	3	2	5	1

18

2	3	5	4	1
3	2	5	4	1
2	5	3	4	1
5	2	3	4	1
3	5	2	4	1
5	3	2	4	1

19

2	4	5	3	1
4	2	5	3	1
2	5	4	3	1
5	2	4	3	1
4	5	2	3	1
5	4	2	3	1

20

3	4	5	2	1
4	3	5	2	1
3	5	4	2	1
5	3	4	2	1
4	5	3	2	1
5	4	3	2	1

Important Notes

काव्य विभाग

Important Notes

बाल-गीत

1. पढ़ेंगे लिखेंगे

पढ़ेंगे लिखेंगे, करेंगे अच्छा काम
धर्म में भी हम, करेंगे ऊँचा नाम
सुबह जल्दी उठना और करना प्रभु ध्यान,
पंच परमेष्ठी को, करना प्रणाम

2. हाय हैलो छोड़िए जय जिनेन्द्र बोलिए

सुबह उठे मम्मी से बोलें हम,
जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र..........
दादा से दादी से बोलें हम,
जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र..........
दीदी से भैया से बोलें हम,
जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र..........
आसन ले स्थानक में आए,
साथियों को देख के बोलें हम
जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र..........
पुस्तक ले पाठशाला आऐ,
दीदी जी को देख के बोलें हम
जय जिनेन्द्र, जय जिनेन्द्र,
जय जिनेन्द्र जय जिनेन्द्र।

3. मेरे मन में है विश्वास

हम होंगे ज्ञानवान, हम होंगे ज्ञानवान

1 हम होंगे ज्ञानवान, एक दिन,
हो-हो मन में है विश्वास, पूरा है विश्वास
हम होंगे ज्ञानवान, एक दिन।

2 हम करेंगे आत्मध्यान, हम करेंगे आत्मध्यान,
हो-हो मन में है विश्वास, पूरा है विश्वास,
हम करेंगे आत्मध्यान, एक दिन।

3 हम भी बनेंगे भगवान, हम भी बनेंगे भगवान,
हो हो मन में है विश्वास, पूरा है विश्वास,
हम भी बनेंगे भगवान, एक दिन।

4. हम नन्हें मुन्ने बच्चे

हम नन्हें मुन्ने बच्चे हैं, दाँत हमारे कच्चे हैं।
झूठ कभी न बोलेंगे, दिल न किसी का दुखाएंगे।
गुरू दर्शन को जाएंगे, निज स्वभाव को पाएंगे।
अब तो जल्दी करेंगे हम, अब तो मुनि बनेंगे हम।

5. जय जिनेन्द्र बोलिए

जय जिनेन्द्र , जय जिनेन्द्र, जय जिनेन्द्र बोलिए।
जय जिनेन्द्र की ध्वनि से, अपना मन खोलिए
जय जिनेन्द्र ....
जय जिनेन्द्र ही हमारा, एक मात्र मन्त्र हो।
जय जिनेन्द्र बोलने को, हर मनुज स्वतन्त्र हो
जय जिनेन्द्र बोलकर, हृदय के द्वार खोलिए।
जय जिनेन्द्र..........
हे जिनेन्द्र! ज्ञान दो, मोक्ष का वरदान दो।
कर रहे प्रार्थना हम, प्रार्थना पर ध्यान दो।
जाग जाग जाग चेतन, बहुत काल सो लिए
जय जिनेन्द्र..........
राग छोड़ धर्म जोड़, यह जिनेन्द्र देशना।
अष्ट कर्म को मरोड़, यह जिनेन्द्र देशना
जय जिनेन्द्र बोलकर, खुद जिनेन्द्र हो लिए।
जय जिनेन्द्र..........

6. Very Sweet very sweet ...

Very Sweet Very Sweet, Jain Dharam

I love I love Jain Dharam
I shall go on moksha marg
I shall take my Jain Dharam
very sweet.......

Do not take any tension
always says my Jain Dharam
very sweet.......

You can solve any problem
if you take our Jain Dharam
very sweet........

7. मेरा धाम

शुद्धतम है मेरा नाम,
मात्र जानना मेरा काम
मुक्तिपुरी है मेरा धाम,
मिलता जहाँ पूर्ण विश्राम
जहाँ भूख का नाम नहीं है,
जहाँ प्यास का काम नहीं है
खाँसी और जुखाम नहीं है,
आधि-व्याधि का नाम नहीं है।

8. वीर प्रभु की हम संतान

वीर प्रभु की हम संतान,
धारे जिन सिद्धांत महान
समझें पढ़ने में कल्याण, गावें गुरूवर का गुण ज्ञान
वीर प्रभु की.......
पढ़कर बनें वीर विद्वान, पावे निश्चय आत्मा ज्ञान
गुरू उपकार हृदय में आन,
उनको नमें सहित सम्मान
वीर प्रभु की.......

9. महावीर प्रभु की हम संतान

महावीर प्रभु की हम सन्तान.....हैं तैयार हैं तैयार
जिनशासन की सेवा करने.....हैं तैयार हैं तैयार
सिद्ध पथ का स्वराज लेने.....हैं तैयार हैं तैयार
अरिहन्त प्रभु की सेवा करने.....हैं तैयार हैं तैयार
ज्ञानी गुरू की सेवा करने.....हैं तैयार हैं तैयार
जिनशासन को जीवन देने.....हैं तैयार हैं तैयार
सम्यग्दर्शन प्राप्त करने.....हैं तैयार हैं तैयार
वीत रागी निर्मोही होने.....हैं तैयार हैं तैयार
मोक्ष दरवाजा खोलने को.....हैं तैयार हैं तैयार
संसार सागर पार उतरने.....हैं तैयार हैं तैयार
सिद्ध प्रभु के साथ रहने को.....हैं तैयार हैं तैयार

10. हमारा संकल्प

सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे,
सप्त भयो से नहीं डरेंगे।
नव तत्व का ज्ञान करेंगे,
जीव-अजीव पहिचान करेंगे।
स्व-पर भेद विज्ञान करेंगे,
निजानन्द रसपान करेंगे।
पंच प्रभु का ध्यान करेंगे,
गुरूजन का सम्मान करेंगे।
जिनवाणी का श्रवण करेंगे,
पठन करेंगे मनन करेंगे।
रात्रि भोजन नहीं करेंगे, हिंसा,
झूठ का सहारा न लेंगे।
निज स्वभाव को प्राप्त करेंगे,
मोहभाव का नाश करेंगे।
राग द्वेष का त्याग करेंगे,
भक्त नहीं, भगवान बनेंगे।

11. कभी नहीं ... कभी नहीं

कभी धर्म छोड़ना नहीं
कभी क्रोध करना नहीं
कभी हठ करना नहीं
कभी कपट करना नहीं
कभी लालच करना नहीं
कभी दया छोड़ना नहीं
कभी भय करना नहीं
कभी प्रमाद करना नहीं
कभी जुआ खेलना नहीं
कभी अन्याय करना नहीं
कभी निन्दा करना नहीं
कभी दोष छिपाना नहीं।

बाल तत्व ज्ञान

1. जीव-अजीव

मैं जीव हूँ
मुझ में ज्ञान है
मैं ज्ञान से जानता हूँ

शरीर अजीव है
उस में ज्ञान नहीं है
वह कुछ जानता नहीं है

जीव और शरीर अलग अलग है
जीव, जीव और शरीर दोनों को जानता है।

जीव सुख दु:ख का अनुभव करता है।
अजीव में सुख दु:ख नहीं होता।
हम सुख दु:ख का अनुभव करते हैं, अत: जीव हैं
टेबल, कुर्सी सुख दु:ख का अनुभव नहीं करते, अत: अजीव हैं।
कर्म अजीव हैं, कर्म में ज्ञान नहीं है
जीव में ज्ञान है।
जीव और कर्म अलग-अलग हैं।

2. मुक्त और संसारी

जीव दो तरह के होते हैं– 1. मुक्त, 2. संसारी

मुक्त जीव शुद्ध हैं, वे मोक्ष में रहते हैं, वे पूरे सुखी हैं, उनके राग-द्वेष नहीं होते, उनके जन्म मरण भी नहीं होते।

संसारी जीवों को जन्म मरण होता है।
स्वर्ग, नरक, त्रिर्यंच, मनुष्य के जीव संसारी हैं।

3. बोलो बच्चो

तुम कौन हो?	–	जीव, जीव, जीव
तुम्हारे अन्दर क्या है?	–	ज्ञान, ज्ञान, ज्ञान
तुम्हारा काम क्या है?	–	जानना, जानना, जानना
शरीर कौन है?	–	अजीव, अजीव, अजीव
क्या शरीर में ज्ञान है?	–	ना, ना, ना
क्या शरीर जानता है?	–	ना, ना, ना
क्या शरीर और तुम एक हो?	–	ना, ना, ना

4. धर्म

मुझे सुखी होना है। जो धर्म करता है, वह सुखी होता है।
जो धर्म नहीं करता वह दु:खी होता है।
मुझे धर्म करना है।
जीव में धर्म होता है, शरीर में धर्म नहीं होता।
मैं जीव हूँ, मुझमें धर्म होता है।
शरीर अजीव है, उसमें धर्म नहीं होता।
जीव एक द्रव्य है, धर्म उसकी प्रर्याय है
ज्ञान से धर्म होता है
अज्ञान से अधर्म होता है।
जिसमें ज्ञान होता है, वह धर्म को समझता है

5. तीर्थंकर और भगवान

1 तीर्थंकर 24 होते हैं, भगवान अनन्त होते हैं।

2 सभी तीर्थंकर भगवान होते हैं, लेकिन सभी भगवान तीर्थंकर नहीं होते।

3 तीर्थंकर हुए बिना भी मोक्ष प्राप्त किया जा सकता परन्तु भगवान हुए बिना मोक्ष प्राप्त नहीं किया जा सकता।

4 तीर्थंकर बनना पुण्य का फल है, जबकि भगवान बनना धर्म का फल है।

प्रार्थनाएँ

1. जिनवाणी स्तवन

जय-जय जिनवाणी नमो-नमो, त्रिभुवन कल्याणी नमो-नमो।।टेक।।
मुक्ता की माला नमो-नमो, निधियों की शाला नमो-नमो, रतनों की खानी नमो-नमो।।1।।
वैभव की दात्री नमो-नमो, कल्याण विधात्री नमो-नमो, देवी ब्रह्माणी नमो-नमो।।2।।
सब जग की माता नमो-नमो, आगम विख्याता नमो-नमो, आत्मा की कहानी नमो-नमो।।3।।
जिनपति की करुणा नमो-नमो, जिनशासन महिमा नमो-नमो, अरिहन्त निशानी नमो-नमो।।4।।
हे तीर्थ सुपावन नमो-नमो, निवृत्ति की कारण नमो-नमो, हे अमृत निधानी नमो-नमो।।5।।

2. नमस्कार मन्त्र-स्तुति

नमस्कार मन्त्र प्यारा, जीवन का इक सहारा, धुल जाए कलिमल सारा, जप ले अगर शुद्ध भाव से । धुल जाए..........
पहले पद अरिहन्त प्रभु का सबसे अविचल शरणा, भव-भव के पातक हरने को चरण-वन्दना करना।
बरसाई ज्ञान की धारा, कितनों का मैल उतारा।। धुल जाए..........
है द्वितीय पद सिद्ध प्रभु का तोड़ कर्म के बन्धन, हुए मुक्त निर्लेप निरञ्जन उन्हें हृदय से वन्दन।
अन्तिम है लक्ष्य हमारा, पाएं हम वही किनारा।। धुल जाए..........
है तृतीय पद आचार्य गणी फिर उपाध्याय श्रुत स्वामी, पंचम पद में सर्व साधु हैं, निज पर-हित के कामी।
तप और संयम को धारा, ममता और मोह निवारा।। धुल जाए..........
पांच पदों के नमस्कार से सब पापों का क्षय हो, यही महा मंगल है जिससे प्राप्त सर्वथा जय हो।
जिसने यह मन्त्र उचारा उसने सब कार्य संवारा।। धुल जाए..........

3. श्री नवकार-स्तुति

महामन्त्र नवकार पावन पंच परमेष्ठी। वन्दन बारम्बार पावन पंच परमेष्ठी।।टेक।।
1 सुबह शाम श्रद्धा से जपते, क्रोध क्लेश में नहीं तपते। बहे प्रेम की धार। पावन.........
2 कार्यारम्भ कोई हो करना, इसी मन्त्र का लेना शरणा। होवे मंगलाचार। पावन.........
3 कष्ट कोई कितना आया हो, मन अशान्त पीड़ित काया हो। हो दुःख का प्रतिकार। पावन.........
4 अनुपम सुख की कलियां खिलतीं, ऋद्धि-सिद्धियां सब ही मिलती। भरते हैं भण्डार। पावन.........
5 ध्यान लीन जो भी होते हैं, अन्तर्मल अपने धोते हैं। शेष न रहें विकार। पावन.........
6 जब-जब तन्मयता आती है, आत्मा अनुभव रस पाती है। होता हल्का भार। पावन.........

4. वीर-स्तुति

जय वीर प्रभु, जय वीर प्रभु, करुणा सागर, गम्भीर प्रभु।।टेक।।
थे शान्ति के अवतार तुम्ही, थे जगती के, आधार तुम्हीं। थे संयम की तस्वीर प्रभु।।1।।
मन के विकार सब जीत लिए, कितने भीषण उपसर्ग सहे। थे क्षमा शूर अति धीर प्रभु।।2।।
आडम्बर का कोलाहल था, जल रहा द्वेष, दावानल था। बरसाया धर्म का नीर प्रभु।।3।।
जो कोई शरण में आया था, उसको ही पार लगाया था। वो पहुंचा भवजल तीर प्रभु।।4।।
जीवन में कार्य महान् किया, फिर अन्त समय निर्वाण लिया। कटी कर्मों की जंजीर प्रभु।।5।।
चरणों में हृदय से वन्दन है, वाणी करती अभिनन्दन है। अवनत है सकल शरीर प्रभु।।6।।

5. मंगलकारी महावीर

मंगलकारी महावीर चरणों में शीश झुकाओ, थे सागर वर गम्भीर, चरणों में..................।।टेक।।
जन्मे तब आनन्द छाया, जन-जन का मन हर्षाया, दुनिया की मेटी पीर, चरणों में..................।।1।।
दीक्षा ले वन में आए, तप के घन थे बरसाए, कर्मों की कटी जंजीर, चरणों में...............।।2।।
अरिहन्त बने प्रभु ज्ञानी, आगम की पावन वाणी, बरसी ज्यों गंगा नीर, चरणों में...................।।3।।
गौतम और चन्दन बाला, लाखों को पार कर डाला, बदली जग की तकदीर, चरणों में................।।4।।
उनके अनुयायी मुनिवर, श्री मयाराम जी गुरुवर, थे जपी तपी गुणधीर, चरणों में..................।।5।।
गुरू मदन लाल जी स्वामी, थे संयम पथ अनुगामी, मन में उनकी तस्वीर, चरणों में......................।।6।।
पावन गुरूदेव सुदर्शन, श्री बद्री प्रशाद तपोधन, जीवन जिनका अक्सीर, चरणों में....................।।7।।

6. सिद्ध-स्तवन

सेवो सिद्ध सदा जयकार, जासे होवे मंगलाचार।टेक।
अज अविनाशी अगम अगोचर, अमल अचल अविकार। अन्तर्यामी त्रिभुवन स्वामी, अमित शक्ति-भण्डार।। .....।।1।।
कर पणट्ठ कमट्ठ अट्ठ गुण, युक्त मुक्त संसार। पायो पद परमेष्ठी तास, पद वन्दुँ बारम्बार।। .....।।2।।
सिद्ध प्रभु का सुमरण जग में सकल सिद्धि दातार। मन-वांछित पूरण सुर-तरु सम, चिन्ता चूरण हार।। .....।।3।।
जपें-जाप योगीश रात-दिन, ध्यावें हृदय मंझार। तीर्थंकर हूँ प्रणमे उनको, जब होवे अणगार।। .....।।4।।
सूर्योदय के समय भक्ति युक्त, स्थिर चित्त दृढ़ता धार। जपे 'सिद्ध' यह जाप तास घर, होवे ऋद्धि अपार।। .....।।5।।
सिद्ध स्तुति पढ़े भाव से, प्रतिदिन जो नर-नार। सो दिव शिव-सुख पावे निश्चय बना रहे सरदार।। .....।।6।।
'माधव मुनि' कहे सकल संघ में बढ़े हमेशा प्यार। विद्या विनय विवेक समन्वित, पावें प्रचुर प्रचार।। .....।।7।।

7. हम जैन धर्म अनुयायी

हम जैन-धर्म अनुयायी हैं, सर्वत्र शांति फैलाएंगे।
प्रभु महावीर के सेवक हैं, बन महावीर दिखलाएंगे ।।टेक।।

1. हिंसा से दूर रहेंगें हम, शत्रु को मित्र कहेंगें हम।
सारे ही कष्ट सहेंगें हम, जग गुलशन को महकाएंगें।।

2. है सत्य-शील हमको प्यारा, संयम जीवन अपना नारा।
हम बहा त्याग-तप की धारा, जीवन आदर्श बनाएंगे।।

3. आहार शुद्ध हम रखेंगे, आचार शुद्ध हम रखेंगे।
व्यवहार शुद्ध हम रखेंगे और आत्म-शुद्धि कर पाएंगे।।

4. असहाय हैं और जो निर्धन है, जिनके भूखे नंगे तन हैं।
जो दुखी और पीड़ित जन हैं, हम उनको गले लगाएंगे।।

8. भगवन तेरे चरण में

भगवन् तेरे चरण में, मेरी ये वन्दना है।
मन से वचन से तन से, सर्वस्व अर्पणा है ।। टेक

1. अन्तर में वासना का संसार-सा बसा है।
उसका जो अंत लाए, तेरी उपासना है।।

2. जो कुछ मिला है जग में, कुछ भी नहीं मिला है।
तेरे बिना ये सब ही, मन की प्रवंचना है।।

3. जो तू है वो ही मैं हूँ, जो मैं हूँ वो ही तू है।
भौतिक उपाधियों की, ही भेद-कल्पना है।।

4. तू ध्येय है हमारा, आदर्श है हमारा।
तुझ-सा बनाने वाली, तेरी आराधना है।।

5. मीनार रोशनी की तेरे चरण हैं भगवन्।
छूटे न ये सहारा, बस ये ही कामना है।।

9. अहिंसा

सब धर्मों का सार अहिंसा।
जगती का आधार अहिंसा।।टेक।।

1. राग, द्वेष के संघर्षों का एकमात्र उपचार अहिंसा,
सदाचारमय सद्विचारमय जीवन का व्यवहार अहिंसा।
शान्ति-सुधा-रस-धार अहिंसा
सब धर्मों का सार अहिंसा।।

2. "स्वयं जियो, जीने दो सबको" मूल मंत्र है इसका प्यारा,
जीवन की सब तापहारिणी शान्तिकारिणी अमृतधारा।
सृष्टि का श्रृंगार अहिंसा
सब धर्मों का सार अहिंसा।।

3. सिद्धि-सदन का महामार्ग यह, सबका मंगल करने वाली,
आत्म-धर्म की सुगम ये सीढ़ी, प्रेम-भावना भरने वाली।
निज-पर का उपकार अहिंसा
सब धर्मों का सार अहिंसा।।

4. विश्वशांति की विमल साधना, वीरों का कर्त्तव्य धर्म ये,
भूत, भविष्यत्, वर्तमान में सदा सर्वदा धर्म-मर्म ये।
दया-मूर्ति साकार अहिंसा,
सब धर्मों का सार अहिंसा।।

10. पूजा भी तो यही है

पूजा भी तो यही है, माला भी तो यही है ।
हो धर्ममय ये जीवन, संध्या भी तो यही है ।।टेक।।

1. जाकर के मंदिरों में, इक भोग है लगाता,
भूखे को कोई रोटी, है प्रेम से खिलाता ।
ये धर्म है, मनुज की महिमा भी तो यही है ।।

2. मंदिर या स्थानकों का निर्माण इक तरफ है,
उजड़े बसें वो, सामान इक तरफ है ।
भगवान के घरों की रचना भी तो यही है ।।

3. सत्संग में जो आता, और ज्ञान-ध्यान पाता,
पावन स्वयं हो सबको, पावन है वो बनाता ।
तीर्थों की असलियत में, यात्रा भी तो यही है ।।

4. अग्नि में डाल घी को, क्या यज्ञ है रचाना,
है यज्ञ दे सहारा, असहाय को उठाना ।
ऊंचा हो शील, ऊंचा झण्डा भी तो यही है ।।

5. कुछ सीखना-सिखाना, पूजा सरस्वती की,
धन दे के नम्र रहना, पूजा है लक्ष्मी की ।
समभाव हो, प्रभु की आज्ञा भी तो यही है।।

बारह भावना

1. अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार।।

2. अशरण भावना

दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती बिरियाँ जीव को, कोई न राखनहार।।

3. संसार भावना

दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान्।
कहूँ न सुख संसार में, सब जग देखो छान।।

4. एकत्व भावना

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यों कबहूँ या जीव को, साथी सगो न कोय।।

5. अन्यत्व भावना

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर संपत्ति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय।।

6. अशुचि भावना

दिपै चाम चादर मढ़ी, हाड पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन-गेह।।

7. आस्रव भावना

जग वासी घूमें सदा, मोह नींद के जोर।
सब लूटें नहिं दीसता, कर्म चोर चहूँ ओर।।

8. संवर भावना

मोह नींद जब उपशमे, सतगुरु देय जगाय।
कर्म चोर आवत रुके, तब कुछ बने उपाय।।

9. निर्जरा भावना

ज्ञान दीप तप तेल भर, घर शोधे भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसे नहीं, पैठे पूरब चोर।।
पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच प्रकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार।।

10. लोक भावना

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
ता में जीव अनादि ते, भरमत है बिन ज्ञान।।

11. बोधि दुर्लभ भावना

धन जन कंचन राज सुख, सुबहिं सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान।।

12. धर्म भावना

जाचे सुर तरु देय सुख, चिंतित चिंता रैन।
बिन जाचे बिन चिंतिये, धर्म सकल सुख दैन।।

मेरी भावना

जिस ने राग द्वेष कामादिक जीते सब जब जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह को उपदेश दिया।।
बुद्ध, वीर, जिन, हरिहर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसी में लीन रहो।।1।।

विषयों की आशा नहीं जिनको, साम्य भाव धन रखते हैं।
निज पर के हित साधन में जो निश दिन तत्पर रहते हैं।।
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत् के, दुःख समूह को हरते हैं।।2।।

रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उन ही जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे।।
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूँ।
पर-धन-वनिता पर न लुभाऊँ, संतोषमृत पिया करूं।।3।।

अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ।
देख दूसरी की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ।।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूँ।
बने जहाँ तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूँ।।4।।

मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहें।
दीन दुखी जीवों पर मेरे, उर से करूणा-स्त्रोत बहे।।
दुर्जन-क्रूर कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्य भाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे।।5।।

गुणी जनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके यह मन सुख पावे।।
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे।।6।।

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आ जावे।।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा, कभी न पग डिगने पावे।।7।।

होकर सुख में मग्न, न फूले, दुख में कभी न घबरावे।
पर्वत, नदी, श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावे।।
रहे अडोल अकंप निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट-वियोग, अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे।।8।।

सुखी रहें सब जीव जगत् के, कोई कभी न घबरावे।
वैर, पाप, अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावे।।
घर-घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्टकृत दुष्कर हो जावे।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावे।।9।।

ईति भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्म-निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।।
रोग मरी, दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत् में, फैले सर्व-हित किया करे।।10।।

फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय, कटुक, कठोर, शब्द नहीं, कोई मुख से कहा करे।।
बन कर सब 'युगवीर' हृदय से, देशोन्नति-रत रहा करें।
वस्तु-स्वरूप विचार खुशी से, निजानन्द में रमा करें।।11।।

पंच पद वंदना

श्री अरिहंत वंदना

नमो श्री अरिहन्त, करमों का किया अन्त,
हुआ सो केवलवन्त, करूणा भण्डारी है।
अतिशय चौंतीस धार, पैंतीस वाणी उच्चार,
समझावे नर नार, पर उपकारी है।।
शरीर सुन्दराकार, सूरज सो झलकार,
गुण हैं अनन्त सार, दोष परिहारी है।
कहत है तिलोक रिख, मन वच काय करि,
झुकी-झुकी बारम्बार, वन्दना हमारी है।।

श्री सिद्ध वंदना

सकल करम टाल, वश कर लियो काल,
मुक्ति में रह्या माल, आत्मा को तारी है।
देखत सकल भाव, हुआ है जगत राव,
सदा ही क्षायिक भाव, भये अविकारी है।।
अचल, अटलरूप, आवे नहीं भव कूप,
अनूप स्वरूप ऊप, ऐसे सिद्ध धारी हैं,
कहत हैं तिलोक रिख, बताओ ए वास प्रभु,
सदा ही उंगते सूर, वन्दना हमारी है।।

श्री आचार्य वंदना

गुण हैं छत्तीस पुर, धारत धरम उर,
मारत करम क्रूर, सुमति विचारी है।
शुद्ध सो आचारवन्त, सुन्दर हैं रूप कन्त,
भण्या हैं सब ही सिद्धांत, वाचणी सुप्यारी है।।
अधिक मधुर वेण, कोई नहीं लोपे केण,
सकल जीवों का सेण, किरती अपारी है।
कहत हैं तिलोक रिख, हितकारी देत सिख,
ऐसे आचारज ताकू, वन्दना हमारी है।।

श्री उपाध्याय वंदना

पढ़त इग्यारह अंग, करमों सूँ करे जंग,
पाखण्डी को मान भंग, करण हुशियारी है।
चौदह पुरबधार, जानत आगम सार,
भवियन के सुखकार, भ्रमता निवारी है।।
पढ़ावे भविक जन, स्थिर कर देत मन,
तप करी तावे तन, ममता को मारी है।
कहत है तिलोक रिख, ज्ञान भानु पर तिख,
ऐसे उपाध्याय, ताकूँ वन्दना हमारी है।।

श्री मुनिराज वंदना

आदरी संयम भार, करणी करे अपार,
समिति गुपति धार, विकथा निवारी है।
जयणा करे छःकाय, सावद्य न बोले वाय,
बुज्झाई कषाय-लाय, किरिया भंडारी है।।
ज्ञान भणे आठो याम, लेवे भगवन्त नाम,
धरम को करे काम, ममता कू मारी है।
कहत है तिलोक रिख, करमो का टाले विख,
ऐसे मुनिराज ताकूँ, वन्दना हमारी है।।

मंगल-पाठ

मंगल करने वाला, कुशल-क्षेम करने वाला और इस भव (जन्म) व परभव में कल्याण करने वाला मन्त्र -'मंगल-पाठ' कहलाता है। जैन उपासक प्रत्येक कार्य के प्रारम्भ में गुरुजनों से निम्नलिखित मंगल पाठ सुनते हैं (मंगल-पाठ को 'चतु:शरण सूत्र' भी कहते हैं)। यह इस प्रकार है-

1. चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं॥

अर्थ-लोक में चार मंगल हैं-

1. अरिहन्त मंगल है, 2. सिद्ध मंगल हैं,
3. साधु मंगल हैं, 4. केवली-प्रणीत जिन-धर्म मंगल है।

2. चत्तारि लोगुत्तमा,-अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

अर्थ- लोक में चार उत्तम हैं-

1. अरिहंत उत्तम है, 2. सिद्ध उत्तम हैं,
3. साधु उत्तम हैं, 4. केवली-प्रणीत जिन-धर्म उत्तम है।

3. चत्तारि सरणं पवज्जामि-अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं
पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलि- पण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि।

अर्थ- मैं चार की शरण ग्रहण करता हूँ:-

1. अरिहंतों की शरण ग्रहण करता हूँ। 2. सिद्धों की शरण ग्रहण करता हूँ।
3. साधुओं की शरण ग्रहण करता हूँ। 4. केवली-प्रणीत जिन-धर्म की शरण ग्रहण करता हूँ।

आचार्य अमित गति की बत्तीसी

भावना बत्तीसी

प्रेम भाव हो सब जीवों से, गुणी जनों में हर्ष प्रभो।
करुणा-स्त्रोत बहे दुखियों पर, दुर्जन में मध्यस्थ विभो।।1।।

यह अनंत बल-शील आतमा, हो शरीर से भिन्न प्रभो।
ज्यों होती तलवार म्यान से, वह अनन्त बल दो मुझको।।2।।

सुख-दुख वैरी बन्धु वर्ग में, काच-कनक में समता हो।
वन-उपवन प्रासाद कुटी में, नहीं खेद नहिं ममता हो।।3।।

जिस सुन्दरतम पथ पर चलकर, जीते मोह मान मन्मथ।
वह सुन्दर पथ ही प्रभु! मेरा, बना रहे अनुशीलन पथ।।4।।

एकेन्द्रिय आदिक प्राणी की, यदि मैंने हिंसा की हो।
शुद्ध हृदय से कहता हूँ वह, निष्फल हो दुष्कृत्य प्रभो।।5।।

मोक्षमार्ग प्रतिकुल प्रवर्त्तन, जो कुछ किया कषायों से।
विपथ-गमन सब कालुष मेरे, मिट जावें सद्‌भावों से।।6।।

चतुर वैद्य विष विक्षत करता, त्यां प्रभु! मैं भी आदि उपाँत।
अपनी निन्दा आलोचना से, करता हूँ पापों को शांत।।7।।

सत्य अहिंसादिक व्रत में भी, मैंने हृदय मलीन किया।
व्रत विपरीत-प्रवर्त्तन करके, शीलाचरण विलीन किया।।8।।

कभी वासना की सरिता का, गह्न सलिल मुझ पर छाया।
पी पीकर विषयों की मदिरा, मुझमें पागलपन आया।।9।।

मैंने छली और मायावी,
हो असत्य-आचरण किया।
पर-निन्दा गाली चुगली जो,
मुँह पर आया वमन किया।।10।।

निरभिमान उज्जवल मानस हो,
सदा सत्य का ध्यान रहे।
निर्मल-जल की सरिता सदृश,
हिय में निर्मल ज्ञान बहे।।11।।

मुनि चक्री शक्री के ह्रिय में जिस अनंत का ध्यान रहें
गाते वेद पुराण जिसे वह, परम देव मम हृदय रहे।।12।।

दर्शन-ज्ञानस्वभावी जिसने, सब विकार ही वमन किये।
परम ध्यान गोचर परमातम, परम देव मम हृदय रहे।।13।।

जो भव-दुःख का विध्वंसक है,
विश्व-विलोकी जिसका ज्ञान।
योगी-जन के ध्यान-गम्य वह,
बसे हृदय में देव महान।।14।।

मुक्ति-मार्ग का दिग्दर्शक है,
जन्म-मरण से परम अतीत।
निष्कलंक त्रैलोक्य-दर्शि वह,
देव रहे मम हृदय समीप।।15।।

निखिल-विश्व के वशीकरण वे, राग रहे ना द्वेष रहे।
शुद्ध अतींद्रिय ज्ञानस्वरूपी, परम देव मम हृदय रहे।।16।।

देख रहा जो निखिल विश्व को,
कर्म-कलंक-विहीन विचित्र।
स्वच्छ विनिर्मल निर्विकार वह,
देव करे मम हृदय पवित्र।।17।।

कर्म-कलंक अछूत न जिसका,
कभी छू सके दिव्य प्रकाश।
मोह तिमिर को भेद चला जो,
परम शरण मुझको वह आप्त।।8।।

जिसकी दिव्य ज्योति के आगे,
फीका पड़ता सूर्य प्रकाश।
स्वयं ज्ञानमय स्वपर-प्रकाशी,
परम शरण मुझको वह आप्त।।19।।

जिसके ज्ञानरूप दर्पण में,
स्पष्ट झलकते सभी पदार्थ।
आदिअंत से रहित शांत शिव,
परम शरण मुझ को वह आप्त।।20।।

जैसे अग्नि जलाती तरु को,
तैसे नष्ट हुए स्वयमेव।
भय-विषाद चिन्ता सब जिसके,
परम शरण मुझको वह आप्त।।21।।

तृण चौकी शिल शैल-शिखर नहिं,
आत्म-समाधी के आसन।
संस्तर पूजा संघ सम्मिलन,
नहीं समाधी के साधन।।22।।

इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, विश्व मानता है मातम।
हेय सभी है विश्व-वासना, उपादेय निर्मल आतम।।23।।

बाह्य जगत कुछ भी नहिं मेरा,
और न बाह्य जगत का मैं।
यह निश्चय कर छोड़ बाह्य को,
मुक्ति हेतु नित स्वस्थ रमें।।24।।

अपनी निधि तो अपने में है, बाह्य वस्तु में व्यर्थ प्रयास।
जग का सुख तो मृगतृष्णा है, झूठे हैं उसके पुरुषार्थ।।25।।

अक्षय है शाश्वत है आत्मा, निर्मल ज्ञानस्वभावी है।
जा कुछ बाहर है सब पर है, कर्माधीन विनाशी है।।26।।

तन से जिसका ऐक्य नहीं, हो सुत तिय मित्रों से कैसे।
चर्म दूर होने पर तन से, रोम-समूह रहे कैसे।।27।।

महा कष्ट पाता जो करता,
पर पदार्थ जड़-देह संयोग।
मोक्ष महल का पथ है सीधा,
जड़ चेतन का पूर्ण वियोग।।28।।

जो संसार पतन के कारण, उन विकल्प जालों को छोड़।
निर्विकल्प निर्द्वन्द्व आत्मा, फिर फिर लीन उसी में हो।।29।।

स्वयं किये जो कर्म शुभाशुभ, फल निश्चय ही वे देते।
करे आप फल देय अन्य तो, स्वयं किये निष्फल होते।।30।।

अपने कर्म सिवाय जीव को,
कोई न फल देता कुछ भी।
'पर देता है' यह विचार तज,
स्थिर हो छोड़ प्रमादी बुद्धि।।31।।

निर्मल सत्य शिवं सुन्दर है,
'अमितगति' वह देव महान।
शाश्वत निज में अनुभव करते,
पाते निर्मल पद निर्वाण।।32।।

Important Notes

सामान्य ज्ञान-विज्ञान

Important Notes

जैन बालक की पहचान (Characteristics of a jain child)

1. प्रतिदिन सवेरे सूर्योदय से पूर्व उठता है और रात्रि में जल्दी सोता है।
2. प्रतिदिन प्रातःकाल नमस्कार महामन्त्र का कम से कम 27 बार जाप करता है।
3. प्रतिदिन साधु दर्शन करता है। अगर आपके घर के पास हैं।
4. प्रातः माता-पिता को प्रणाम करता है।
5. प्रतिदिन योग-आसन करता है।
6. कभी गाली या अपशब्द का प्रयोग नहीं करता।
7. बीड़ी, सिगरेट व शराब तथा गुटका, तंबाकू आदि का व्यसन नहीं करता।
8. मांस, अण्डों व तत्मिश्रित वस्तुओं का सेवन नहीं करता है।
9. प्रतिदिन धार्मिक पुस्तकों का स्वाध्याय करता है।
10. अपना काम स्वयं करता है।
11. रात्रि भोजन नहीं करने का प्रयास करता है।
12. अश्लील साहित्य पढ़ने एवं अश्लीन चलचित्र देखने से बचता है।

1. Gets up daily before sunrise in the morning and goes to bed early.
2. Chants Namaskar Mahamantra everyday in the morning at least 27 times.
3. Visits monks for obeisance everyday.
4. Bows down to parents daily in the morning.
5. Does yogic exercise daily.
6. Never utters filthy or abusive words.
7. Does not smoke or take drinks and chew Gutka, tobacco etc.
8. Does not take eggs, meat and things containing these.
9. Reads religious books daily.
10. Does his work himself.
11. Tries not to take food after sunset. Does his work himself.
12. Avoids to read filthy books or see filthy films.

जब भी आपको जैन साधु-साध्वी दिखाई दें, तुरन्त उन्हें नमस्कार/वंदना (हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर) अवश्य करें।

A. नवयुवक संकल्प लें

1. शादी में दहेज नहीं लेंगे।
2. दोस्तों को लड़की नहीं दिखाएंगे।
3. शादी में पैसा ज्यादा खर्च नहीं करेंगे।
4 पत्नी को तलाक नहीं देंगे।
5. पर-स्त्री-गमन नहीं करेंगे।
6. अश्लील फिल्में नहीं देखेंगे।
7. एक्टर, एक्ट्रैसिज के चित्र नहीं रखेंगे।
8. स्वावलम्बी बनेंगे।

B. स्वतन्त्रता के बादः क्या खोया-क्या पाया

1. दर्शन खोया, प्रदर्शन पाया
2. धर्म खोया, भ्रष्टाचार पाया
3. साहस खोया, निराशा पाई
4. सादगी खोई, फैशन पाया
5. ईमान खोया, बेईमानी पाई
6. स्वतन्त्रता खोई, स्वच्छंदता पाई
7. सहानुभूति खोई, स्वार्थ पाया
8. शान्ति खोई, क्रांति पाई
9. मन्दिर खोया, सिनेमा पाया
10. सदाचार खोया, दुराचार पाया
11. विश्वास खोया, अविश्वास पाया
12. दूध खोया, चाय पाई
13. मानवता खोई, दानवता पाई
14. नम्रता खोई, अभिमान पाया
15. आध्यात्मिकता खोई, भौतिक-ज्ञान पाया
16. प्रभुता खोई, पशुता पाई
17. स्वास्थ्य खोया, इलाज पाया

C. भारत में खटकती हैं-

1. सिद्धान्त-हीन राजनीति
2. बिना परिश्रम का धन
3. आचरण के बिना शिक्षा
4. नैतिकता-हीन व्यापार
5. मानवता-हीन विज्ञान
6. बलिदान-बिना पूजा।

D. कामयाबी की चाबी

1. अगर मां-बाप के सामने झुकते रहोगे, तो स्त्री व जवानी, जो नशा भरती हैं, वो नशा नहीं भरेगा।
2. गुरुओं के सामने झुकते रहोगे, तो वो ताकत मिलती रहेगी, जो हर रुकावट को दूर कर देती है।
3. गुप्त दान देते रहोगे, तो आंख-मिचौली करने वाली लक्ष्मी, कभी धोखा नहीं देगी।
4. मां की गोद, विद्यालय, धर्मस्थान व सत्साहित्य, ये सुसंस्कारों के केन्द्र हैं, इनकी कुंजी जिनको मिल गई, वे कभी कंगाल नहीं होंगे।
5. सादा खानपान और पहनावा रखोगे, तो दुनिया की वो तीखी नजरें, जो कई बार पत्थरों को भी फाड़ देती हैं, उनसे बचे रहोगे।
6. आहार-विहार में संयम रखोगे, तो वे रोग, जो कभी-कभी बड़े-बड़े पहलवानों को भी हिला देते हैं, तुम्हारे पास नहीं आएंगे।
7. अपने दोषों के प्रति जागरूक रहोगे, तो वो समय कभी नहीं आएगा, जिस समय अकेले में पश्चात्ताप करना पड़े।
8. मौत आपके सिर पर खड़ी है, यदि ये विश्वासपूर्वक समझ लोगे, तो आपसे वे भूलें नहीं होंगी, जिनकी शुद्धि न हो सके।
9. यदि आप स्वीकृत टेक और धर्म-सिद्धांत की रक्षा-हेतु अपनी जान की बाजी लगा दोगे, तो कोई वस्तु दुर्लभ नहीं होगी।
10. यदि आपकी इन्द्रियां, मन और बुद्धि आत्मा के अनुशासन में चलती रहेंगी, तो आप कभी किसी के गुलाम नहीं बनोगे।
11. बोली का गुर जिसको मिल गया, वह कभी निरादर नहीं पाएगा।

E. संयम रखो

1. सन्त के सामने मन का
2. जनता के सामने वाणी का
3. राजा के सामने नयनों का

F. संभलो

1. जब शरीर में रोग आने लगे
2. जब मान-सम्मान अधिक मिलने लगे
3. जब भोजन बढ़िया मिलने लगे
4. जब स्वाभिमान को ठेस लगे
5. जब विरोधी विरोध कर रहा हो

G. भगवान को नापसन्द है

1. घमण्ड से चढ़ी हुई आंखे
2. झूठ बोलने वाली जीभ
3. निर्दोष का खून बहाने वाले हाथ
4. अनर्थ की कल्पना करने वाला मन
5. बुराई की ओर ले जाने वाले पैर
6. झूठी गवाही देने वाली जबान
7. भाई-भाई में फूट डालने वाला इंसान।

H. क्या बनो, क्या न बनो

1. समालोचक बनो, निन्दक नहीं
2. खरे बनो, खारे नहीं
3. प्रेमी बनो, पागल नहीं
4. मितव्ययी बनो, कंजूस नहीं
5. क्षमाशील बनो, डरपोक नहीं
6. न्यायी बनो, निर्दयी नहीं,
7. सज्जन बनो, दुर्जन नहीं
8. उत्साही बनो, जल्दबाज नहीं
9. चतुर बनो, कुटिल नहीं
10. पुरुषार्थी बनो, आलसी नहीं
11. नम्र बनो, चापलूस नहीं
12. दृढ़ बनो, हठी नहीं
13. मानव बनो, दानव नहीं
14. सावधान बनो, बहमी नहीं
15. सरल बनो, मूर्ख नहीं
16. दयालु बनो, क्रूर नहीं
17. धीर बनो, सुस्त नहीं
18. मस्त बनो, लापरवाह नहीं

I. खता खाता है

1. मूर्खो से राय लेने वाला
2. दुष्टों से प्रेम जोड़ने वाला
3. सत्य से मुँह मोड़ने वाला
4. हमेशा प्रमाद में रहने वाला
5. शक्तिशाली से विरोध करने वाला।

J. कभी मत भूलिये

1. सत्ता एवं अधिकार पाकर न्याय को कभी न भूलिये।
2. समय बीत जाने पर भी अपने पर किए गए उपकार को कभी न भूलिये।
3. ऐश्वर्य पाकर धर्म को कभी न भूलिये।
4. विवाह के बाद माता-पिता को कभी न भूलिये।
5. व्यापार एवं व्यवहार करते समय सत्य को कभी न भूलिये।
6. अनुचित कार्य की ओर कदम उठाते समय भगवान को कभी न भूलिये।
7. गरीब एवं अभाव-ग्रस्त को सहयोग देना कभी न भूलिये।
8. बीमार होने पर मन, जिह्वा पर नियन्त्रण रखना कभी न भूलिये।
9. क्रोध आने पर अपने आपको कभी न भूलिये।

K. सीखो कुछ रामायण से

1. व्यसन से मुक्ति हो (दशरथ को शिकार का व्यसन, श्रवण मरा)
2. किसी को वचन दो, तो सोच समझकर दो (दशरथ ने कैकेयी को दो वर दिए)
3. नीच की संगति न कीजिए (कैकयी ने मन्थरा की संगति की)
4. पितृभक्ति (राम वन गए)
5. भ्रातृ-प्रेम (भरत का राम से प्रेम)
6. पतिव्रता धर्म का पालन (सीता की तरह)
7. बलिदान की भावना (सुमित्रा ने लक्ष्मण को वन भेजा)
8. वासना के शिकार न बनें (रावण बना)
9. स्वामी-भक्ति (हनुमान जी से)

कुछ अच्छे काम

(भाग-2)

1. किसी नेत्रहीन व्यक्ति की आंखें बनकर उसे सहारा देना। उसे किसी हीनता का बोध दिए बगैर भीड़-भरा मार्ग पार कराना। उसके हाथ की लाठी साबित होना, किंतु इस बात का भी ध्यान रखना कि आप जो भी कर रहे हो, उसका अहंकार खड़ा न हो। विनम्रता और सहजता का हर कदम पर ध्यान रखना।

2. अकस्मात् गिर पड़े किसी व्यक्ति को सहज सहानुभूति के साथ, बगैर हँसी उड़ाये उठाना, सहारा देना।

3. ट्रेन या बस अथवा प्रतीक्षा-बैंच पर पास खड़े किसी वृद्ध, विकलांग, कमजोर, रुग्ण, थके-मांदे व्यक्ति को अपनी जगह (सीट) उपलब्ध कराना।

4. सड़क पर पड़े काँच के टुकड़ों, कीलों, पिनों, नुकीले पत्थरों, केले के छिलकों इत्यादि को किसी सुरक्षित स्थान पर डालना, ताकि उनसे किसी भी जीवधारी को कोई नुकसान न पहुँचे।

5. किसी न पढ़ सकने वाले व्यक्ति के लिए पत्र/चिट्ठी पढ़ या लिख देना। यदि वक्त हो तो उसे कोई अच्छी पुस्तक पढ़ कर सुनाना।

6. यदि कोई व्यक्ति किसी सोए हुए कुत्ते या खड़ी हुई गाय या अन्य किसी प्राणी को प्रताड़ित कर रहा हो, ढेला या पत्थर मार रहा हो, तो उसे समझाना और कोशिश करना कि उसके भीतर करूणा ओर सहानुभूति का कोई झरना खुले।

7. यदि किसी पशु पर उसकी क्षमता या कानून द्वारा निर्धारित बोझ से अधिक भार डाला गया हो, तो वाहन-चालक के ध्यान में इस तथ्य को लाना। उसे सम्बन्धित कानून की जानकारी देना। उसमें गहरी करुणा का स्रोत बहाना।

8. जूठन न छोड़ना। घर हो अथवा बाहर कहीं भी, अपनी थाली में किसी भी तरह का झूठा न छोड़ना। जितना आवश्यक हो उतना ही लेना। यदि स्वयं परोस रहे हों, तो किसी से भी अधिक लेने का आग्रह न करना।

9. कहीं किसी भी आयोजन अथवा समारोह में जाना पड़े, तो वहां की व्यवस्था और मर्यादाओं का ध्यान रखना। आयोजक और अतिथियों के साथ शालीन व्यवहार करना।

10. कचरा यथास्थान डालना-घर में भी बाहर भी। यदि घर से बाहर कोई स्थान निर्धारित न हो, तो सफाईदार को सौंपना या संबंधित नगरपालिका-अधिकारी से मिलकर कचरा-पेटी की व्यवस्था कराना।

11. यदि कभी अपना नौकर, पड़ौसी अथवा कोई परिचित बीमार पड़ जाए अथवा किसी संकट में आ जाए, तो उसकी मदद करना।

12. प्रकृति बहुआयामी है। सब उसके अंश (अवयव) हैं, उससे सीखना। यथा, सूरज से नियमित रहना, चांद से शीतलता बरसाना, वृक्ष से पीड़ा झेल कर भी मीठे फल देना, नदी से चट्टानें काट कर भी रफ्तार में रहना, पक्षियों से चहकना इत्यादि।

13. अस्वच्छताएं न बढ़ाना। लघुशंका आदि के लिए जो भी स्थान निर्धारित हों, उन्हीं का उपयोग करना। यदि कोई अन्यथा कर रहा हो, तो उसे सद्भावनापूर्वक समझाना।

14. बगैर किसी प्रयोजन के पेड़-पौधे न उखाड़ना। वृक्षों के पत्ते, उनकी टहनियां इत्यादि न तोड़ना। ध्यान में रखना कि वनस्पति देश की बहुमूल्य संपदा हैं, उसकी रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है।

15. यदि कोई व्यक्ति किसी वस्तु को भूल गया हो, या किसी व्यक्ति की कोई वस्तु (महत्वपूर्ण दस्तावेज, धन, पर्स, पैन, चाबी मोबाइल इत्यादि) मिले, तो उसे प्रयत्नपूर्वक उसी व्यक्ति तक पहुंचाना। ऐसा करते हुए लोभ-लालच से बचना।

16. ऐसा कोई काम न करना, जिससे किसी व्यक्ति के जीवन में कोई अड़चन या असुविधा उत्पन्न हो, जैसे-टीवी, रेडियो, ट्रांजिस्टर, लाउडस्पीकर इत्यादि को तेज आवाज में चलाना। स्वयं अपने घर में ऐसे कर्णप्रिय स्वर में बात करना, जिससे परिजनों को कोई कठिनाई न हो।

17. सत्संग का कोई अवसर न चूकना। सत्संग से आत्मबल में वृद्धि होती है। सत्संगति का चित्त और चेतना पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है। गुलाब की क्यारी में पड़ी माटी और चन्दन के वृक्ष के समीपवर्ती अन्य वृक्ष भी चन्दन की तरह सुगन्धित हो उठते हैं।

18. सेवा को असली पूंजी मानना। सेवा करने में न तो ग्लानि करना और न आलस्य। इस सच्चाई को हर पल ध्यान में रखना कि सेवा एक ऐसा पारस पत्थर है, जो किसी भी लोह-खण्ड को स्वर्ण में परिवर्तित कर सकता है।

19. आहार जितना तामसिक होगा, विश्व में तामसिकता (अज्ञान/अन्धकार/क्रूरता) उतनी ही बढ़ेगी। अतः न तो खुद कोई तामसिक आहार करना और न ही अपने परिजनों, मित्रों और अतिथियों को परोसना।

20. किसी भी धर्म का कोई ऋषि, मुनि, सन्त, महात्मा, गुरु मिले, तो उसे उचित रीति से सम्मान देना/नमस्कार करना। यथासम्भव सहायता देकर उनकी किसी समस्या/आवश्यकता को हल करना। उनका उपहास करके अपनी मूर्खता प्रदर्शित न करना।

आप भी इतना तो अवश्य ही करें

1. मांस-अण्डा खुद न खाएं, न किसी को खिलाएं।
2. मांसाहारी होटलों/पार्टियों का बहिष्कार करें।
3. अपने घर में मांस-अण्डा न पकने दें।
4. स्कूल-कालेजों में विद्यार्थियों को मांस-अण्डे से निर्मित वस्तुएं न लाने दें।
5. अंडे से बने केक, बिस्कुट, पेस्ट्री, आइस्क्रीम आदि न खरीदें।
6. पालतू पशु-पक्षियों को मांस-अण्डे न खिलाएं।
7. अण्डे बेचने वाली दुकानों से सामान न खरीदें।
8. मांस-उत्पादक-कम्पनियों व पोल्ट्री-फार्मों के शेयर न खरीदें।
9. सरेआम पशु-पक्षियों को कत्ल किए जाते देखकर विरोध करें। पुलिस-स्टेशन में शिकायत दर्ज कराएं। शहर व ग्राम-स्तर पर पशु-रक्षा-समितियाँ स्थापित करें।
10. जिलेटिन (मुत-पशुओं की हड्डियों/झिल्लियों/कण्डराओं को उबालने से उत्पन्न गोंद) से युक्त आइस्क्रीम, जैली, टाफी, चाकलेट, जैम आदि न खाएं।
11. पशुओं की खाल से बने वस्त्र/सामान न खरीदें, न ही पहनें।
12. पशु-उत्पाद-युक्त क्रीम, पाउडर, लिप्स्टिक, शैम्पू एवं अन्य स्नान/श्रृंगार-प्रसाधनों का प्रयोग न करें।
13. बोन-चाइना (Bone-China) से निर्मित बर्तनों/ज्वैलरी को न खरीदें।
14. नहाने-धोने में चर्बी-रहित साबुन का ही उपयोग करें।
15. रेशम के वस्त्र पहनना छोड़ें।
16. लाख से निर्मित चीजों का उपयोग न करें।
17. बोन डीसीपी (Bone-DCP)-युक्त मंजन/टूथपेस्ट का प्रयोग न करें।
18. हाथी-दांत से बनी वस्तुओं का इस्तेमाल न करें।
19. अपने घरेलू पशुओं को कसाई के हाथ न बेचें। पड़ौसी को भी ऐसा करने से रोकें। वृद्ध/अपंग पशुओं की निष्काम सेवा का आदर्श निभाएं।
20. पक्षियों को पिंजरे में कैद न रखें।
21. सूअर, कुत्ता, गाय, गधा आदि अवारा पशुओं को पत्थर/डण्डा न मारें।
22. गुलेल द्वारा पक्षियों का शिकार न करें।
23. कीड़ी, मकौड़े, भिरड़, ततैया, मधुमक्खी आदि को न मारें, न ही इनके छतों पर पत्थर फैंकें या आग लगाएं।
24. घर मे गिरफ्तार किए गए चूहों को पानी में न छोड़ें, न ही बिल्ली/कुत्ते के आगे डालें।

तीर्थ और तीर्थंकर

(विश्लेषण-1)

किसी भगवान् ऋषि-मुनि या महापुरुष के जीवन-वृत्त से जुड़े स्थान को या किसी चमत्कारी वृक्ष, नदी, पर्वत, मूर्ति या मन्दिर आदि से युक्त स्थान को लोग 'तीर्थ' नाम से पुकारते हैं। दुनिया में हर धर्म के और हर जाति के अपने-अपने विशिष्ट तीर्थ स्थान हैं। ये सभी द्रव्य तीर्थ कहलाते हैं।

एक और भी तीर्थ है, जो भाव-तीर्थ या आध्यात्मिक तीर्थ कहलाता है। जिस धर्ममय आचरण से इस जन्म-मरण-रूप संसार का अन्त हो या इस दुखपूर्ण संसार-रूपी समुद्र का किनारा प्राप्त हो, वह धार्मिक आचरण भी तीर्थ कहलाता है। ऐसा तीर्थ चार प्रकार का है। साधु का धर्म, साध्वी का धर्म, श्रावक का धर्म और श्राविका का धर्म। साधु-साध्वी का धर्म पंच महाव्रत रूप है, श्रावक-श्राविका का धर्म 12 व्रत रूप है।

इस चार प्रकार के धर्म का पालन करने से भाव-तीर्थ भी चार प्रकार के हुए-साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका। इन चार प्रकार के तीर्थों की स्थापना करने वाले महापुरूष (भगवान) तीर्थंकर कहलाते हैं। जैन इतिहास में ऐसे कुल 24 तीर्थंकर हुए। इन्होंने अपने-अपने समय में पूर्वोक्त चार तीर्थों की स्थापना की । प्रथम तीर्थंकर थे भगवान ऋषभदेव तथा 24वें तीर्थंकर थे भगवान महावीर स्वामी जी। भारतीय इतिहास में इन दो के अतिरिक्त अन्य भी कई तीर्थंकरों का उल्लेख मिलता है, यथा-दूसरे श्री अजित नाथजी, 16वें श्री शान्तिनाथ जी, 22वें श्री अरिष्टनेमि जी और 23वें श्री पार्श्वनाथ जी। श्वेताम्बर परम्परानुसार इनमें 19वें तीर्थंकर मल्लिकुमारी जी स्त्री थी, शेष सभी पुरुष थे। इन सभी का जन्म अपने-अपने युग के राजघरानों में और क्षत्रिय कुलों में हुआ। सबके पास ऋद्धि, सिद्धि और समृद्धि के अक्षय भण्डार थे। तीर्थंकर नामकर्म के उदय से ये तीन भुवन (लोक) के नाथ, अनन्त बल व अनन्त ज्ञान के धारक तथा सभी नरेंद्रों (राजा-महाराजा) और सुरेंद्रों (देवों के इंद्र) के पूजनीय होते हैं। इनके शरीर में 1008 लक्षण तथा 34 प्रकार के अतिशय (विशिष्ट गुण) और इनकी वाणी में 35 अतिशय होते हैं। नवकार मन्त्र के प्रथम पद 'नमो अरिहन्ताणं' में इनको ही नमस्कार किया गया है।

तीर्थ और तीर्थंकर

(विश्लेषण-2)

साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका-रूपी चार भाव-तीर्थों की स्थापना करने वाले केवली भगवान् तीर्थंकर कहलाते हैं। तीर्थंकर नामकर्म के उदय से तीर्थंकर भगवान् तीन भुवन (लोक) के नाथ, अनन्त बल के धारक और सब नरेन्द्र-सुरेन्द्रों के पूजनीय होते हैं। तीर्थंकर णमोकार-मन्त्र के प्रथम पद में आते हैं। इनके पांच कल्याणक होते हैं, यथा च्यवन (गर्भ)-कल्याणक, जन्म-कल्याणक, दीक्षा-कल्याणक, केवलज्ञान-कल्याणक और निर्वाण-कल्याणक। इन अवसरों पर इन्द्र आदि देवता आकर विशेष महोत्सव मनाते हैं। तीर्थंकर में 12 गुण होते हैं, जो इस प्रकार हैं- अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त बल एवं आठ महाप्रतिहार्य, यथा-अशोकवृक्ष, स्वर्ण सिंहासन, तीन छत्र, भामण्डल, दिव्यध्वनि, पुष्पवृष्टि, चंवर-युगल और देव-दुन्दुभि। तीर्थंकर भगवान् जन्म से ही तीन ज्ञान-मति, श्रुत व अवधि के धारक होते हैं। दीक्षा लेते ही मनः पर्यव नामक चतुर्थ ज्ञान उत्पन्न होता है और साधना-काल पूर्ण होने पर पंचम केवल- ज्ञान प्रकट होता है।

तीर्थ हर धर्म ने माने हैं पर तीर्थंकर (अर्थात् तीर्थों का निर्माण करने वाले या तीर्थ चलाने वाले) केवल जैन धर्म ने ही माने हैं। सबसे प्राचीन और सबसे ऊँचे जीवन्त तीर्थ चार हैं जिनका निर्माण स्वयं तीर्थंकर भगवान ने किया है-साधु साध्वी, श्रावक और श्राविका।

स्थानकवासी जैन धर्म किसी इन्सान द्वारा बनाए गए जड़ तीर्थों को नहीं मानता, तीर्थंकर भगवान द्वारा बनाए गए इन चार जीवन्त तीर्थों को ही मानता है। जब तक यें चारों तीर्थ अखंड रहेगें, संयम तथा मर्यादा में रहेगें तब तक जैन धर्म भी सुरक्षित एवं अखण्ड रहेगा।

ग्यारह गणधर

24वें तीर्थंकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी जी के कुल 14000 शिष्य थे। उनकी सर्वविध आचार-व्यवस्था संभालने वाले 11 प्रमुख सन्त 'गणधर' थे। महावीर प्रभु को वैशाख शुदी दसवीं को केवल ज्ञान हुआ। अगले दिन एकादशी तिथि को मध्यमपावा नगरी में समवसरण की रचना हुई। ये सभी 11 विद्वान वहां सोमिल ब्राह्मण के यज्ञ में आमन्त्रित थे। सभी अपूर्व मेधा, प्रज्ञा और शास्त्र-ज्ञान के भण्डार थे। भगवान् महावीर की दिव्य ऋद्धि से आकर्षित होकर यज्ञ-मण्डप छोड़कर उनके श्रीचरणों में पहुंचे और दीक्षित हुए। उस समय इनके साथ 4400 शिष्य थे। वे भी साथ ही दीक्षित हुए।

जैन धर्म के चार सम्प्रदाय

1. स्थानकवासी 2. तेरापंथी 3. मन्दिरमार्गी 4. दिगम्बर

प्रिय बालको! केवल ज्ञान होने के पश्चात् भगवान महावीर ने चार तीर्थ (धर्मसंघ) की स्थापना की। उस समय उनकी आयु साढ़े बियालिस वर्ष की थी। उनके शासन में वस्त्र-सहित (सचेल) और वस्त्र-रहित (अचेल) दोनों प्रकार के साधु थे। साध्वियां सचेल ही होती थी। बाह्य वेषभूषा को उच्च-नीचता का आधार या मोक्ष-प्राप्ति का प्रमाण-पत्र नहीं माना जाता था। सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र रूपी तीन धार्मिक रत्नों की परिपूर्ण साधना ही मोक्ष-प्राप्ति का साधन मानी जाती थी। कालान्तर में धीरे-धीरे जैन धर्म के चार सम्प्रदाय (विभाग) हो गए। इनके नाम व इनकी अनुमानित साधु-साध्वी-संख्या (2007 की गणनानुसार) इस प्रकार है-

1. श्वेताम्बर स्थानकवासी सम्प्रदाय- 3625
2. श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय- 700
3. श्वेताम्बर मूर्तिपूजक सम्प्रदाय- 8525
4. दिगम्बर सम्प्रदाय- 1150

कुल साधु-साध्वियां- 14000

इन चार सम्प्रदायों में प्रथम तीन सफेद वस्त्र धारण करते हैं। दिगम्बर मुनि पूर्णतया नग्न रहते हैं। दिगम्बर साधक पूर्णतया नग्न होने से मुख-वस्त्रिका धारण नहीं करते। स्थानकवासी चौड़ी, तेरापंथी लम्बी और मूर्तिपूजक बिना डोरी की मुंहपटटी् रूमाल की तरह हाथ में रखते हैं। स्थानकवासी और तेरापन्थी मूर्तिपूजा नहीं करते, शेष दो करते हैं। श्वेताम्बर-मूर्तिपूजक-मन्दिरों में मूर्ति श्रृंगार-युक्त होती है, दिगम्बर मन्दिरों में श्रृंगार-रहित। मूर्तिपूजक और दिगम्बरों के धर्मस्थान 'मंदिर', स्थानकवासी के 'स्थानक' और तेरापन्थी के 'भवन' कहलाते हैं। सभी सम्प्रदाय एक पेड़ की शाखाओं के समान हैं।

जैन ध्वज

आप जानते ही हैं कि संसार के सब देशों का अपना-अपना ध्वज (झण्डा) है। अलग-अलग रंग का और अलग-अलग आकार का। यह उस देश की संस्कृति, सभ्यता, इतिहास और संकल्पों का प्रतीक होता है। हरेक राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक अपने राष्ट्रीय ध्वज की आन, बान और शान की सुरक्षा करता है।

जैसे प्रत्येक राष्ट्र का अपना ध्वज है, उसी भाँति हरेक धर्म का भी अपना ध्वज होता है। हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बिश्नोई, आर्यसमाजी, ब्रह्मकुमारी आदि सबके अपने-अपने ध्वज हैं। जैन धर्म का भी अपना एक विशेष ध्वज है। सन् 1974 में राजधानी दिल्ली में, भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण-वर्ष पर, जैन धर्म के सभी सम्प्रदायों के धर्माचार्यों की उपस्थिति में सर्वसम्मति से इसे स्वीकार किया गया था। इसमें पाँच वर्ण हैं, जो नवकार मन्त्र के पाँच पदों के, पाँच रंगों के आधार से निर्धारित किए गए हैं। जैन ध्वज के पाँच रंग, पाँच पद एवं पाँच प्रतीक इस प्रकार हैं-

रंग	पद	प्रतीक
लाल	सिद्ध	कार्य की सम्पूर्णता का
पीला	आचार्य	धर्मसंघ की समृद्धि का
सफेद	अरिहन्त	चारित्र की उज्ज्वलता का
हरा	उपाध्याय	ज्ञान की सम्पन्नता का
काला या नीला	साधु	संसार से निर्लेपता का

विशेषः- नवकार मंत्र के पांच पदों में अरिहन्त भगवान ही सम्पूर्ण धर्मसंघ के केंद्र हैं, इसलिए उनका सफेद रंग जैन ध्वज के मध्य में रखा गया है।

जैन प्रतीक

किसी विशेष प्रकार के चिह्न या पहचान या निशानी को प्रतीक कहते हैं। जैसे चुनाव के समय किसी उम्मीदवार को उसकी पहचान के लिए एक चुनाव-चिह्न दिया जाता है, उसी प्रकार विभिन्न देश (जैसे भारत का अशोक-स्तम्भ) और अनेक धार्मिक/सामाजिक/राजनैतिक/संस्थाएं भी अपनी पहचान के लिए एक विशेष प्रकार के प्रतीक का चयन कर लेती हैं।

जैन धर्म का भी अपना एक विशेष प्रतीक है। इसका रेखा-चित्र नीचे मध्य में दिया गया है। सन् 1974 में राजधानी दिल्ली में, भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण-वर्ष पर, जैन धर्म के सभी सम्प्रदायों के धर्माचार्यों की उपस्थिति में इसे सर्वसम्मति से जैन प्रतीक के रूप में स्वीकार किया गया था।

जैन प्रतीक क्या है?वास्तव में यह जैन शास्त्रों के अनुसार लोक (संसार) का नक्शा है। यह लोक लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई में असंख्यात योजन विस्तार वाला है। इसके तीन विभाग हैं- अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक। अधोलोक नीचे है, इसमें नरक गति के जीव दुःख भोगते हैं। मध्यलोक में मनुष्य और तिर्यंच (पशु, पक्षी, कीट, वनस्पति आदि के जीव) रहते हैं। ऊर्ध्वलोक ऊपर है इसमें देवगति के देवता सुख भोगते हैं। सबसे ऊपर सिद्धशिला है जहाँ पर सिद्ध भगवान विराजमान रहते हैं।

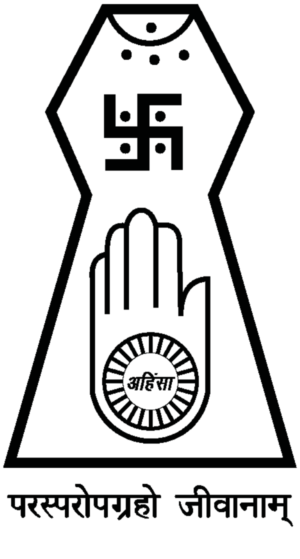

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

जैन तप-विधि

आप जानते ही हैं कि जैन-साधना-पद्धति बड़ी कठोर है। इसमें शरीर की सुविधाएं और संसार के ऐशो-आराम का त्याग किया जाता है। यह शरीर को साधना की भट्ठी में तपाकर सच्चा आत्मिक वैभव प्राप्त करने की प्रक्रिया है। कई विचारकों ने कहा है कि जैनों की तपस्या हाडों की लड़ाई है अर्थात् इसे करने के लिए ऊपर से नीचे तक शरीर का पूरा जोर लगाना पड़ता है। जैन शास्त्रों में अनेक प्रकार की तपस्याओं का वर्णन आता है, यथा-

1. रात्रि-चौविहार- सूर्यास्त के पश्चात् सम्पूर्ण रात्रि तक कुछ भी न खाना, न पीना।
2. नवकारसी-सूर्योदय के पश्चात् 48 मिनट तक कुछ भी नहीं खाना-पीना।
3. पौरसी- सूर्योदय के पश्चात् एक प्रहर (दिन का 1/4 भाग) तक कुछ भी न खाना-पीना।
4. एकाशना-दिन में केवल एक बार, एक जगह बैठकर भोजन करना। पहले और बाद में प्रासुक पानी पी सकते हैं।
5. एकल ठाणा-दिन में केवल एक बार ही भोजन और जल ग्रहण करना।
6. आयम्बिल- घी एवं नमक-रहित चने, रोटी या मुरमुरे (चावल के परमल) पानी में भिगोकर दिन में केवल एक बार खाना। पहले और बाद में प्रासुक पानी पी सकते हैं।
7. उपवास- दिन-भर केवल पानी के सिवाय, सभी प्रकार के खाद्य, पेय पदार्थों का त्याग करना।
8. पौषध- सम्पूर्ण दिन (24घण्टे) सामायिक की वेषभूषा में उपवास करना। दो दिन तक पूर्वोक्त एकाशना आदि करने को बेला (यथा-एकाशना का बेला), तीन दिन के लिए तेला, 5 दिन को पचौला, आठ दिन की अठाई, एक मास तक करने को मास-खमण कहते हैं। सम्पूर्ण एक वर्ष तक एक दिन उपवास, एक दिन पारणा (भोजन करना) करने को वर्षीतप कहते हैं। कई साधक कई-कई वर्ष तक वर्षीतप की साधना करते हैं।
9. संथारा- जब साधक का शरीर सर्वथा असमर्थ हो जाए, उठने, बैठने आदि आवश्यक क्रियाएं करने में भी पीड़ा का अनुभव करने लगे तथा जीवन का अन्तिम क्षण समीप दिखाई देने लगे, तब जीवन-भर के सभी दोषों/पापों की आलोचना करके, सब जीवों से अपनी भूल-चूक की क्षमा याचना करके, सब प्रकार के भोजन (या पानी भी) का त्याग करके, मृत्यु की कामना न करते हुए रहना संथारा कहलाता है। जैन इतिहास में 1, 2, 3 दिन से लेकर 1, 2 या 3 मास तक के संथारों का विवरण मिलता है। सन् 1987 में सोनीपत मण्डी में घोर तपस्वी श्री बदरी प्रसाद जी म. सा. ने 72 दिन का ऐतिहासिक संथारा किया था।

   कई लोग ये कुशंका करते हैं कि संथारा करना आत्महत्या है। यह उनका कोरा भ्रम है। आत्महत्या के मूल में क्रोध या वैर की भावना होती है, भय और बदनामी का डर होता है या फिर अतृप्त काम-वासना का प्रसंग रहता है। इसके विपरीत संथारा, मरण की एक अति उत्तम कला है। इसमें किसी प्रकार की लालसा, भय या जोर जबरदस्ती की भावना नहीं होती। प्रत्येक जैन साधक प्रतिदिन, मृत्यु का क्षण आने पर, संथारा प्राप्त करने की उत्तम भावना (मनोरथ) भाता है।

जैन संस्कृति

किसी विशाल जन-समूह या जाति-विशेष द्वारा समवेत (सामूहिक) रूप में आचरणीय कुछ मर्यादाओं व परम्पराओं को संस्कृति कहते हैं। प्रागैतिहासिक काल से ही इस भारतभूमि पर जैन धर्म व संस्कृति का प्रचार-प्रसार रहा है। जैन संस्कृति की कुछ मुख्य बातें इस प्रकार हैं-

1. **आत्मा की सर्वतन्त्र-स्वतन्त्रता:** जीव की अपनी स्वयं की आत्मा ही अपने सुख, दुख की कर्ता व भोक्ता है। विश्व की कोई अन्य शक्ति इसके प्रारब्ध में हस्तक्षेप नहीं करती। इसीलिए जैन संस्कृति सांसारिक लाभ के लिए कभी देवी-देवताओं के समक्ष हाथ नहीं फैलाती, गिड़गिड़ाकर भीख नहीं मांगती, मन्दिर, मढ़ी, मसाणी, चौंकी, जागरण आदि की पूजा/आराधना के रूप में अपनी झोली नहीं फैलाती। जीवन-यात्रा में कभी कष्ट आ पड़ने पर कहना कि 'हाय रब्बा मार डाला' या 'ईश्वर की ऐसी ही इच्छा थी' और कुछ लाभ हो जाने पर यह कहना कि 'ईश्वर उस मृत आत्मा को शान्ति पहुंचाए और अपने चरणों में स्थान दे'-ये बातें आत्म-कर्तृत्ववादियों के लिए अनुचित ही नहीं, उनके सिद्धान्तों का भी गला घोंटने वाली हैं।

2. **धर्म-देवों की मान्यता:** जैन संस्कृति क्षमाशील, जितेन्द्रिय, सुख-वैभव को पीठ दिखाने वाले वीतरागी पुरूषों की संस्कृति है। यूं तो चार गति के जीवों में 'देव' भी एक जाति है, पर वे लौकिक देव हैं। उनकी उपासना से हमें संसार के सुख, भोग, पुत्र, कलत्र, पद, भवन तो प्राप्त हो सकते हैं, मुक्ति जैसा आध्यात्मिक वैभव नहीं। अध्यात्म-पुरूष के लिए सुखभोग के साधन संसार-भ्रमण को बढ़ाने वाले हैं, घटाने वाले नहीं। इसीलिए जैन संस्कृति में आत्म-कल्याण हेतु धर्म-देवों (साधु, साध्वियों) तथा देवाधिदेवों (तीर्थंकर भगवान्) की पूजा व आराधना का विधान किया गया है। इसीलिए कार्य के प्रारम्भ में 'श्री वीतरागाय नम:,' ॐ नम: सिद्धेभ्य:', या गृहद्वार पर और परस्पर अभिवादन में 'जय जिनेन्द्र', लिखना/बोलना जैन संस्कृति के प्रमुख अंग हैं।

3. **मृतक-क्रिया में आडम्बरहीनता:** जैन दर्शनानुसार मृत्यु के समय आत्मा शरीर से निकलकर तुरन्त ही किसी अन्य गति में जन्म ले लेती है। 'उसकी गति नहीं हुई' या 'उसकी आत्मा अभी भटक रही है' आदि बातें जैन संस्कृति को मान्य नहीं हैं। मृत्यु के बाद आत्मा का मृत शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता, अत: अध्यात्मवादियों के लिए आत्मविहीन निष्प्राण शरीर का कोई उपयोग नहीं रहता। भगवद्गीता के अनुसार भी जैसे व्यक्ति जीर्ण-शीर्ण वस्त्रों का परित्याग कर, अन्य नए वस्त्र ग्रहण करता है, उसी प्रकार आत्मा भी पुराने शरीरों को छोड़कर नए शरीर धारण कर लेती है। मृत्यु-उपरान्त मृत शरीर की अन्तिम क्रिया परिवार-जनों के लिए एक सामाजिक कर्तव्य का निर्वाह तो हो सकती है, पर उसके पीछे अनेक आडम्बर जोड़ देना, यज्ञ, हवन, शिरोमुंडन, प्रीतिभोज करना, नदियों में अस्थि-प्रवाह करना, तीन, तेरह या सत्रह दिन तक शोक मनाना आदि क्रियाएं जैन संस्कृति को मान्य नहीं हैं। मृतक के निमित्त श्राद्ध करने में भी कोई विज्ञान-सम्मत कारण नहीं है। 'खाए कोई और, पेट किसी और का भरे' की युक्ति कोई तर्क-संगत आधार नहीं रखती।

4. **अहिंसा की प्रयोगात्मकता:** 'प्रश्न-व्याकरण-सूत्र' में अहिंसा को दया, करूणा, अनुकम्पा, सर्व-भूत-जीव-क्षेमंकरी आदि 60 नामों से पुकारा गया है। जैन संस्कृति चिन्तन, भाषण एवं आचरण में प्रत्येक स्तर पर अहिंसा का दिग्दर्शन कराती है। श्रावक का 'उपभोग-परिभोग- परिमाण-व्रत' जहां भोजन के स्तर पर मांस-अण्डा व अन्य अभक्ष्य पदार्थों के सेवन का निषेध करता है, वहां कर्म (व्यवसाय) के स्तर पर भी वन जलाना, तालाब सुखाना, वेश्यालय चलाना, विषैले पदार्थों का व्यापार करना, पशु-अंगों का विक्रय करना (हाथी-दांत, चमरी गाय के बाल, कस्तूरी, शाहतूस की शाल आदि), खान खोदना, पशुओं को गाड़ी में जोड़कर किराए पर देना तथा पशुओं को नपुंसक बनाने आदि के व्यवसाय को भी हिंसाप्रधान होने से त्याज्य बताता है। इसी प्रकार विवाह-शादियों में सचित फूलों की सजावट, पशु-पक्षियों की आकृति वाले भोज्य पदार्थों का सेवन, आतिशबाजी या रावण व होलिका आदि का दहन भी हिंसा का प्रेरक/उत्तेजक होने से जैन संस्कृति में वर्जित माना गया है।

5. **साम्प्रदायिक-सद्भावना:** भगवान् महावीर स्वामी ने वर्ण, वर्ग, जाति, लिंग एवं ऊंचक-नीचता के भेदभाव-रहित सभी जीवों को धर्मदेशना दी और सब लोगों को अपने धर्मसंघ में स्थान दिया। उसी भावना के अनुरूप, वर्तमान काल में जैन साधु का मंच ही एकमात्र स्थान है, जहां साम्प्रदायिक भेदभावना से रहित होकर, गुलदस्ते की तरह चुन-चुनकर सब धर्मों का मर्म सुनाया/सिखाया जाता है। जैन संस्कृति खण्डन में नहीं, मण्डन में विश्वास रखती है, इसीलिए जैन लोग कभी हिंसा, साड़फूंक, तोड़फोड़, बन्द एवं बन्दूक संस्कृति में विश्वास नहीं करते।

प्र0 1. यह जगत् कब बना और किसने बनाया?

उ0 यह जगत् अनादि है। अनादि पदार्थ अकृत्रिम होता है। उसका कोई कर्त्ता नहीं होता।

प्र0 2. यदि जगत् का कोई उत्पादक माना जाए, तो क्या आपत्ति है?

उ0 इसके बारे में यह शंका होती है कि फिर सृष्टिकर्त्ता कब उत्पन्न हुआ?यदि वह सादि है तो क्या अपने आप उत्पन्न हो गया या किसी अन्य कारण से उत्पन्न हुआ?यदि सृष्टिकर्त्ता अपने आप उत्पन्न हो सकता है, तब जगत् अपने आप क्यों नहीं उत्पन्न हो सकता है?और यदि जगत्कर्त्ता को उत्पन्न होने में किसी अन्य कारण की आवश्यकता हुई तो वह कारण क्या था?और वह कैसे उत्पन्न हुआ था?अपने आप या किसी अन्य कारण से?इस प्रकार न तो इस प्रश्न का अन्त होगा और न उस जगत्कर्त्ता की उत्पति का समय ही निकल सकेगा। अतः उसे सादि मानना अयुक्त है। और यदि जगत्कर्त्ता अनादि है, तब फिर जगत् को अनादि मानने में कौन-सी बाधा है?

प्र0 3. इस जगत् का अन्त कब होगा?

उ0 कभी नहीं, यह अनन्त है।

प्र0 4. जगत् अनादि-अनन्त है, तब फिर ईश्वर की कोई आवश्यकता ही नहीं?

उ0 नहीं।

प्र0 5. क्या जैन दर्शन ईश्वर को नहीं मानता?

उ0 मानता है।

प्र0 6. किसलिए?

उ0 वस्तु-स्थिति का निरूपण करने के लिए।

प्र0 7. तो वह कौन है?

उ0 जो आत्माएं तपस्या एवं संयम के द्वारा कर्म-मल का विशोधन कर आत्म-स्वरूप को प्राप्त हो जाती हैं, उनको ईश्वर, परमात्मा, सिद्ध या मुक्त कहते हैं।

प्र0 8. तो क्या ईश्वर अनेक हैं?

उ. हां, अनन्त हैं?

प्र0 9. वे कहां हैं?

उ0 ऊर्ध्व-लोक के अग्रभाग पर स्थित हैं।

प्र0 10. उसके आगे क्यों नहीं जाते?

उ0 उसके आगे अलोक है। वहां कोई भी नहीं जा सकता।

प्र0 11. क्या वे कभी इस लोक में भी आते हैं?

उ0 नहीं। क्योंकि वे आत्माएं कर्म-मल धुल जाने से इतनी हल्की हो जाती हैं कि फिर वापस नीचे आ नहीं सकती।

प्र0 12. वहां ठहरी हुई मुक्त आत्माएं क्या करती हैं?

उ0 आत्म-स्वरूप का अनुभव करती हैं।

क्या आप जानते हैं?

1. जैन मुनि बेचरदास जी स्वामी ने, जो महात्मा गांधी की माँ पुतलीबाई के धर्मगुरु थे, उच्च-शिक्षा-हेतु इंग्लैंड जाने से पूर्व महात्मा गांधी को तीन नियम कराए-1. मांस-अण्डा नहीं खाना 2. शराब नहीं पीना 3. पर-स्त्री से सम्बन्ध नहीं रखना। इन नियमों के कारण ही गांधी जी के 'महात्मा' और 'राष्ट्रपिता' बनने की आधारशिला रखी गई।

2. आजकल बच्चों और युवकों में जंक फूड का अत्यधिक प्रचलन है। बर्गर, नूडल, पिज्जा, चाउमीन, इडली, डोसा, हॉट डोग, चिप्स, कुरकुरे आदि जंक फूड कहलाते हैं। बच्चे इनको काफी पसंद करते हैं और स्कूल में भी रोटी की बजाय इन्हें ही खाना पसंद करते हैं। Oxford Dictionary में Junk शब्द का अर्थ 'बेकार और फैंका हुआ पदार्थ (कूड़ा-कर्कट)' किया है और श्रनदा थ्ववक का अर्थ है 'कम पोषण-तत्वों वाला भोजन'। इस तरह के खाद्य पदार्थों में नमक, चिकनाई, मिर्च-मसाले तो बहुत अधिक होते हैं, पर विटामिन, प्रोटीन, खनिज जैसे पोषक तत्व बहुत कम होते हैं। इनमें भोजन हज्म करने के लिए रेशे (Fibres) नहीं होते तथा कृत्रिम रंगों और संरक्षकों (Preservative) से युक्त होने के कारण ये पाचन-क्रिया को भी विकृत करते हैं। इनका अधिक सेवन करने से बच्चे फूलकर मोटे हो जाते हैं, परिणाम-स्वरूप वे तन, मन बुद्धि में काफी सुस्त पड़ जाते हैं। नमक की अधिकता रक्तचाप को बढ़ाती है तथा घी और मैदे की अधिकता आँतों में जमकर पेट खराब करती है। इन बातों के अतिरिक्त एक और तथ्य ये भी है कि ये प्राय: सस्ती और बासी चीजों से बने होते हैं और मूल्य में महंगे होते हैं। बच्चों को इनका शौक कम करके घर की वस्तुएँ शौक से खाने की आदत डाली जाए, तो अच्छा है।

3. कैम्पा, पैप्सी, कोक, थम्सअप आदि शीतल पेय लोग बड़े शौक से पीते हैं। क्या आप जानते हैं कि ये केवल पानी, चीनी, कुछ गैसों तथा कुछ कृत्रिम रंगों के मेल से तैयार होते हैं?बोतल के पानी को हल्का व झागदार बनाने के लिए उसमें कार्बनडाइआक्साइड (CO_2) गैस गुजारी जाती है, जो पेट में जाने पर गड़बड़ करती है। इसीलिए इसके पीने के एकदम बाद डकार आती है, ताकि वह गैस निकल जाए। इसमें पड़ने वाले कृत्रिम रंग शरीर के अनेक अंगों को हानि पहुंचाते हैं। इसमें पड़ने वाला फास्फोरिक एसिड हडिड्यों को, विशेष रूप से 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को, काफी कमजोर करता है। अमेरिका के स्कूलों में इस तरह के शीतल पेयों के बेचने पर पूर्ण प्रतिबन्ध है। अत: हमारी राय तो यही है कि आप कभी कभार भले ही शीतल पेय पीएं, पर इसे नित्य-प्रति का क्रम न बनाएं।

4. चमड़े से बनी वस्तुओं-जूते, चप्पल, बैल्ट, पर्स घड़ी के फीते, जैकेट, टोपी आदि-के निर्माण में जीवित पशुओं की खाल उतारी जाती है। प्राचीन काल में अहिंसक रूप में चमड़ा मिल जाता था, अर्थात् कहीं कोई पशु मरा, उसे गांव का चर्मकार बाहर ले गया, वहां उसका चमड़ा उतारा और जूते-चप्पल बना लिए। मृत पशु के कलेवर को वहां बैठे गीध, चील, कौओ, कुत्ते, सुअर आदि तत्काल खा डालते थे, इससे हवा में प्रदूषण

नहीं फैलता था। पर आज 90 प्रतिशत पशुओं का असामयिक अन्त कत्लखाने में होता है। गांव-गांव, नगर-नगर में फैले कसाई लोग जवान, बूढे, बच्चे, दुधारू, विकलांग या सकलांग सभी प्रकार के पशुओं को खरीद कर कत्लखाने पहुंचाते हैं। वहां उनके पैरों को बांधकर उन पर 200 सैण्टीग्रेड की गर्म-गर्म भाप छिड़की जाती है, उन्हें लाठियों से पीटा जाता है तथा उल्टा लटकाकर जीवित अवस्था में खाल उतारी जाती है। इस प्रकार इतनी क्रूरता से चमड़े के परिधान बनते हैं।

आप देखते ही है कि मृत पशुओं का मांस न मिलने से अब गांव-नगरों के बाहर गीध, चील आदि बैठे दिखाई नहीं देते हैं। आप बाजार जाइए, वहां आपको चमड़े के विकल्प के रूप में सैंकड़ों वस्तुएं मिलेंगी-सस्ती भी, स्थायी भी और फैशनेबल भी। इस प्रकार हमें चमड़े से बनी चीजों का बहिष्कार करना चाहिए।

5. जैन धर्म की प्राचीनता के सम्बन्ध में लोकमान्य बाल गंगाधर 'तिलक' लिखते हैं- ग्रन्थों और सामाजिक आख्यानों से जाना जाता है कि जैन धर्म अनादि है, यह विषय निर्विवाद एवं मतभेद से रहित है। साथ ही, इस विषय में इतिहास के भी सबल प्रमाण हैं। जैन धर्म प्राचीनता में प्रथम नम्बर है। प्रचलित धर्मों में जो प्राचीन धर्म हैं, जैन धर्म उनसे भी प्राचीन है।- 'अहिंसा-वाणी', जुलाई 1956 अंक में।

6. प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय उड़ानों में शुद्ध शाकाहारी भोजन के लिए 'JAIN FOOD' ये गौरवपूर्ण नाम दिया गया है।

7. आचार्य हीर विजय सूरि (1528-1597 ई.) जैन धर्म-शासन के विशेष प्रभावक आचार्य हुए। जब कभी वे बादशाह अकबर के दरबार में पधारते थे, तब बादशाह उनको सिंहासन से खड़े होकर सम्मान देते थे। आचार्यश्री के उपदेश से प्रभावित होकर बादशाह ने न केवल मांसाहार का सेवन काफी कम कर दिया, अपितु जैन पर्व 'पर्यूषण' के आठ दिनों में पशुवध और शिकार पर प्रतिबन्ध लगाने का फरमान भी जारी किया।

8. कर्नाटक प्रान्त के मैसूर जिले में, प्रथम तीर्थंकर भगवान् ऋषभदेव के द्वितीय पुत्र गोम्मटेश्वर बाहुबली की 57 फुट ऊची विशाल प्रतिमा है। यह एक ही प्रस्तर-शिला को काटकर बनाई गई है। सन् 982 में इसका निर्माण हुआ। यह अद्भुत प्रतिभा स्वयं में एक विश्व कीर्तिमान है।

9. मृत्यु-उपरान्त आप द्वारा किए गए नेत्र-दान से दो नेत्रान्ध व्यक्तियों को रोशनी मिल सकती है। आज विश्व में चार करोड़ लोग नेत्रान्ध हैं। अकेले भारतवर्ष में इनकी संख्या 60 लाख से ऊपर है। इनमें 20 लाख लोग कोर्निया (आंख की पुतली के ऊपर एक पतला शीशा) की खराबी से अन्धे हैं। नेत्र-दान द्वारा इन लोगों के अन्धत्व को दूर किया जाता है। दुर्भाग्य से भारत में नेत्र-दान की गति काफी धीमी है। देश में प्रतिवर्ष होने वाली लगभग 50 लाख मौतों में कुल 8000 लोग (16000 नेत्र) ही नेत्र-दान कर पाते हैं। हालांकि प्रतिवर्ष 20-30 हजार लोग और भी पुराने नेत्रान्धों की सूची में नए भर्ती हो जाते हैं। मृत्यु-उपरान्त नेत्र-दान करना प्रत्येक राष्ट्रभक्त नागरिक का कर्तव्य है।

10. मांसाहार की गुण-परीक्षा बारे जितने भी विश्व-व्यापी अध्ययन हुए, उनका एक सर्वसम्मत निष्कर्ष है कि "अधिक मांसाहार-संक्षिप्त जीवन" (Heavy Flesh-eating and short life-expectancy)। उत्तरी ध्रुव

पर रहने वाले एस्किमो, लैप लैण्ड निवासी, ग्रीन लैण्ड निवासी व रूस के कुर्गी कबीलों में मांस की खपत विश्व में सर्वाधिक है, पर उनकी औसत आयु भी कुल 30 वर्ष ही है। इसके विपरीत रूस के काकेशस, दक्षिण अमरीका के युकेटन इण्डियन, इण्डियन टोडा और उत्तरी पाकिस्तान के हुंजा कबीलों में मांस, अण्डे व डेरी-उत्पादों का प्रयोग बिल्कुल नगण्य होने से उनकी आयु का औसतमान 90 वर्ष से 100 वर्ष के मध्य है।

11. शाकाहारी पदार्थों की बजाय मांसाहारी पदार्थों से भोजन के आवश्यक तत्व लेने में बड़ा भारी आर्थिक नुकसान होता है। लगभग आठ कि.ग्रा. अन्न खिलाने पर ही पशु-शरीर में एक कि.ग्रा. मांस तैयार होता है। इस क्रम में पशु को खिलाए गए अन्न का कुल 90 प्रतिशत प्रोटीन, 96 प्रतिशत कैलोरी, 100 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स तथा 100 प्रतिशत रेशों (थ्पइतमे) का विनाश हो जाता है।

12. जैन धर्म का प्रचार-प्रसार प्रागैतिहासिक काल में भी था। राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' के अनुसार ('आजकल' मार्च 1962 के अंक में) 'मोहन जोदड़ो की खुदाई से प्राप्त मोहरों में एक मोहर के एक तरफ एक ध्यानलीन नग्न योगी की आकृति उट्टंकित है और दूसरी तरफ वृषभ जो प्रथम तीर्थंकर भगवान् ऋषभदेव का चिह्न माना जाता है। अत: विद्वानों का यह मानना युक्तिसंगत है कि यह ऋषभदेव की आकृति है और ऋषभदेव वैदिक काल के भी पूर्ववर्ती सिद्ध होते हैं।'

13. मेवाड़ (राजस्थान) के विख्यात योद्धा भामांशाह ओसवाल जैन थे (जन्म 27-1-1547, निधन 28-1-1600)। ये महाराणा प्रताप के मन्त्री भी थे और अन्तरंग सखा भी। इन्होंने जैन होते भी, मातृभूमि के गौरव की रक्षा-हेतु हल्दीघाटी के युद्ध में अपनी तलवार के अद्भुत जौहर दिखाए। महाराणा उस युद्ध में हार कर वनों में भाग गए थे। न उनके पास सेना बची थी, न धन। वे अपने बच्चों को घास की रोटी खिलाने पर मजबूर हो गए थे। एक समय ऐसा भी आ गया, जब वे अपनी राजपूती आन-बान को गिरवी रखकर बादशाह अकबर से सन्धि करने को तैयार हो गए थे। तभी वीर भामांशाह उनके चरणों में पहुंचे और अपनी सारी सम्पत्ति उनके चरणों में अर्पित कर दी। भामांशाह के दिए धन के बल पर महाराणा की 25000 सेना का 12 वर्ष के लिए निर्वाह चला। इससे सेना में एक नवीन उत्साह का संचार हुआ और अन्तत: मुगलसेना को मेवाड़ से खदेड़ दिया गया।

14. पान मसाला, जर्दा, खैनी और गुटका व्यक्ति की तन्दुरुस्ती को गटक लेते हैं। ये चुस्ती को सुस्ती में और मकान को श्मशान में बदल देते हैं। गुटके की पुड़िया में तेजाब की मात्रा काफी अधिक होती है। कई फैक्ट्रियों में तो नशा-वृद्धि के लिए छिपकली को पीस कर गुटके में मिला देते हैं। तेजाब के कारण दाँत, मसूड़े व श्वासनली की बीमारी लग जाती है। धीरे-धीरे मुँह बन्द होने लगता है, दाँत काले पड़ जाते हैं और गाल गल जाते हैं। गुटका कैंसर-रोग का प्रमुख कारण है। 'पान मसाला-मौत मसाला,' 'गुटका खाओ-गाल गलाओ', 'जर्दा खाओ-जीभ जलाओ', 'तमाखू का पान-बीमारी का आह्वान' आदि कुछ प्रसिद्ध नारे हैं।

15. हमारे देश में, जन्म से पूर्व, गर्भावस्था में 'लड़का है या लड़की' इस प्रकार के लिंग-परीक्षण (Pre-netal sex-determination test) से कन्या-भ्रूणों की हत्या का अन्तहीन सिलसिला शुरू हो गया है। सन् 2001

की जनगणनानुसार भारत में लड़के-लड़कियों का अनुपात 1000-927 रह गया है। अनुपात के इस गिरते स्तर से भविष्य में सामाजिक असन्तुलन, स्त्रियों के प्रति अपराधों में वृद्धि तथा बड़ी संख्या में युवकों का विवाह न हो पाना जैसी समस्याएं जन्म लेंगी। भ्रूण-हत्या महापाप है। ऐसा पाप-कर्ता व्यक्ति मर कर नरक गति में जाता है।

16. राजधानी दिल्ली में, लाल किले के ठीक सामने, दिगम्बर जैन लाल मन्दिर में घायल पक्षियों का एक अनूठा हस्पताल है। इसमें प्रतिसमय हजारों घायल पक्षी भर्ती रहते हैं, जिनका पूर्ण वैज्ञानिक विधि से उपचार किया जाता है। स्वस्थ होने बाद पक्षियों को मुक्त गगन में उड़ा दिया जाता है।

17. कार्तिक बदी अमावस्या (दीपावली) की रात्रि को लोगों ने दीपक जलाए, इसका सर्वप्रथम उल्लेख जैन शास्त्र 'कल्प सूत्र' में है। वहां लिखा है कि 24वें जैन तीर्थंकर भगवान् महावीर स्वामी जी के निर्वाण-उपलक्ष्य में नौ मल्ली, नौ लिच्छवी, इन अठारह राजाओं ने, प्रजा-सहित दीपमाला आयोजित की। उनका मानना था कि भाव-ज्योति (अनन्त ज्ञान के पुंज प्रभु) चली गई हैं, अब हम उनकी स्मृति को द्रव्य-ज्योति (दीपमाला) के रूप में कायम रखेंगे।

18. रक्तदान करना प्रत्येक नागरिक का राष्ट्रीय कर्तव्य है। 'जीते-जीते रक्तदान, जाते-जाते नेत्रदान' ये हर राष्ट्रभक्त का मन्त्र होना चाहिए। रक्त हमारे शरीर की सर्वप्रमुख धातु है। मानव शरीर में लगभग 6 लीटर रक्त होता है, जिसमें 5 ली. शरीर में संचरण करता है और एक ली. किसी भी आपातकालीन स्थिति के लिए शरीर में सुरक्षित रहता है। हर तीन मास के बाद नियमित रक्तदान करने से जहां रक्त के अभाव में मरती-सिसकती एक जिन्दगी को नया जीवन मिलता है, वहां शरीर में भी उच्च रक्तचाप, हृदयरोग, कैंसर, एलर्जी जैसी बीमारियां नहीं होती। भारत में प्रतिवर्ष दस लाख जिन्दगियां उचित समय पर रक्त प्राप्त न होने से असमय ही काल के गाल में समा जाती हैं। जहां स्विट्जरलैण्ड में 16 प्रतिशत तथा जापान में 14 प्रतिशत लोग नियमित रक्तदान करते हैं वहां दुर्भाग्य से भारतवर्ष में 0.3 प्रतिशत (333 में से एक) लोग ही रक्तदान करते हैं। आस्ट्रेलिया के जेम्स हैरिसन नामक रक्तदानी ने 804 बार रक्तदान कर के 'गिनीज बुक आफ वर्ल्ड रिकार्ड्स' में अपना नाम लिखाया है।

19. दुनिया के सभी धर्मों के सभी धर्म-गुरुओं में केवल जैन साधु-साध्वी ही ऐसे हैं, जो जीवन भर नंगे पैर, पैदल यात्रा करते हैं।

• भोजन, पानी एवं अन्य आवश्यक वस्तुएँ खरीदते नहीं, गृहस्थों से मांग कर ही ग्रहण करते हैं।

• रात्रि-भोजन नहीं करते।

• अपने केशों का हाथ से लुंचन करते हैं।

• साधु स्त्री का एवं साध्वी पुरुष का स्पर्श नहीं करती।

• अपने पास कोई रुपया, पैसा, सोना, चांदी, बैंक बैलेंस आदि कुछ नहीं रखते।

20. जनसंख्या-प्रतिशत की दृष्टि से विश्व में जैन लोग सर्वाधिक शाकाहारी तथा नशे आदि व्यसनों से मुक्त हैं।

21. प्रथम जैन तीर्थंकर भगवान ऋषभ देव के ज्येष्ठ पुत्र भरत चक्रवर्ती के नाम पर हमारे देश का नाम भारतवर्ष पड़ा।

22. अधिक देर तक टीवी देखने से बच्चों की आँखें कमजोर हो जाती हैं तथा शरीर में मोटापा बढ़ता है। उचित मात्रा में व्यायाम न हो पाने से भविष्य में उच्च रक्तचाप और मधुमेह रोग का खतरा होता है। अश्लील कार्यक्रम देखने से मन में कुसंस्कार जाग्रत होते हैं तथा निर्णय लेने की क्षमता प्रभावित होती है।

23. सन् 1985 में अमरिका में कुल 65 लाख लोग शाकाहारी थे। सन् 2007 में बढ़कर लगभग डेढ करोड़ हो गए। इंग्लैंड में प्रति सप्ताह 2000 लोग मांसाहार त्यागकर शुद्ध शाकाहार अपना रहे हैं। प्रख्यात पोप गाायक माइकल जैक्सन, पोप गायिका मैडोना, अभिनेता अमिताभ बच्चन, अभिनेत्री हेमामालिनी तथा भारतीय क्रिकेट टीम के सर्वाधिक टैस्ट विकेट रिकार्डधारी अनिल कुम्बले पूर्णतः शाकाहारी हैं। और पोप गाायक माइकल जैक्सन भी शाकाहारी थे।

24. पशुपक्षी अनेक प्रकार से मानव-जीवन का उपकार करते हैं। उदाहरणतः हरियाणा प्रान्त के सिरसा नगर में एक गोमाता का मंदिर है। सन् 1991 में नगर में कई उग्रवादी जब सरे बाजार गोलियाँ चलाकर निहत्थे लोगों को भून रहे थे, तब इस गोमाता ने उग्रवादियों का मुकाबला किया। उनकी बीसियों गोलियों से खुद शहीद हो गई, पर बहुत से लोगों को जीवन दान दे गई। उसी गाय की स्मृति में कृतज्ञ नगरवासियों ने इस मंदिर का निर्माण कराया है।

जल ही जीवन है

जल, मिट्टी, वनस्पति और वायु के मेल से हमारा पर्यावरण बनता है। जितनी अधिक उनकी सुरक्षा होगी, जन-जीवन भी उतना ही सुरक्षित और चिरजीवी होगा। आओ, हम जल की महत्ता पर कुछ विचार करें।

'जल ही जीवन है' इस उक्ति के अनुसार पृथ्वी पर जीवन तभी तक है, जब तक जल उपलब्ध है। केंद्रीय भूजल बोर्ड के अनुसार हमारी पृथ्वी पर जल के अथाह भण्डार नहीं है। यूं तो इस पृथ्वी पर कुल 28.1 प्रतिशत भाग में धरती और 71.9 प्रतिशत भाग पानी है, पर वह सारा पानी जन-उपयोगी नहीं है। कुल उपलब्ध पानी का 97.4 प्रतिशत खारे जल के रूप में समुद्रों में भरा है। यह हमारे पीने के उपयोग का नहीं है। शेष बचा कुल 2.6 प्रतिशत पानी ही मीठा है। इसमें भी 1.8 प्रतिशत पर्वतों के ऊपर बर्फ के रूप में जमा है। कुल 0.8 प्रतिशत पानी ही हमारे उपयोग के लिए उपलब्ध है, जो नदी, तालाब, कुओं के रूप में हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। दुर्भाग्य से, पानी की महत्ता को न समझ पाने के कारण अधिकांश लोग इसकी अन्धाधुंध बरबादी करते हैं। ध्यान रखिए, पानी भले ही सस्ता है, पर यह हमारे जन-जीवन के लिए सबसे अधिक आवश्यक भी है। हमें इसका उपयोग बड़ी सीमित मात्रा में, बड़ी सावधानी से करना चाहिए। निम्नलिखित उपाय अपनाकर पानी की अमूल्य बचत कीजिए-

- दांत साफ करते समय, हाथ-मुंह धोते समय, शेव करते समय पानी के नल को व्यर्थ में खुला न छोड़ें।
- स्नान करते समय पानी की टूटी या फव्वारे के नीचे न नहाएं। अलग से बाल्टी में पानी भरकर नहाएं।
- घर के फर्श और गाड़ियों को धोते समय पाइप न चलाएं। पानी की बाल्टी न फैंकें, अपितु गीले कपड़े से सफाई करें।
- छत पर पानी की टंकी भर जाए, तो तुरन्त टंकी बंद कर दें। पानी नीचे न गिरे।
- सुबह, शाम घर/दुकान के आगे या दालान में पानी का व्यर्थ छिड़काव न करें। कुछ Slogans याद रखें: Save water: save life. Water is invaluble: Protect it. More water: More food. Water is life: Live long for Socio-economic development. जल ही जीवन है और जल भी जीवन है

पेड़-पौधे

पेड़-पौधे हमारी धरती के प्राण हैं। ये धरती की रौनक हैं। रंग-बिरंगे फूल-पत्तों से लदे हुए पेड़ वातावरण में सुंदरता और सुगंध भरते हैं। ये पृथ्वी पर जीवन के भी आधार हैं। धरती पर आक्सीजन के स्रोत केवल पेड़ पौधे ही हैं। इनसे हमें छाया, लकड़ी, खाद, फल, फूल प्राप्त होते हैं। देश की अर्थव्यवस्था में इनका बड़ा भारी योगदान रहता है। एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री के अनुसार एक वृक्ष अपने लगभग 50 वर्ष के जीवन में 5.50 लाख रुपए की आक्सीजन विसर्जित करता है। 10 लाख रुपए की कीमत का प्रदूषण रोकता है। फल, फूल, पत्ती, जड़, रस व लकड़ी के द्वारा जनजीवन का उपकार करता है। पृथ्वी की नमी की सुरक्षा करता है। धरती की ऊपरी परत, जो अत्यंत उपजाऊ होती है, उसकी सुरक्षा करता है। मरूस्थल के विस्तार को रोकता है और वर्षा को बुलाता है। पेड़-पौधों के आश्रय से लाखों करोड़ों की संख्या में कृमि, कीट, पशु, पक्षी जीवित रहते हैं।

संस्कृत के एक ग्रंथ में लिखा है- एक बावड़ी दस कुओं के तुल्य है, एक तालाब दस बावड़ियों के तुल्य है, एक पुत्र दस तालाबों के तुल्य है, पर एक वृक्ष दस पुत्रों से भी बढ़कर उपकारी है।

जैन शास्त्रों में वनस्पति-जगत् (पेड़, पौधे लता, बेल) के विषय में बड़ा विस्तृत और गंभीर विचार हुआ है। समस्त वनस्पति को सजीव माना है। उसमें संख्यात, असंख्यात या अनन्त जीव होते हैं। सर जगदीश चन्द्र बसु ने तो 20वीं सदी में वनस्पति को सचेतन सिद्ध किया है, पर भगवान महावीर स्वामी ने तो 2600 वर्ष पूर्व ही वनस्पति के प्राणयुक्त होने की घोषणा की थी। आचारांग-सूत्र में वनस्पति की मानव शरीर से तुलना करते हुए भगवान फरमाते हैं-

- यह मनुष्य जन्म लेता है, यह वनस्पति भी जन्म लेती है।
- यह भी बढ़ता है, वह भी बढ़ती है।
- यह भी चेतना-युक्त है, वह भी चेतना-युक्त है।
- यह भी कटने पर मुरझा जाता है, वह भी कटने पर मुरझाती है।
- यह भी परिवर्तनशील है, वह भी परिवर्तनशील है।
- यह भी भोजन लेने से बढ़ता है, वह भी भोजन लेने से बढ़ती है।
- यह भी भोजन के अभाव में दुर्बल होता है, वह भी भोजन के अभाव में दुर्बल होती है।
- यह भी अनेक अवस्थाओं (बाल्य, यौवन, वृद्धावस्था) को प्राप्त होता है, वह भी अनेक अवस्थाओं को प्राप्त होती है।

ऐसे परम उपकारी पेड़-पौधों की सुरक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। हमें चाहिए कि वृक्षों को न काटें, न उनमें आग लगाएं, बागों में डालियों को न तोड़ें तथा खाद, पानी देकर उनकी वृद्धि करें।

एक विचारक ने लिखा है- असली शिवशंकर तो ये पेड़ पौधे हैं जो जहर पीते हैं और अमृत देते हैं।

शाकाहार

(विश्लेषण-1)

स्वस्थ जीवन का आधार : शाकाहार

प्रिय बालको! भारतीय संस्कृति में, शुरू से ही, आदमी और पशु-पक्षियों का आपसी निर्भरता का नाता रहा है। आदमी पशु-पक्षियों को भोजन और संरक्षण देता है। बदले में वे दूध देते हैं, खेती करते हैं, खाद देते हैं, पौधों का फलीकरण करते हैं। 'गौ हमारी माता है, बैल हमारा बाप है' ये उक्ति भी यही बताती है कि परिवार का आधार भी पशु है और व्यापार का आधार भी पशु ही है। मनुष्य ने चहचहाते पक्षियों से संगीत, घोड़े से शक्ति, हाथी से धीरज, कुत्ते से स्वामिभक्ति, बैल से कर्मठता, खरगोश से सावधानी, सिंह से वीरता और गोमाता से ममता और वात्सल्य का पाठ पढ़ा। पशु-पक्षियों की मुद्राओं पर आधारित अनेक आसन भी प्रचलित हुए, यथा सर्पासन, मकरासन, मत्स्यासन, सिंहासन, कुक्कुटासन, गरुड़ासन, गोमुखासन आदि। ये सभी आसन हमारे शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के आधार हैं तथा मानव व पशु-पक्षियों के बीच प्रगाढ़ संबंधों की सूचना देते हैं।

परन्तु कुछ लोग स्वाद के लिए, कुछ लोग शक्ति के लिए और कुछ लोग फैशन या मनोरंजन के नाम पर पशुओं की हिंसा करके उनका मांस खाते हैं। पर आपको ये ध्यान रखना चाहिए कि पशुओं को मारना और मारकर खाना सबसे बड़ा पाप है। जैसे हम जीना चाहते हैं और मरने से डरते हैं, उसी प्रकार सभी जीव भी जीना चाहते हैं और मरने से डरते हैं।

जैन तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी जी ने फरमाया है कि सभी प्राणी जीना चाहते हैं, कोई मरना नहीं चाहता। सभी सुख से प्रेम करते हैं और दुख से भागते हैं, अत: किसी जीव की हिंसा न करो। हिंसा करना स्वयं में दुख है, नरक है, मोह है और स्व-पर के लिए मृत्युरूप है। मनुस्मृति में भी मनु महाराज ने लिखा है कि कभी मांस नहीं खाना चाहिए, क्योंकि वह कभी पेड़-पौधों के ऊपर नहीं लगता और न ही धरती फोड़ कर पैदा होता है, वह तो साक्षात् जीवित पशु को मार कर ही प्राप्त होता है।

पशु-मांस बहुत ही घिनौना, प्रदूषित और अनेक रोगों का घर होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.) ने कत्लखानों में मारे जाने वाले पशुओं में कफ, न्यूमोनिया, कैंसर, अल्सर, पेचिश, जोड़ दर्द, दमा, दिल की क्लोटिंग आदि 160 रोगों का पता लगाया है।

ब्रिटिश मैडिकल एसोसिएशन ने मांसाहार से उच्च रक्तचाप, हृदयरोग, मोटापा, बड़ी आँत के रोग, मधुमेह, कैंसर, अस्थिक्षय, एन्जाइना, गठिया बाय, गुर्दे की पथरी, अपैण्डिसाइटिस, पैप्टिक अल्सर, एसिडिटी, कब्ज, मनोरोग जैसी बीमारियों का होना सिद्ध किया है। जो लोग जितना अधिक मांस खाते हैं उनकी जीवन-अवधि भी थोड़ी होती है। इसलिए कभी मांस-अण्डा न खाओ।

ध्यान रखना, मांस-अण्डा-युक्त खाद्य पदार्थों के पैकेट पर लाल निशान होता है और पूर्ण शाकाहारी पर हरा निशान। इसलिए सदा हरा निशान देखकर ही कोई खाद्य पदार्थ खरीदो।

एक प्रेरक प्रसंग

एक हाथ में नरक है, एक हाथ में स्वर्ग: गुजरात प्रदेश के जूनागढ़ राज्य का राजा 'खंगार' शिकार खेलने वन में गया। काफी धूप चढ़ गई, पर कोई बड़ा शिकार नहीं मिला। दो-तीन छोटे-छोटे खरगोश पकड़ कर मारे। खरगोशों को पीठ पर लाद कर महलों की ओर चला। उनसे खून टपक रहा था। तलवार भी खून से सनी थी। राजा रास्ता भूल गया। एक तरुण साधु दिखाई दिया, उससे रास्ता पूछा। साधु ने खून देखकर कहा, 'रास्ते तो दो ही हैं- निरपराध को मार कर नरक का रास्ता और मूक प्राणियों को अभय-दान देकर स्वर्ग का रास्ता'। राजा को अपनी भूल का अहसास हुआ। शिकार का त्याग कर घर लौट आया।

शाकाहार

(विश्लेषण-2)

मनुष्य प्रकृति से शाकाहारी है

मनुज प्रकृति से शाकाहारी, मांस उसे अनुकूल नहीं हैं।
पशु भी मानव-जैसा प्राणी, वह मेवा फल फूल नहीं है।

शरीर-यात्रा के संचालन के लिए सब जीवों को भोजन की आवश्यकता होती है। जीव-विज्ञान की दो शाखाएं हैं वनस्पति-वर्ग और प्राणि-वर्ग। पेड़-पौधे अपने पत्तों में स्थित क्लोरोफिल द्वारा अपना भोजन स्वयं तैयार करते हैं। प्राणिवर्ग के सदस्य पशु, पक्षी, कृमि, कीट व मनुष्य अपने भोजन के लिए बाह्य वस्तुओं पर निर्भर करते हैं। प्राणिवर्ग में कई मांसाहारी हैं और कई शाकाहारी हैं। दोनों की शरीर-सरंचना में मूलभूत अन्तर है। मनुष्य शाकाहारी वर्ग से सम्बन्ध रखता है। आइए, जरा परीक्षण करके देखें।

मांसाहारी

1. दांत नुकीले तथा पंजे व नाखून तेज होते हैं।
2. जबड़े सिर्फ ऊपर, नीचे हिलते हैं।
3. भोजन निगलते हैं।
4. जीभ से चपचप कर पानी पीते हैं।
5. पेट में आतों की लम्बाई छोटी होती है।
6. जिगर व गुर्दे बड़े होते हैं।
7. लार में हाइड्रोक्लोरिक एसिड अधिक होता है।
8. पसीना नहीं आता।

शाकाहारी

1. दांत और नाखून चपटे होते हैं।
2. जबड़े ऊपर, नीचे, दाएँ, बाएँ हिलते हैं।
3. भोजन चबाकर खाते हैं।
4. ओठों से पानी पीते हैं।
5. आँतों की लंबाई शरीर से तीन गुणा लंबी होती है।
6. जिगर और गुर्दे छोटे होते हैं।
7. लार क्षारीय (Alkaline) होती है।
8. पसीना आता है।

एक प्रसिद्ध अमरिकी लेखक ने कहा है कि मांस मनुष्य का प्राकृतिक भोजन नहीं है। पालने में झूलते हुए एक छोटे शिशु के पास एक सेब और एक खरगोश को रख दें, तो वह सेब को खाएगा और खरगोश से खेलेगा। यदि वह इससे विपरीत आचरण करे, अर्थात् सेब से खेले और खरगोश को खाए, तो उक्त लेखक ने आपको एक नई कार ईनाम में देने की घोषणा की है। बाजार में बिकती हुई फल-सब्जियों को देखकर खाने का मन करता है, परन्तु चाहे कितनी भी भूख क्यों न हो, सामने खड़े पशु को मार कर खाने की इच्छा नहीं होती।

एक प्रसंग

दूध पीओ, खून नहीं: एक सन्त ने प्रवचन-सभा में श्रोताओं से पूछा, 'आप दूध क्यों पीते हो?' उत्तर मिला, 'खून बनाने के लिए'। सन्त बोले, 'मान लो, दूध पीते-पीते नाक में से खून बहने लगे ओर दूध के प्याले में गिर जाए, तो क्या आप वह दूध पीएंगे?' आवाज आई- 'नहीं, बिल्कुल नहीं'। सन्त जी ने पूछा-क्यों? श्रोताओं ने कहा-'यह दूध खून मिलने से खराब हो गया है, इसलिए'। सन्त ने कहा 'पर यह खून तो आपका ही है'। श्रोता बोले-'तो क्या हुआ?' सन्त बोले-'देखो भाई, खून बनाने के लिए दूध पीते हो, और उसी दूध में आपका खून गिरा है, यदि इसे पीओगे तो व्यर्थ जाता हुआ खून भी बच जाएगा और दूध भी दुगनी ताकत देगा।' पर श्रोता तैयार नहीं हुए। तब सन्त बोले- 'मैं आपको यही बताना चाहता हूं कि जब आप अपने ही खून से मिले दूध को नहीं पी सकते, तो दूसरे प्राणियों का खून और मांस अपने पेट में कैसे डाल लेते हो?' सन्त की तर्कपूर्ण बात सुनकर सबने मांसाहार छोड़ दिया।

अण्डा शाकाहार नहीं है

हर पक्षी का जन्म अण्डे से होता है। 'मुर्गी से अण्डा, अण्डे से मुर्गी' यह कहावत जग-प्रसिद्ध है। परन्तु पुराने जमाने में अण्डा मुख्यत: प्रजनन के काम आता था, आज यह एक विश्वव्यापी उद्योग है। भारतवर्ष में 1950 के दशक में अण्डों की खपत 50 लाख वार्षिक थी, आज यह 10 अरब से ऊपर हो गई है। सरकार का इसे और बढ़ाकर 28 अरब तक करने का लक्ष्य है। अण्डे को बहु-विटामिन कैप्सूल, उच्च-प्रोटीन-दाता, दिमागी-भोजन, खनिज से भरपूर, मांसपेशी-शक्ति-वर्धक व स्वयं में परिपूर्ण आहार कहकर विज्ञापित किया जाता है। इसे 'शाकाहारी, 'मशीनी', 'आलू' या 'राम-लड्डू' का नाम देकर भोली जनता को दिग्भ्रमित किया जाता है, परन्तु तथ्य ये नहीं है।

शाकाहार नहीं है अण्डा, वह भी मां का लाल है।
उसको शाकाहार बताना, यह दुष्टों की चाल है॥

शाकाहार वह है जो पेड़-पौधों के ऊपर लगे, किन्तु अण्डा तो मुर्गी के योनि-मार्ग से पैदा होता है। स्त्री के रज:स्राव के समान वह मुर्गी का रज:स्राव है, तरल-गर्भ है, गर्भ-रस है और अपरिपक्व भ्रूण है। यद्यपि अनिषेचित अण्डा (unfertilized) मुर्गे के संयोग के बिना ही उत्पन्न होता है, परन्तु वह भी सजीव है। इसकी हर कोशिका (cell) में प्राण-शक्ति है। इसके खोल में 25 से 30 हजार तक सूक्ष्म छिद्र होते हैं, जिनसे यह आक्सीजन लेता है और कार्बनडाइ आक्साइड छोड़ता है। इसी के ऊपरी भाग में ब्लास्टो-डिस्क (जनन-बिम्ब) और कैलाजा होते हैं। ये सारी बातें अण्डे को जीवयुक्त सिद्ध करती हैं। 30 से ऊपर तापमान में रखे जाने पर इसमें सूक्ष्म रोगाणु (microbes) पैदा होने लग जाते हैं। अण्डों के ताजे या बासी होने का भी कोई पता नहीं लग पाता। साथ ही ये बाहर के वातावरण से भी बड़ी जल्दी प्रभावित होते हैं। अण्डे को टी.बी. के रोगी के पास रख देने से टी.बी. के रोगाणु उसमें संक्रान्त हो जाते हैं।

अण्डा कभी मशीनी भी नहीं होता। आज तक कोई ऐसी मशीन नहीं बनी जो अण्डे उत्पन्न कर सके। हैचरी-फार्मों (मुर्गी के चूजे बनाने वाले) में मुर्गी से उत्पन्न अण्डों को 18 दिन के लिए इन्क्यूबेटर मशीन में रखा जाता है, ताकि अण्डे फूट कर चूजे बाहर आ जाएं या फिर लेयर मुर्गी के अण्डों को सड़ने से बचाने हेतु फ्रिज में रखा जाता है, इसे देखकर कई अल्पज्ञ लोग ये भूल कर बैठते हैं कि अण्डा मशीन से पैदा होता है।

प्रत्येक सौ ग्राम अण्डे में 450 से 500 मिलीग्राम तक कोलैस्ट्रोल होता है। एक अण्डे से खून में पांच मि. ग्रा. कोलैस्ट्रोल की वृद्धि हो जाती है। खून में कोलैस्ट्रोल को स्तर 200 मि. ग्रा. से अधिक होने पर उच्चरक्तचाप और हृदय-रोगों की शुरुआत हो जाती है। 30 प्रतिशत अण्डों में डीडीटी विष पाया जाता है। मुर्गीखानों में बीमारी रोकने हेतु प्रयोग किया गया विषैली दवाओं का छिड़काव इस विष का कारण है। अमरीका में मुर्गी के मांस व अण्डों में 143 दवाओं व कीटनाशकों के अवशेष प्राप्त हुए, जिनमें 42 दवाएं कैंसर-कारक, 20 जन्म-सम्बन्धी-विकार-उत्पादक और छ: अंग-भंग-कारक थी। अण्डे खाने से शरीर में गर्मी पैदा होती है और पचने में भारी होने से पेट में तीव्र-अम्लता

उत्पन्न होती है। अण्डे का पीलापन भी स्वाभाविक न होकर कृत्रिम रूप से उत्पादित होता हहै, इससे भी कई रोग पनपते हैं। अण्डे में भोजन हज्म करने के लिए रेशे नहीं हैं तथा ऊर्जा-उत्पादन-हेतु आवश्यक कार्बोहाइड्रेट्स का सर्वथा अभाव होता है। इंग्लैण्ड के डा. आर. जे. विलियम के अनुसार अण्डे से लकवा, एग्जिमा, आंतों की सड़ान, पेचिश व मन्दाग्नि जैसी बीमारियां होती हैं। जर्मनी के प्रो. एगर बर्ग के अनुसार अण्डा कफ के लिए भी 52 प्रतिशत उत्तरदायी है।

सण्डे हो या मण्डे, कभी न खाओ अण्डे: स्वाधीनता-संग्राम के दिनों की बात है। कांग्रेस का अधिवेशन चल रहा था। डा. राजेन्द्र प्रसाद अध्यक्ष थे। विचार-विमर्श के लिए 300 पृष्ठ की रिपोर्ट तैयार की गई थी। ऐन मौके पर फाइल गुम हो गई। पं. नेहरू काफी विचलित हो गए। डा. राजेन्द्र बाबू बोले, परेशान क्यों होते हो। लिखो, मैं लिखा देता हूँ। कुछ पृष्ठ लिखाए। तभी फाइल मिल गई। नेहरू जी ये देखकर चकित हो गये कि सभी वाक्य, पूर्ण विराम, कोमा, अर्धकोमा आदि उसी रूप में थे। पूछा-इतनी प्रतिभा कहां से हासिल की?राजेन्द्र बाबू हंस कर बोले, 'ये दिमाग दूध पीने से मिला है, अण्डे खाने से नहीं'।

शाकाहार

(विश्लेषण-4)

शाकाहार v/s मांसाहार : पोषण-पक्ष

पिछले विश्लेषणों से आप भलीभांति जान चुके हैं कि मनुष्य का प्राकृतिक आहार शाकाहार ही है। उसकी दन्त-संरचना, नाखूनों की आकृति, छोटी आंत का आकार तथा लार में क्षार-तत्व की सत्ता उसका शाकाहारी होना सिद्ध करती है। शाकाहार जहां पूर्ण अहिंसक और दया-पूर्ण तरीके से प्राप्त होता है, वहां मांसाहार के पीछे अन्तहीन शोषण, मारकाट, चीख-पुकार, जोर-जबरदस्ती और खून-खराबा छिपा है। इसलिए 'गीता' में शाकाहार को शुद्ध सात्विक आहार बताते हुए लिखा है कि यह आयु, बल, बुद्धि और आरोग्य को बढ़ाने वाला है तथा शान्ति, शक्ति और समरसता का दाता है। कोई व्यक्ति शुद्ध शाकाहारी तो हो सकता है, शुद्ध मांसाहारी नहीं। मांसाहार को सभी धर्म-ग्रंथों में तामसिक भोजन कहकर उसकी घोर निंदा की गई है। सड़कों के किनारे आपने देखा होगा कि शुद्ध शाकाहारी ढाबों के ऊपर ही 'शुद्ध वैष्णव भोजनालय' लिखा मिलता है, मांसाहारी ढाबों/होटलों पर नहीं। शाकाहार के संबंध में कुछ और बातें भी ज्ञातव्य हैं-

शाकाहार का 'शाक' शब्द संस्कृत की 'शक्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है-योग्य होना, समर्थ होना, सहन करना। अर्थात् वह आहार शाकाहार है, जो मनुष्य को बलशाली और पराक्रमी बनाए और उसकी योग्यताओं का विकास करे। अंग्रेजी का Vegetarian शब्द भी लेटिन भाषा के Vegetus शब्द से जन्मा है, जिसका अर्थ है- स्वस्थ, समग्र, समर्थ, विश्वस्त, जीवन्त और ताजा। इन अर्थों से शाकाहार की विशेषताओं की थाह सहज ही मिल जाती है।

वैज्ञानिक मानते हैं कि हमारे ग्रह पर जीवन की शुरुआत आज से 350 करोड़ वर्ष पूर्व हुई। जीवधारियों का पुरखा डायनासोर, जो आज से 10 करोड़ वर्ष पहले धरती पर विचरता था, शुद्ध शाकाहारी था। वह बहुत भीमकाय प्राणी था। उसकी शक्ति और विशालता का रहस्य उसके शाकाहारी होने में ही निहित था।

विश्व के सभी धर्मों-हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध, पारसी, यहूदी आदि-ने अपने धर्मग्रंथों में भोजन-हेतु पशु-पक्षियों को मारने की मनाही की है। भले ही कुछ सिख लोग मांसाहारी हों, पर यह सर्व-विदित है कि दुनिया के किसी भी गुरुद्वारे के लंगर में कभी भी मांस-अण्डा नहीं परोसा जाता। यूनानी दार्शनिक पायथागॉरस (582-500 ई. पू.)महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टीन (1879-1955), प्रख्यात उपन्यासकार जार्ज बर्नार्ड शॉ (1859-1950) तथा महान चित्रकार ल्योनार्दो-दा-विन्सी (1452-1519) आदि सभी का यही अनुभव था कि शाकाहारी भोजन ही अद्‌भुत शान्ति, समरसता, स्वास्थ्य और स्फूर्ति देने वाला है। शाकाहारी भोजन में भोजन के सभी आवश्यक तत्व-कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, वसा, खनिज और विटामिन पूर्ण तथा संतुलित मात्रा में उपलब्ध हैं। भारत सरकार के हैल्थ बुलेटिन सं. 23 के अनुसार विभिन्न खाद्य पदार्थों के पौष्टिक तत्वों का तुलनात्मक चार्ट इस प्रकार है-

शाकाहारी पदार्थ (मानक: प्रति सौ ग्राम में कुल ग्राम)

वस्तु का नाम	प्रोटीन	फैट (चिकनाई)	खनिज तत्व	कार्बोहाईड्रेट्स	कैल्शियम	फॉस्फोरस	लौह तत्व	कैलोरी
मूंग	24.0	1.3	3.6	56.6	0.14	0.28	8.4	334
उड़द	24.0	1.4	3.4	60.3	0.20	0.37	9.9	3.50
अरहर	22.3	1.7	3.6	57.2	0.14	0.26	8.8	333
मटर	22.9	1.4	2.3	63.5	0.03	0.36	5.0	358
चना	22.5	5.2	2.2	58.9	0.07	0.31	8.9	372
चावल	24.6	0.7	3.2	55.7	0.07	0.49	3.8	327
सोयाबीन	43.2	19.5	4.6	20.9	0.24	0.69	11.5	423
बादाम	20.8	58.9	2.9	10.5	0.23	0.49	3.5	655
काजू	21.2	46.9	2.4	22.3	0.05	0.45	5.4	596
खोपरा	4.5	41.6	1.0	13.0	0.01	0.24	1.7	444
तिल	18.3	43.3	5.2	25.2	1.44	0.57	10.5	564
मूंगफली	35.5	39.8	2.3	19.3	0.05	0.39	1.6	549
पिश्ता	19.8	53.5	2.8	16.2	0.14	0.43	13.7	626
अखरोट	15.6	64.5	1.8	11.0	0.10	0.38	4.8	687
जीरा	18.7	15.0	5.8	36.6	1.08	0.49	31.0	356
पीपल	6.4	2.3	4.8	65.4	1.23	0.19	62.1	310
मेथी	26.2	5.8	3.0	44.1	0.16	0.37	14.1	333
घी	–	98.0	–	–	–	–	–	900
सप्रेटा दूध	38.3	0.1	6.8	31.0	13.7	1.00	1.04	357
मांसाहारी पदार्थ								
अण्डा	13.3	13.3	1.9	–	0.06	0.22	2.1	173
मछली	22.6	0.6	0.8	–	0.02	0.19	0.9	91
बकरे का मांस	18.5	13.3	1.3	–	0.15	0.15	2.5	194
भेड़ का मांस	18.7	4.4	1.0	–	0.03	0.2	2.3	114
गाय का मांस	22.6	2.6	1.0	–	0.01	1.19	0.8	114

भोज्य पदार्थों से प्राप्त होने वाली ताप-शक्ति को कैलोरी कहते हैं। एक ग्राम प्रोटीन और एक ग्राम कार्बोहाइड्रेट्स में चार कैलोरी और एक ग्राम वसा में नौ कैलोरी होती हैं। एक स्वस्थ मनुष्य को दिनभर में लगभग 2800 कैलोरी और एक स्त्री को कुल 2400 कैलोरी की आवश्यकता होती है। अधिकांश पोषण-विज्ञानियों के अनुसार मनुष्य को अपनी कुल दैनिक कैलोरी का 60 प्रतिशत भाग कार्बोहाइड्रेट्स से, 20 प्रतिशत वसा से और 5-6 प्रतिशत प्रोटीन से ग्रहण करना चाहिए। शरीर की ऊर्जा- आपूर्ति का प्रमुख स्रोत कार्बोहाइड्रेट्स है। उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि मांसाहारी पदार्थों में इसका पूर्ण अभाव है। इस कारण मांसाहारियों को अपनी दैनिक कैलोरी की आपूर्ति प्रोटीन या वसा के द्वारा करनी पड़ती है। ये दोनों काफी महंगे पड़ते हैं और अधिक प्रमाण में खाए जाने पर अनेक समस्याएं भी पैदा करते हैं।

ऊर्जा-प्रवाह (Flow of Energy) के सिद्धान्तानुसार वनस्पति पदार्थों में मांसाहार से दस गुणी अधिक ऊर्जा निहित है। इसीलिए दुनिया में सबसे अधिक तेज भागने वाले, कड़ी मेहनत करने वाले, भारी भरकम शरीर वाले, शक्तिशाली तथा ऊंचे व लम्बे कद के जानवर-हाथी, घोड़े, ऊंट, बैल, जिराफ, बारहसिंगा व व्हेल मछली पूर्णतः शाकाहारी ही हैं। शक्ति का माप-दण्ड भी इसीलिए अश्व शक्ति (Horse-Power) ही स्वीकार किया गया है। सभी प्रकार के प्रोटीन व विटामिनों का मूल-उद्गम स्रोत पेड़-पौधे ही हैं। पशुओं के दूध या मांस में जो प्रोटीन व विटामिन मिलते हैं, वे भी उनके द्वारा खाए गए वनस्पति-पदार्थों के ही उत्पाद हैं। कई लोग ये मानते हैं कि मांस से प्राप्त प्रोटीन उत्तम श्रेणी के और वनस्पतियों से प्राप्त प्रोटीन निम्न श्रेणी के हैं, परन्तु ये भेद युक्ति-संगत नहीं है। पाचन-प्रक्रिया के दौरान सभी प्रोटीन एमिनो-एसिड (प्रोटीन बनाने वाले घटक) के रूप में विखण्डित हो जाते हैं और फिर पुनः संयुक्त होकर प्रोटीन का आकार ग्रहण करते हैं। अतः इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि प्रोटीन का स्रोत पशु-मांस है या वनस्पति।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि विटामिन सी, जिसे डाक्टरों ने अमृतोपम तथा सर्व-रोग-हर (Universal antioxidant) कहा है, वह केवल शाकाहारी पदार्थों में ही पाया जाता है। आज के इस ऑटोमोबाइल के युग में, कार्बन-मोनोक्साइड जैसे खतरनाक जहर से लड़ने के लिए यह सुदृढ रक्षा-कवच है। आंवला, अमरूद, सन्तरा, मौसमी, हरी मिर्च, नींबू, पालक, फूलगोभी आदि इसके समृद्ध स्रोत हैं।

इस प्रकार शाकाहारी भोजन में भोजन के सभी आवश्यक तत्व पर्याप्त मात्रा में और पूर्ण अहिंसक रूप में विद्यमान हैं। इसीलिए अब अमेरिका, इग्लैण्ड, जापान, जर्मनी आदि विकसित देशों में शाकाहारी भोजन द्वारा ही कैंसर, हृदयरोग आदि जानलेवा रोगों का सफल उपचार किया जा रहा है। बिना पशु-वध किए ही स्वस्थ और संतुलित भोजन मिल रहा हो, तो क्यों किसी मूक, निरीह, निर्दोष व निहत्थे जानवर का खून बहाया जाए?

एक प्रसंग

सबको प्यारे प्राण :

एक राजा अपनी एक रानी से बहुत प्यार करता था। एक बार एक ज्योतिषी से पूछा–'इसकी आयु कितनी है?' ज्योतिषी ने पहले तो टालना चाहा, पर राजा द्वारा अभय-दान देने पर कहा, 'आज से सातवें दिन ये पेट-दर्द से मर जाएगी।' राजा ने पूरे प्रबन्ध किए, पर संयोग से रानी मर गई। राजा को उस ज्योतिषी पर बड़ा क्रोध आया। उसे बुलाकर तलवार निकालकर पूछा– 'तुमने रानी को तो मार दिया, अब बताओ, तुम्हारी आयु कितनी है?' ज्योतिषी सावधान था। बोला– 'आपकी मृत्यु से ठीक चार दिन पहले मेरी मृत्यु होगी'। राजा के हाथ से तलवार छूट कर नीचे गिर गई। सोचा, इसे मार दिया तो चार दिन बाद मुझे भी मरना पड़ेगा। अपने प्राणों की तरह यदि जीव-मात्र के प्राण भी हमें इसी प्रकार प्यारे हो जाएँ, तो फिर दुनिया से हिंसा और आतंकवाद का खात्मा हो जाएगा।

एक राजा अपनी एक रानी से बहुत प्यार करता था। एक बार एक ज्योतिषी से पूछा–'इसकी आयु कितनी है?' ज्योतिषी ने पहले तो टालना चाहा, पर राजा द्वारा अभय-दान देने पर कहा, 'आज से सातवें दिन ये पेट-दर्द से मर जाएगी।' राजा ने पूरे प्रबन्ध किए, पर संयोग से रानी मर गई। राजा को उस ज्योतिषी पर बड़ा क्रोध आया। उसे बुलाकर तलवार निकालकर पूछा– 'तुमने रानी को तो मार दिया, अब बताओ, तुम्हारी आयु कितनी है?' ज्योतिषी सावधान था। बोला– 'आपकी मृत्यु से ठीक चार दिन पहले मेरी मृत्यु होगी'। राजा के हाथ से तलवार छूट कर नीचे गिर गई। सोचा, इसे मार दिया तो चार दिन बाद मुझे भी मरना पड़ेगा। अपने प्राणों की तरह यदि जीव-मात्र के प्राण भी हमें इसी प्रकार प्यारे हो जाएँ, तो फिर दुनिया से हिंसा और आतंकवाद का खात्मा हो जाएगा।

आतिशबाजी v/s पर्यावरण प्रदुषण

आप जानते ही हो कि धरती पर जीवित रहने के लिए श्वास लेना जरूरी है। पृथ्वी पर रहने वाले सभी पेड़-पौधे, जीव-जन्तु तथा मनुष्य श्वास लेकर ही अपनी जीवन-यात्रा को संचालित करते हैं। पृथ्वी के अतिरिक्त अन्य ग्रह, उपग्रह या सौर-गंगाओं में जहां प्राण-वायु (आक्सीजन) नहीं है, वहां पर जीवन भी सम्भव नहीं है। आपने देखा होगा कि एवरैस्ट आदि ऊंचे पर्वतों, अन्टार्कटिका आदि बर्फ से ढके महाद्वीपों तथा अन्तरिक्ष में चन्द्र, मंगल, बृहस्पति आदि ग्रहों की यात्रा में लोग कृत्रिम आक्सीजन लेकर ही अपनी जीवन-यात्रा चलाते हैं।

हमारे वायुमंडल में अनेक गैसें हैं। इनमें आक्सीजन कुल 21 प्रतिशत है। जीवन-निर्वाह-हेतु इसका भरपूर और शुद्ध रूप में उपलब्ध होना अति आवश्यक है। हमें कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए, जिससे प्राण-यात्रा का ये अमूल्य स्रोत बाधित या समाप्त हो।

आप देखते हैं कि विवाह, त्यौहार, धार्मिक शोभा-यात्रा तथा खेलों में विजय-श्री आदि के प्रसंग पर लोग आतिशबाजी फोड़कर अपनी खुशी प्रकट करते हैं। खुशी होना और उसे प्रकट करना अच्छी बात है, पर आप ये भी तो सोचो कि ऐसा करने से हमारे पर्यावरण को कितना नुक्सान पहुंचता है?

आतिशबाजी में अनेक भारी और विषैली गैसें मौजूद होती हैं, जैसे copper, cadmium, lead, manganese, potassium, sodium, zinc, nitrate, nitrite, phophorus, sulphur आदि।

इनके फैलने से आक्सीजन तो नष्ट होती ही है, सिरदर्द, मानसिक विक्षिप्तता, गले व छाती में जलन, कान के पर्दे फटना, श्वास-निरोध, एलर्जी आदि की शिकायतें भी हो जाती हैं। विशेष रूप से हृदय-रोगी, दमा और फेफड़े के रोगियों का तो जीना ही अति कठिन हो जाता है। आतिशबाजी छोड़ने से स्थान-स्थान पर आगजनी की घटनाएं होती हैं, जिनसे करोड़ों, अरबों रुपये की सम्पत्ति का नुकसान होता है और कई अमूल्य जानें चली जाती हैं। बम-पटाखों के शोर से पशु-पक्षी भयभीत हो जाते हैं, कइयों के गर्भ गिर जाते हैं और रात के अंधेरे में राकेटों के चक्रव्यूह में घिर कर हजारों पक्षी बेमौत मारे जाते हैं।

आतिशबाजी-निर्माण में अधिकांशतः कम उम्र के बच्चों को फैक्ट्रियों में रखा जाता है। ये भारत सरकार के बाल-मजदूरी-निवारण-अधिनियम का सरासर उल्लंघन तो है ही, जहरीले रसायनों के सम्पर्क में आने से उनको एलर्जी, त्वचा फटना, श्वास, दमा तथा कई बार हृदय और कैंसर तक की बीमारियां भी लग जाती हैं।

आतिशबाजी ध्वनि-प्रदूषण का भी मुख्य कारण है। अधिकांश बम-पटाखों के फटने से 80 डैसीबल या इससे अधिक शोर होता हैं। ध्यान रहे कि मानव की ध्वनि-सहन-क्षमता केवल 60 डैसीबल तक ही है। इससे 10 डैसीबल बढ़ने का अर्थ-है उससे आगे और दुगना शोर। इतने शोर से शरीर में रक्तचाप की वृद्धि होती है, हृदयाघात का डर रहता है, नींद लेने में खलल पड़ता है, बच्चों में भयवृति जागती है और गर्भवती महिलाओं को मानसिक त्रास झेलना पड़ता है। उपर्युक्त तथ्यों के मद्देनजर आपसे हमारा आग्रह है कि आतिशबाजी छोड़कर पर्यावरण को प्रदूषित न करें। हां, यदि आपको धन ही खर्च करना है, तो मिठाई खाएं, सत्साहित्य खरीदें या फिर गरीब बस्तियों में जाकर फल, मिठाई, वस्त्र, बर्तन और पुस्तकों का वितरण करें।

अहिंसा और पर्यावरण सन्तुलन

पिछले लेख में आप पढ़ चुके हैं कि जीवन जीने के लिए सुरक्षित पर्यावरण का होना अति आवश्यक है। शुद्ध पृथ्वी (मिटटी), जल, वायु और वनस्पति के योग से पर्यावरण की संरचना होती है। जैन धर्म संसार का एकमात्र ऐसा धर्म है जिसने शुरू से ही पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति, इन पांचों को जीव माना और इनके संरक्षण की प्रेरणा दी। विज्ञान के क्षेत्र में 20वीं सदी में सर्वप्रथम सर जगदीश चन्द्र बसु ने वनस्पति को सजीव (चेतनायुक्त) सिद्ध किया। वैज्ञानिक अब कृषि-योग्य भूमि को जीवित मृदा (Living Soil) कहने लगे हैं। कैप्टन स्कोर्सबी ने पानी की एक बूंद में लगभग 3600 सूक्ष्म जीवों की गणना की है और वायु में भी करोड़ों-अरबों बैक्टीरिया/वायरस की सत्ता अब वैज्ञानिक मानने लगे हैं। संक्षेप में, ये जैन शास्त्रों के जीव-विज्ञान की ही पुष्टि है। आज पर्यावरण की सुरक्षा पर विश्वव्यापी विचार-विमर्श हो रहा है। दुनिया की सरकारें विभिन्न सम्मेलनों में पर्यावरण-प्रदूषण मिटाने/रोकने-हेतु विशेष जोर दे रही हैं और इस हेतु करोड़ों-अरबों डालर भी खर्च कर रही हैं। इस पाठ में हम व्यक्तिगत और बाह्य-वस्तुगत-स्तर पर पर्यावरण के प्रदूषण-कारक तत्वों पर विचार करेंगे।

1. व्यक्तिगत-स्तर

मानव शरीर में कार्य करने के तीन साधन हैं-मन, वचन एवं काया। इन तीनों की शुभ-अशुभ-प्रवृत्ति से पर्यावरण पर सकारात्मक/नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं। जरा गौर करें-

(क) **मानसिक प्रदूषण**- मानव का मन अत्यन्त ऊर्वर है। उसमें प्रतिसमय अनेक प्रकार की तरंगें उठकर प्रवाहित होती हैं। ध्वनि-तरंग, चुम्बक-तरंग तथा प्रकाश-तरंगों की तरह विचार-तरंगें भी सारे ब्रह्माण्ड में फैल जाती हैं। मस्तिष्क की शान्तिप्रदायक तरंगें अहिंसा, मित्रता, क्षमा, प्रेम तथा सर्व-कल्याण-कामना की शुभ भावनाओं से ओतप्रोत होती हैं। वैज्ञानिक ऐसी तरंगों को 'अल्फा तरंग' कहते हैं, ये पर्यावरण के सन्तुलन में सहायक होती हैं। इनके प्रभाव से प्रकृति का वातावरण शान्त/सुखद रहता है। इसके विपरीत हिंसा, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा व स्वार्थ-लिप्सा से ओतप्रोत तरंगें पर्यावरण में असन्तुलन उत्पन्न करती है। वैज्ञानिक इन्हें बीटा, थीटा आदि नामों से पुकारते हैं। ये ब्रह्माण्ड में यात्रा करती-करती ओजोन परत को भी क्षति-ग्रस्त करती हैं। हमें ऐसी दुर्भावनाओं से बचना चाहिए।

(ख) **वाचिक प्रदूषण**-सृष्टि के सभी चराचर जीवों में केवल मनुष्य के पास ही बोलचाल की क्षमता है। मानव की वाणी तलवार का भी और ढाल का भी, विष का भी और अमृत का भी तथा जख्म का भी और मरहम का भी काम करती है। पशु, पक्षी, कृमि, कीट, जल वनस्पति आदि के जीवों में भाषा की क्षमता न होने से न कोई झगड़े होते, न वे कोई अधिक रचनात्मक कार्य कर सकते। हित, मित (अल्प) और सत्य तथा मिश्री-से मधुर वचन बोलने से सारा वातावरण शुभ परमाणुओं से भर जाता है। इसके विपरीत स्व-प्रशंसा, पर-निन्दा, वाक्कलह और चीखने- चिल्लाने से पर्यावरण कुप्रभावित होता है और सर्वत्र वैर, विरोध, हिंसा और मारधाड़ की प्रवृत्ति बढती है।

(ग) **कायिक प्रदूषण**–शरीर के स्वेद (पसीना), श्लेष्म, मल व मूत्र के द्वारा तो प्रदूषण फैलता ही है, शरीर-सज्जा के साधनों-ब्लीचड वस्त्र, श्रृंगार-प्रसाधन व चमड़े के सेवन से तथा लड़ाई-झगड़ा, मारपीट की कुत्सित प्रवृत्तियों से भी पर्यावरण प्रभावित होता है। पर्यावरण-सुरक्षा-हेतु हमें खान, पान, परिधान, भोग, उपभोग के साधनों में संयम का परिचय देना चाहिए तथा दान, शील तप व शुभ भावना का उच्च आदर्श निभाना चाहिए।

2. बाह्य-वस्तु-गत-स्तर

आज विज्ञान का युग है। 21वीं सदी चल रही है। विश्व के अनेक देशों को अलग-अलग स्तर पर बढ़ती जनसंख्या, भुखमरी, जलाभाव, अशिक्षा, बेरोजगारी, प्राकृतिक आपदा, गरीब-अमीर की बढ़ती खाई, शोषण एवं स्वास्थ्य-सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। विभिन्न सरकारें उसके लिए अपने स्तर पर प्रयास भी कर रही हैं, पर सही सूझबूझ और दूरदृष्टि के अभाव में उन प्रयासों द्वारा पर्यावरण को गम्भीर क्षति पंहुच रही है। कुछ तथ्यों पर ध्यान देना पर्याप्त रहेगा।

- बढ़ती जनसंख्या का पेट भरने के लिए अथवा निर्यात द्वारा अधिकाधिक लाभ कमाने के लिए आज लोगों द्वारा धरती का अन्धाधुन्ध दोहन किया जा रहा है। चारों तरफ हजारों-लाखों की संख्या में हरे पेड़ काटे जा रहे हैं। धरती के भीतर सैकड़ों फुट की गहराई में सबमर्सिबल पम्प फिट करके काफी मात्रा में पानी खींचा जा रहा है, इस कारण भूजल का स्तर काफी नीचे चला गया है और जल-प्राप्ति के पारम्परिक स्रोत-नल, कुएं, बावड़ी, तालाब आदि सूखने लगे हैं।
- विश्व में साठ वर्ष पूर्व जितने पैस्टीसाइड का उत्पादन होता था, आज उससे 13000 गुणा अधिक होता है। जितना उत्पादन उस समय 6 वर्षों में होता था, उतना आज कुछ ही घण्टों में हो जाता है। अकेले अमेरिका में ही प्रतिवर्ष 150 करोड़ पौण्ड पैस्टीसाइड का उत्पादन होता है, जो प्रत्येक अमेरिकी के हिस्से में पांच पौण्ड आता है। पशुओं के चारे में डीडीटी, फास्जीन, डील्डीन, डायोक्सीन, जाइकोन-बी, क्लोर्डेन, हैप्टाक्लोर, एन्ड्रीन, माइरैक्स, पीसीबी, टोक्साफीन, इन्डेन आदि अति विषैले रसायनों का छिड़काव किया जाता है। इन दवाओं से शरीर की थायमस आदि ग्रन्थियां व शरीर का प्रतिरक्षा-तन्त्र क्षतिग्रस्त होता है। साथ ही कैंसर, दमा, हृदय-रोग, गर्भपात, नवजात शिशुओं में अपंगता, खुजली, अन्धत्व, गर्भाशय के रोग, वन्ध्यत्व, प्रजनन-क्षमता में कमी और यहां तक कि एड्स तक के रोग लग जाते हैं। इनमें डायोक्सीन की एक बूंद एक हजार लोगों को और एक औंस (25 ग्राम) 10 लाख लोगों को मारने के लिए पर्याप्त है। इन विषैली दवाओं के छिड़काव से भले ही फसल-नाशक कीट नष्ट हो जाते हैं, पर ये फसलों का उपकार करने वाले करोड़ों कृमि, कीट व जन्तुओं का भी संहार कर देती हैं। ये जीव-जन्तु पर्यावरण के लिए कितने लाभकारी हैं, इस पर भी विचार करना आवश्यक है।
- भंवरा, तितली, मधुमक्खी, पतंगे आदि एक पौधे से दूसरे पौधे पर बैठ-बैठकर उनके परागीकरण (नर पौधे का केसर और मादा पौधे के पराग का मिश्रण) में योगदान देते हैं, इसी से पौधे फल-फूल से लद जाते हैं। मानव द्वारा यह प्रक्रिया करना असम्भव है।

- मधुमक्खी अत्यधिक परिश्रम करके शहद का निर्माण करती है। एक पौण्ड शहद का उत्पादन करने में एक मधुमक्खी को अपने छत्ते से फूलों तक लगभग एक लाख 15 हजार कि. मी. की यात्रा करनी पड़ती है, जो सारी पृथ्वी की तीन परिक्रमाओं के बराबर है।

- केंचुआ बड़ा ही गिलगिला, धागे की डोरी जैसा कीड़ा होता है। देखने में डरावना/घिनौना लगता है, पर यह धरती में छेद करके मिटटी को उलटपुलट कर उपजाऊ बना देता है। धरती पोली होने से पानी अन्दर तक प्रवेश करता है और फसल अधिक होती है। खेतों में विषैली दवाओं का छिड़काव होने से आज केंचुए समाप्त होते जा रहे हैं।

- रसोईघरों में, सीलन-भरे स्थानों में, अन्धकार-युक्त जगहों पर या कूड़े कचरे के ढेर पर तिलचटटों (Cockroach) के झुण्ड देखे जाते हैं। आदमी का मन इसे देखते ही कुचल देने का करता है, पर यह बड़ा अद्भुत प्राणी है। यह अंधेरा या प्रकाश, दोनों स्थितियों में स्पष्ट देखने में सक्षम होता है। धरती पर इसका अस्तित्व 35 करोड़ वर्ष पुराना है। जल, स्थल, बर्फ, रेगिस्तान सब जगह यह जीवित रह सकता है। यह हमें कोई नुकसान नहीं पहुंचाता, अपितु सड़ी-गली वस्तुओं, पुराने पेड़-पौधों को खाकर अपनी उदर- पूर्ति करता है। यदि यह न होता, तो सभी वन दुर्गंध से सड़ांध मारते और मानव को भी को भी शुद्ध आक्सीजन प्राप्त करने में काफी कठिनाई होती।

- पर्यावरण-सुरक्षा-हेतु मेंढक बहुत उपयोगी जंतु है। एक मेंढक प्रतिदिन अपने वजन जितने हानिकारक कीड़े, मच्छर आदि खाकर वातावरण को सुरक्षित रखता है। प्रयोगशालाओं में लाखों करोड़ों मेंढकों का संहार होता है। बेचारे मेंढक का यही दोष है कि इसके आंतरिक अंगों की संरचना मानव-जैसी है। विदेशों में मेंढक की टांगों का अचार बड़ा लोकप्रिय है, इसलिए लोग नदियों, तालाबों से पकड़-पकड़कर मेंढकों का निर्यात कर देते हैं। इसका दुष्परिणाम ये होता है कि रोग-कारक मच्छर असीमित संख्या में फैलकर मनुष्य के लिए जानलेवा बन जाते हैं।

- सांप मानव एवं पर्यावरण के संरक्षण में अत्यंत उपयोगी है। पर यह ऐसा हतभागी प्राणी है, जो सारी उम्र आदमी से डरता/बचता बिताता है। सांप आदमी से डरता है और आदमी सांप से। पर आपको यह भी याद रखना चाहिए कि सांप कभी अपने आप आदमी को नहीं काटता। छेड़े जाने पर या भयभीत अवस्था में ही, आत्मरक्षा-हेतु सांप डंक मारता है। और फिर, भारत जैसे देश में 97 प्रतिशत सांप पूर्णत: विष-रहित होते हैं। सांप हमारी फसलों के लिए बहुत लाभकारी होता है। यह बहुत से मेंढक, चूहे, कीड़े आदि को खाकर फसलों की सुरक्षा करता है।

- उल्लू को भी बहुत मनहूस और अपशकुन माना जाता है, पर यह भी कृषि-विनाशक छोटे-बड़े कीड़े चूहे आदि को खाकर फसलों की सुरक्षा करता है। प्रो. सरकार के अनुसार एक उल्लू अपने जीवनकाल में खेतों में लगभग एक लाख रूपये मूल्य के धान की सुरक्षा करता है।

- आज गोवंश–गाय, बैल, बछड़ा, सांड का बेरहमी से कत्ल हो रहा है। एक गाय अपने जीवनकाल में लगभग 1.85 लाख रूपये का दूध देती है और एक बैल कम से कम 40 टन अन्न उत्पन्न करने में सहायता करता है। इसके अतिरिक्त भार ढोने, गोबर, खाद, ऊर्जा आदि से होने वाली कमाई अलग है।
- इन पूर्वोक्त बातों के अतिरिक्त भोजन, फैशन, मनोरंजन, वस्त्र या वैज्ञानिक प्रयोगों के नाम पर भी विश्व में प्रतिदिन लाखों करोड़ों मूक प्राणी मृत्यु की बलिवेदी पर होम दिए जाते हैं, यथा–दवाई के कैप्सूल, फोटो फिल्में, एक्सरे आदि जिलेटिन (पशुओं की हड्डी, खुर, अन्तड़ी और झिल्ली के उबालने से उत्पन्न गोंद) से बनते हैं, जिसके लिए विशाल संख्या में पशु–वध होता है।
- इत्र (सैंट) बनाने के लिए बिज्जू, सिवेट जैसे प्राणी तड़पाकर मारे जाते हैं।
- श्रृंगार–प्रसाधन बनाने के लिए कछुए, व्हेल मछली, कस्तूरी मृग जैसे जानवर मारे जाते हैं।
- रैनेट (पनीर बनाने हेतु) के लिए छोटी उम्र के बछड़ों को मारा जाता है। शेविंग या पेंटिंग ब्रुश बनाने के लिए सुअरों के बाल झटके से नोचे जाते हैं।
- रेशमी वस्त्रों के लिए करोड़ों अरबों रेशमी कीड़े उबालकर या जहरीली दवा छिड़ककर मारे जाते हैं। एक ग्राम रेशम प्राप्ति के लिए 17 और एक मीटर रेशम के लिए लगभग 700 कीड़ों की हिंसा होती है।
- हाथी–दांत से बनी फैंसी वस्तुओं के लिए हाथी के दांत उखाड़े जाते हैं। हाथी की पीड़ा का अनुमान आप सहज में लगा सकते हैं।
- अनेक प्रकार के परिधान– कोट, हैट, जाकेट, पर्स, शाल, दस्ताने आदि बनाने–हेतु अनेक प्रकार की क्रूरता करके सांप, कुत्ते, भेड़, बकरी, मिंक, खरगोश, कराकुल भेड, गिलहरी, सील मछली, रीछ, शतुरमुर्ग, शेर, चीता, बाघ आदि की निर्ममतापूर्वक हत्या की जाती है।
- सन् 1971 की एक रिपोर्ट के अनुसार, उस वर्ष अमेरिका में विभिन्न वैज्ञानिक प्रयोगों के नाम पर 4 करोड़ चूहे, 15–20 लाख मेंढक, 8.50 लाख बन्दर, 7 लाख खरगोश, 5 लाख कुत्ते, 4.66 लाख सुअर, 2 लाख ऊदबिलाव, 1.80 लाख कछुए तथा 23 हजार बकरे मारे गए।

इन सबके अतिरिक्त विश्व में स्थान–स्थान पर मनोरंजन के नाम पर हजारों की संख्या में मुर्गे, बकरे, मेंढे, सांड, सांप व नेवले लड़ा–लड़ाकर लहूलुहान कर मार दिये जाते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध में हिटलर के गैस चैम्बरों की विश्वव्यापी चर्चा हुई थी, जिनमें उसने लाखों यहूदियों को जहरीली गैस से दम घोंट कर मरवा दिया था। बाद में हिटलर के अनुयायी नाजी सैनिकों पर न्यूरेमबर्ग में मुकद्दमा चला था, उसमें कईयों को मृत्यु–दण्ड दिया गया था। पर आज तो हर देश, हर प्रान्त, हर नगर और गांव–गांव तक में ऐसे चैम्बर खुले हुए हैं, जिनमें करोड़ों–अरबों बेजुबान जानवरों का कत्लेआम हो रहा है। क्या है उन पर कोई मुकद्दमा चलाने वाला?पशुओं की इस दीन दशा पर करूण क्रन्दन करते हुए किसी कवि ने ठीक ही लिखा है–

पैर अपने फैलाए हैं हिंसा ने, खड़े खेत खाए हैं हिंसा ने।
गैरों को छोड़ो, अपनों को नहीं बख्शा, खून के दरिया बहाए हैं हिंसा ने।।

इन सभी तथ्यों पर गम्भीर विचार करने के पश्चात यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि हमें अपनी धरती को और इसके पर्यावरण को सुरक्षित रखना है, तो जीवन की प्रत्येक क्रिया में अहिंसा को अपनाकर हिंसा को चुन-चुनकर बाहर करना होगा।

जैन पर्व

पर्व अतीत के प्रतीक होते है जिस किसी तिथि को ऐतिहासिक मानकर उस पर उत्सव करना पर्व कहलाता है जैनों के मुख्य चार पर्व है

1. अक्षय तृतीय (आखा तीज) :
यह जैनों का ऐतिहासिक त्यौहार है। इस दिन जैनों के पहले तीर्थकर भगवान ऋषभदेव ने एक वर्ष चालीस दिन की तपस्या का पारणा किया था। भगवान कर्मयुग को छोड़कर धर्मयुग की ओर मुड़े। उन्होने साधुव्रत ग्रहण किया। लोग साधुओं का आचार-विचार कुछ नहीं जानते थे। भगवान भिक्षा के लिए घर-घर गए, पर उन्हें आहार पानी का संयोग नहीं मिला। क्योंकि लोग भिक्षा विधि से अज्ञात थे।

इस प्रकार एक वर्ष बीत गया। अभी तक न तो खाने को रोटी मिली, न पीने को जल मिला। भगवान विहार करते-करते अपने पौत्र सोमप्रभ की राजधानी हस्तिनापुर(वर्तमान दिल्ली) में आ पहुँचे। वैसे ही घर-घर में भिक्षा के लिए गए। लोगों को बड़ा हर्ष हुआ। कोई हाथी, कोई घोड़ा, कोई गहने और कोई कपड़े लाया। भगवान ने कुछ भी स्वीकार नहीं किया। रोटी जैसी तुच्छ वस्तु भला जगत-पिता को कौन भेंट करें?

हस्तिनापुर के भव्य राज-प्रसाद में सम्राट बाहुबलि का पौत्र श्रेयांस कुमार महल के झरोखे में बैठा था। रात को उसने एक स्वप्न देखा। स्वप्न में उसने अपने हाथों से मेरूपर्वत को अमृत से अभिषिक्त किया। वह इस अद्भूत स्वप्न के बारे में सोच रहा था, सहसा उसकी दृष्टि भगवान ऋषभ पर पड़ी, जो उस समय राजमहल के निकट से गुजर रहे थे। भगवान ऋषभ कुमार श्रेयांस के संसार पक्षीय परदादा होते थे, पर वह उन्हें पहचान नहीं पाया। पूर्वभव में भी उसका भगवान ऋषभ से निकट का सम्बन्ध था। पूर्वभव के संस्कारों से स्वाभाविक स्नेह जागा। उसने ऊहापोह किया और उसे जाति-स्मृति ज्ञान(पूर्व जन्म का ज्ञान) हो गया। वस्तुस्थिति का ज्ञान होते ही कुमार नंगे पाव दौड़ा। भगवान के चरणों में वंदन किया और भिक्षा ग्रहण करने के लिए आग्रह करने लगा। भगवान को दीक्षित होने के बाद आज तक भोजन नहीं मिला, यह जानकर, कुमार श्रेयास के मन में अत्यन्त पीड़ा हुई।

कुमार का अनुनय स्वीकार कर भगवान राजमहल में पधारे। वह दिन वैशाख शुक्ल तृतीया का था। उस समय तृतीया का दिन आगामी कृषि का मुहूर्त करने के लिए शुभ माना जाता था। राजा को कृषि संबंधी विविध उपहार प्राप्त होते थे। उस दिन श्रेयांस कुमार के राजमहल में इक्षुरस की भेंट आई थी। कुमार ने इधर-उधर देखा, भिक्षा के योग्य पदार्थ नहीं मिला। एक ओर इक्षुरस के घड़े रखे थे। मुनि के लिए कल्पनीय(ग्रहण करने योग्य) वस्तु वही थी। कुमार अपने हाथ से दान देने के लिए उद्यत हुआ। भगवान् के पास कोई पात्र नहीं था। उन्होंने दोनों हाथों की निश्छिद्र अंजलि मुंह पर टिका दी। कुमार का स्वप्न साकार हो रहा था। अत्यन्त मुदित मन से वह भगवान को भिक्षा देने लगा। जितना आवश्यक था उतना रस लेकर भगवान ने अपने 'वर्षी तप' का पारणा किया। लोगों ने भगवान के घर-घर परिव्रजन का रहस्य समझा। उस दिन से तृतीया का महत्व और अधिक बढ़ गया और वह तिथि **'अक्षय-तृतीया'** के नाम से प्रसिद्ध हो गई।

भगवान ऋषभ कर्मयुग और धर्मयुग के प्रवर्त्तक थे। उनकी तप: साधना के प्रति लोगों में गहरी आस्था थी। उनके अनुयायी श्रावक-श्राविकाएं सैंकड़ों की संख्या में वर्षीतप करते थे। भगवान् ऋषभ ने निरन्तर एक साल से अधिक तपस्या की और वर्तमान में उसे एक साल तक एकान्तर तप(एक दिन के बाद उपवास) के रूप में किया जा रहा है। इस तपस्या का समापन भी अत्यन्त उल्लास पूर्ण वातावरण में होता है। कुछ व्यक्ति इस दिन **'शत्रुञ्जय'** आदि जैन तीर्थस्थानों में जाकर तपस्या पूरी करते हैं तो कुछ व्यक्ति अपने धर्माचार्यों की सन्निधि में इस क्रम को पूरा करते हैं।

2. पर्युषण :

पर्युषण पर्व जैनधर्म का सबसे बड़ा धर्माराधना का पर्व है यह पर्व आठ दिन तक मनाया जाता है। इसलिए इसको अष्टाह्निक पर्व भी कहते हैं। यह पर्व **भाद्र कृष्ण त्रयोदशी** से प्ररम्भ होता और **भद्राषुक्ला पंचमी** को संपन्न होता है। इसमें तपस्या, स्वाध्याय, ध्यान आदि आत्म शोधन की प्रवृत्तियों की अराधाना की जाती है। इस पर्व का अंतिम दिन संवत्सरी महापर्व कहलाता है। वर्ष भर की भूलों के लिए क्षमा लेना और क्षमा देना, इसकी स्वयंभूत विशेषता है। यह पर्व मैत्री और उज्जवलता का संदेशवाहक है।

दिगम्बर परम्परा में यही पर्व **भाद्र शुक्ला पंचमी** से **चतुदर्शी** तक मनाया जाता है। इसमें प्रतिदिन क्षमा आदि दश धर्मों में से एक-एक धर्म की अराधना की जाती है। इसलिए इसे '**दश लक्षण पर्व**' कहा जाता है।

3. महावीर जयन्ती :

जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थकर भगवान महावीर का जन्म **चैत्र शुक्ला 13** को हुआ। जैन लोग इस दिन को जन्म दिवस के रूप में उत्सव पूर्वक मनाते हैं। इस दिन अनेक प्रान्तीय सरकारें व केन्द्रीय सरकार महावीर जयन्ती का अवकाश भी रखती हैं।

4. दीपावली :

इसका सम्बन्ध भगवान महावीर के निर्वाण से है। **कार्तिक कृष्णा अमावस्या** को भगवान् का निर्वाण हुआ था। उस समय पावापुरी में अनेक राजा भगवान का चरमोत्सव मनाने आये हुए थे। उन्होंने घर-घर दीप जलाकर भगवान निर्वाण-दिवस मनाया। आज उसी का अनुसरण करते हुए दीप जलाकर दीपमालिका मनाई जाती है।

Important Notes

जीवन चरित्र व कथा विभाग

Important Notes

भगवान महावीर

संसार के महापुरूषो में भगवान महावीर स्वामी का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। वे जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर थे।

जन्म और नाम :

आज से करीब 2600 वर्ष पूर्व बिहार में वैशाली गणतन्त्र था। उसमें 'क्षत्रिय कुंडग्राम' नाम का एक नगर था। उस नगर के अधिपति (राजा) क्षत्रिय सिद्धार्थ थे। उनकी पत्नी का नाम त्रिशला था। **चैत्र शुक्ला त्रयोदशी** के दिन त्रिशला ने एक बालक को जन्म दिया। बालक का नाम **'वर्धमान'** रखा गया। भगवान महावीर के तीन नाम थे-वर्धमान, महावीर और ज्ञातपुत्र। जिस दिन वे जन्मे थे, उस दिन से उनके घर में ऐश्वर्य की खूब वृद्धि हुई, इसलिए वे **'वर्धमान'** कहलाए। उन्होंने साधना काल में कष्टों को वीर-वृत्ति से सहन किया, इसलिए वे **'महावीर'** कहलाए। उनका वंश ज्ञातृ था, इसलिए वे **'ज्ञातपुत्र'** कहलाए। भगवान महावीर के बड़े भाई का नाम नन्दीवर्धन और बहिन का नाम सुदर्शना था।

बचपन और शिक्षा :

राजकुमार का लालन पालन राजमहलों में हुआ। उनका बचपन बाल-क्रीड़ाओं में बीता। महावीर बचपन से ही निर्भीक थे। एक बार खेलते समय एक सांप बीच में आ गया। उन्होंने उसे हाथ से पकड़ कर फेंक दिया और पुनः खेलने लगे। आठ वर्ष के होते ही माता-पिता ने शिक्षा के लिए उनको गुरूकुल में भेजा। उनकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण थी। वे बचपन से ही तीन ज्ञान (मति, श्रुत, अवधि) के धनी थे।

यौवन :

वर्धमान बाल्य-अवस्था को पार कर किशोर-अवस्था में आए। वे सहज वैरागी थे। विवाह करने की इच्छा नहीं थी, पर माता-पिता के आग्रह से उन्होंने क्षत्रिय-कन्या **यशोदा** से विवाह किया। महावीर के एक पुत्री हुई। उसका नाम **प्रियदर्शना** रखा। उसका विवाह सुदर्शना के पुत्र **जमाली** से हुआ।

वैराग्य और दीक्षा :

महावीर जब 28 वर्ष वे हुए तब उनके पिता सिद्धार्थ और माता त्रिशला का स्वर्गवास हो गया। महावीर ने श्रमण बनने के लिए बड़े भाई नन्दीवर्धन से अनुमति मांगी। नन्दीवर्धन ने श्रमण बनने की आज्ञा नहीं दी और घर पर रहने का आग्रह किया। महावीर बड़े भाई के अधिक आग्रह से दो वर्ष तक घर में रहे। उसे समय वे सचित जल नहीं पीते थे, रात्रि-भोजन नहीं करते थे और ब्रह्मचर्य का पालन करते थे और 30 वर्ष पूरे होते ही महावीर श्रमण (साधु) बन गए।

साधना काल :

साधना काल में भगवान ने अनेक कष्ट सहे। कुछ लोग उन्हें चोर समझ कर पीटने लग जाते। बच्चे पत्थरों से मारते, कुत्तों को काटने के लिए प्रेरित करते। चंडकौशिक सर्प ने भी भीषण डंक लगाए। संगम नामक देव ने

भगवान को एक रात्रि में ही 20 मारणन्तिक (मृत्यु हो जाए ऐसे) कष्ट दिए। भगवान क्षमाशूर थे। उन्होंने सब कुछ समभाव से सहन किया। भगवान ने कठोर तप किया। उन्होंने दो दिन के उपवास से लेकर छह महीने तक की तपस्या की तथा तपस्या में पानी भी ग्रहण नहीं किया।

कैवल्य प्राप्ति :

दीर्घ तपस्या के साथ-साथ भगवान महावीर ध्यान से आत्मा को भावित कर रहे थे। साधना-काल में बहुत कम बोलते थे। अधिकतर वे मौन ही रहते थे। इस प्रकार 12 वर्ष और 6½ महीने तक वे साधना करते रहे। **वैशाख शुक्ला 10** के दिन जंभिय ग्राम में आए। वहां 'ऋजुबालिका' नदी थी। उसके किनारे शाल वृक्ष था। उसके नीचे वे गोदोहिका आसन में ध्यानस्थ थे। उस समय उनके दो दिन का उपवास था। ज्ञान की पवित्रता बढ़ी, मोह का आवरण हटा और भगवान वीतराग हो गए। अब वे केवलज्ञान को पाकर अरिहन्त हो गए।

केवलज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् भगवान का पहला प्रवचन देवों के बीच हुआ। भगवान ने संयम की महत्ता पर प्रकाश डाला। देव विलासी होते है, वे संयम को स्वीकार नहीं कर सकते। दूसरा उपदेश पावापुरी में हुआ। वहां यज्ञ में इन्द्रभूति आदि ग्यारह ब्रह्मण विद्वान अपने हजारों शिष्यों के साथ, भाग लेने के लिए आए हुए थे। वे भगवान के समवसरण (प्रवचन-स्थल) में गए। भगवान ने उनके मन में रहे सन्देहों को दूर किया। वे सभी ग्यारह पंडित अपने 4400 शिष्यों के साथ भगवान के पास दीक्षित हो गए। चन्दनबाला आदि अनेक स्त्रियाँ भी दीक्षित हुई। इस प्रकार पहले ही दिन भगवान का शिष्य-परिवार बहुत बढ़ गया और साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका के रूप में भगवान ने चतुर्विध तीर्थ की स्थापना की।

इन्द्रभूति आदि ग्यारह पंडितों को भगवान ने गण का भार दिया। वे सब **'गणधर'** कहलाए। साध्वियों का भर साध्वी चन्दनबाला को दिया।

भगवान तीस वर्ष तक केवली अवस्था में विचरण करते रहे। आपने अनेक राजाओं को जैन शासन में प्रव्रजित किया।

आपका अन्तिम प्रवास (चर्तुमास) पावापुरी में था। वहां **कार्तिक कृष्णा अमावस्या** की मध्यरात्रि में आपका निर्वाण हो गया। आप सभी बन्धनों से मुक्त हो गए। दीप जलाकर लोगों ने उत्सव मनाया। वह उत्सव आज **दीपावली** के नाम से प्रसिद्ध है।

भगवान् ऋषभदेव

जैन परम्परा में काल के दो भाग किए गए हैं- उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी। उत्सर्पिणी में जीवों की आयु, अवगाहना (कद) व शक्ति में तथा प्रकृति के वर्ण, गन्ध, रस व स्पर्श गुण में क्रमशः उन्नति होती है और अवसर्पिणी में क्रमशः अवनति होती है। प्रत्येक काल-विभाग में छह-छह आरे (विभाग) होते हैं। वर्तमान में अवसर्पिणी काल का पांचवां विभाग (दु:षमा आरा) चल रहा है।

तीसरे काल-विभाग की बात है। कुलकर नाभि के घर माता मरुदेवी की कुक्षि से ऋषभदेव का जन्म हुआ। ऋषभ की माता की नाम मरुदेवी था। ऋषभ कुमार बड़े हुए। उन्होंने सुमंगला और सुनन्दा के साथ विवाह किया। सुमंगला के एक कन्या ब्राह्मी और भरत आदि 99 पुत्र हुए। सुनन्दा ने एक पुत्री और एक पुत्र को जन्म दिया। पुत्री का नाम सुन्दरी और पुत्र का नाम बाहुबली रखा गया।

भगवान् ऋषभ के समय में न समाज था, न कोई स्वामी था और न कोई सेवक। कल्पवृक्षों से लोगों के जीवन की आवश्यकताएं पूरी हो जाती थी। अधिकांश लोग अरण्यवासी थे। ऋषभदेव उस युग के प्रथम राजा बने। उनकी जन्मजात प्रतिभा से लोग नए युग के निर्माण में जुट गए। अनेक नगर बसाए गए। लोग अरण्यवास छोड़कर नगरों में रहने लगे। उन्होंने लोगों को असि (सुरक्षा) मसी (व्यवसाय), कृषि (खेती), सेवा आदि कर्त्तव्यों का निर्देश दिया। अपने पुत्र भरत को 72 कलाएं सिखाई। अपनी पुत्री ब्राह्मी को 18 लिपियों और सुन्दरी को गणित आदि का अध्ययन करवाया। लोग अपने-अपने कार्यों में दक्ष बन गए और सुखपूर्वक रहने लगे। उन्होंने लम्बे समय तक राज्य किया। अन्त में अपने सौ पुत्रों को अलग-अलग राज्यों का भार सौंपकर मुनि बन गए।

भगवान् के साथ चार हजार अन्य पुरुषों ने भी दीक्षा ली। परन्तु वे सभी कठोर जैन-साधना का पालन नहीं कर सके, अत: जैन साधु का वेष छोड़कर अन्य साधु-संन्यासियों के वेष में रहने लगे।

चूंकि वह समय धर्म, सभ्यता और संस्कृति का आदिम युग था, अत: जैन साधुओं को भिक्षा-दान की विधि को कोई नहीं जानता था। प्रभु ऋषभ भी निरन्तर एक वर्ष तक भिक्षा-हेतु इधर-उधर घूमते रहे। कोई उन्हें हीरे-मोती, कोई उन्हें हाथी-घोड़े, कोई उन्हें महल-बावड़ी, कोई उन्हें दास-दासी, यहां तक कि कोई-कोई तो उन्हें अपने पुत्र-पुत्रियों को भी भेंट में देने लगता था, पर प्रभु ने कोई वस्तु ग्रहण नहीं की। अन्त में 13 महीने 10 दिन की निर्जल, निराहार साधना के पश्चात् वैशाख सुदी तृतीया (अक्षय-तृतीया) के दिन हस्तिनापुर में युवराज श्रेयांस कुमार के हाथों से इक्षुरस के द्वारा प्रभु का पारणा हुआ।

कुल एक हजार वर्ष की साधना के बाद प्रभु ऋषभ को कैवल्य प्राप्त हुआ। चतुर्विध तीर्थ की स्थापना कर वे इस युग के प्रथम तीर्थंकर हुए। उनके 98 पुत्रों ने राज्य का त्याग कर उन्हीं के पास दीक्षा ग्रहण कर ली। भरत, बाहुबली, ब्राह्मी, सुन्दरी ने भी संयम ग्रहण किया। सभी ने केवल ज्ञान प्राप्त कर अपनी आत्मा का कल्याण किया। भगवान् ऋषभ एक लाख पूर्व वर्ष तक श्रामण्य (साधु-धर्म) का पालन कर निर्वाण मोक्ष को प्राप्त हो गए।

इन्हीं भगवान् ऋषभदेव के बड़े पुत्र भरत चक्रवर्ती के नाम से हमारे देश का नाम 'भारत' पड़ा। दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र भरत के नाम से तो एक वंश का नाम भारत पड़ा, देश का नहीं।

भगवान् पार्श्वनाथ

भगवान् पार्श्वनाथ जैन शासन के 23वें तीर्थंकर थे। उनका जन्म ईसा पूर्व 877 में वाराणसी में हुआ। उनके पिता का नाम अश्वसेन व माता का नाम वामा देवी था। कुशस्थल नगरी के राजा प्रसेनजित् की कन्या प्रभावती से उनका विवाह हुआ।

विक्रम पूर्व आठवीं शताब्दी के लगभग भारतवर्ष के कोने-कोने में हठयोग का बोलबाला था। धर्म के नाम पर दंभ की गहरी छाप लग चुकी थी। लोग वास्तविक धर्म को छोड़कर बाहरी दिखावे में बह चुके थे। उन्हीं दिनों की बात है, वाराणसी नगरी (बनारस) के बाहर बगीचे में एक साधु पंचाग्नि तप कर रहा था। राजकुमार पार्श्वनाथ भी टहलते हुए वहाँ आ पहुँचे। वहाँ पर पंचाग्नि तप के दर्शनार्थ एक बड़ी भीड़ जमा हो रही थी। राजकुमार ने अपने विशिष्ट ज्ञान (अवधि ज्ञान) से देखा कि धांय-धांय जलते हुए लक्कड़ों में से एक लक्कड़ की पोल में सांप का एक जोड़ा (युगल) तिलमिला रहा है। राजकुमार ने जनता और उस तपस्वी को सावधान करते हुए कहा 'ऐसी अज्ञान तपस्या को तिलांजलि दे दो। भला, यह भी कोई तपस्या है, जिसमें सांप जल रहे हों?यह सुनते ही वह साधु चौंका और राजकुमार की बात पर बिगड़ गया। राजकुमार के आदेश से सेवकों ने उस लक्कड़ को फाड़ा, तो उसमें झुलसा हुआ सांप का जोड़ा निकला। राजकुमार ने सर्प-सर्पिणी को नमस्कार मन्त्र सुनाया और समभाव रखने का उपदेश दिया। उन्होंने राजकुमार के उपदेश को शिरोधार्य कर पूर्ण शान्ति व समता से जीवन को समाप्त किया। दोनों मरकर धरणेन्द्र और पद्मावती नामक देव व देवी बने। सारे लोग राजकुमार की प्रशंसा करते हुए अपने घर लौट आए। साधु मन ही मन राजकुमार पर कुढ़ा, पर उसकी एक भी नहीं चली। लोगों की भी इस तरह के अज्ञानपूर्ण क्रियाकांडों से आस्था हट गई। वह साधु अपनी आयु पूर्ण करके 'कमठ' नामक देवता बना। कुछ समय बाद 30 वर्ष की आयु में राजकुमार ने अपने पिता और माता की अनुमति पाकर दीक्षा ग्रहण की।

एक बार वे अहिच्छत्र वन में ध्यानस्थ खड़े थे। उधर से पूर्व जन्म का द्वेषी वही 'कमठ' देव जा रहा था। इन्हें देखते ही उसका वैर जागृत हो गया। उसने ध्यानस्थ भगवान को अनेक उपसर्ग (कष्ट) दिए। उन पर कंकरों की वर्षा की, परन्तु वे ध्यान से विचलित नहीं हुए। तब उसने क्रोध में आकर मुसलाधार वर्षा प्रारम्भ की। आकाश में दिल दहलाने वाली मेघ-गर्जना होने लगी। कुछ ही क्षणों में चारों ओर पानी ही पानी हो गया। भगवान पार्श्व पानी में डूबने लगे। पानी गले तक आ गया।

उधर नाग-नागिन धरणेन्द्र-पद्मावती ने अवधि ज्ञान से देखा कि हमारे उपकारी भगवान पार्श्व को कोई दुष्ट देव उपसर्ग दे रहा है। तत्काल दोनों नीचे आये और उन पर सर्प-फण की छाया करके उनका उपसर्ग शांत किया। 83 दिन की कठोर साधना के उपरान्त प्रभु पार्श्व को केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। लगभग 70 वर्ष तक प्रभु ने जन-कल्याणार्थ विहार किया। उनके धर्म संघ में 16,000 साधु, 38,000 साध्वियां, 1,64,000 श्रावक तथा 3,27,000 श्राविकाएं थी। पूर्ण 100 वर्ष की आयु में उन का निर्वाण हुआ। उनकी स्तुति में अनेकों मन्त्र तथा चमत्कारी स्तोत्र रचे गए, जिनमें 'कल्याण मन्दिर' व 'उपसर्ग-हर-स्तोत्र' अति प्रसिद्ध हैं। सब प्रकार की चिंताओं का हरण करने के कारण प्रभु को 'चिंतामणि-पार्श्वनाथ' भी कहा जाता है।

भगवान् नेमिनाथ

भगवान् नेमिनाथ जैन धर्म के बाईसवें तीर्थंकर थे। इन्हें भगवान् अरिष्टनेमि के नाम से भी जाना जाता है। इनका जन्म शौरिपुर (वर्तमान आगरा जिला में यमुना तट पर वटेश्वर गांव के पास) के राजघराने में हुआ। इनके पिता का नाम समुद्रविजय और माता का नाम शिवा देवी था। प्रभु का विवाह जूनागढ़ के राजा उग्रसेन की पुत्री राजीमती के साथ निश्चित हुआ था। वह बहुत ही सुन्दर और बुद्धिमान राजकुमारी थी। परिवार में सब उसे प्यार से 'राजुल' नाम से पुकारते थे। जब श्री नेमिनाथ की बारात राजीमती को ब्याहने के लिए उग्रसेन के द्वार पर जा रही थी, तब राजकुमार रथ में बैठे थे। बारात में एक ओर भारत के सम्राट् श्रीकृष्ण, अनेकों तेजस्वी नरेश एवं यादव राजकुमारों का दल-बल था, तो दूसरी ओर उनके स्वागत के लिए भोजवंशी राजा उग्रसेन अपने मित्र राजा एवं सामन्तों तथा पारिवारिक-जनों के साथ उपस्थित थे। मार्ग में नेमिनाथ जी ने एक बाड़े में बंधे आर्त नाद करते हुए सैंकड़ों निरीह मूक पशुओं के क्रन्दन को सुना, जिनका वध करके बारातियों को खिलाया जाना था। श्री नेमिनाथ ने सारथि को कहा, 'मेरे विवाह में इतने पशुओं की हत्या होगी। मेरा एक घर बसाने के लिए हजारों पशुओं की मृत्यु, मैं यह सहन नहीं कर सकता। इसलिए रथ को वापिस मोड़ लो। मैं शादी नहीं करवाऊंगा। पशुओं को तत्काल बन्धन-मुक्त कर दो'। सारथि ने आज्ञानुसार बाड़ा खोल दिया। सब पशु बन्धन-मुक्त कर दिए गए।

नेमिनाथ जी ने रैवताचल (गिरनार) पर्वत की गहन कन्दराओं में जाकर आत्म-साधना की। तपस्या करके आत्म-शोधन किया। कर्म-मलों का नाश करके, केवल-ज्ञान प्राप्त करके बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के नाम से संसार में प्रसिद्ध हुए। वैदिक परम्परा में नेमिनाथ जी 'घोर आंगिरस' के नाम से प्रसिद्ध हुए। भगवान् नेमिनाथ जी ने वासुदेव श्रीकृष्ण जैसे सम्राटों और सर्व साधारण जनता को अहिंसा का उपदेश देकर भारतवर्ष में दया और करूणा का प्रचार किया। मांसाहार के विरूद्ध उन्होंने विशेष रूप से प्रचार किया। जनता को बताया कि मांस-भक्षण करना महापाप है। संसार के सभी जीव जीना चाहते हैं। उन्हें मारना, दुख पहुंचाना अधर्म है। उनके प्रभाव से ही आज गुजरात में अन्य प्रदेशों की अपेक्षा मासांहार का प्रचलन कम है।

चण्डकौशिक सर्प का उद्धार

भगवान महावीर स्वामी ने 30 वर्ष की आयु में दीक्षा ग्रहण की। साधना के द्वितीय वर्ष में वे कनकखल आश्रम से श्वेताम्बिका नगरी की ओर विहार कर रहे थे। यद्यपि दोनों के बीच एक छोटा रास्ता भी था, पर लोग उसका उपयोग नहीं करते थे। कारण यह था कि वन के उस मार्ग में चण्डकौशिक नामक भयंकर सर्प का निवास था। वह दृष्टि-विष सर्प था, अर्थात् सूर्य की ओर दृष्टि करने से उसमें विष भर जाता था और फिर वह विष की वृष्टि करता था। उसकी विषैली फुंकारों से वन के सारे पशु, पक्षी, पेड़-पौधे समाप्त हो गए थे।

वन के किनारे स्थित कुछ लोगों ने प्रभु को उधर जाने से रोकना चाहा, पर प्रभु तो कष्टों से डरते नहीं थे, अपितु उन्हें बुलाते थे। वे उसी रास्ते से चले और सीधे ही उस सर्प की बांबी पर खड़े होकर ध्यान-मग्न हो गए। क्रोधाभिभूत नाग बाहर निकला और बार-बार प्रभु के चरणों में डंक मारने लगा। प्रभु पर उसकी विषैली फुंकारों का कोई प्रभाव नहीं हुआ। वे शांत और मौन भाव से अपने ध्यान में लीन रहे। अन्ततः विकराल नाग की हिंसा प्रभु की अटल अहिंसा के समक्ष पराजित हो गई।

ध्यान की समाप्ति पर भगवान ने नाग से कहा 'चण्डकोसिया! बुज्झह, बुज्झह हे चण्डकौशिक! तनिक सोच-विचार करो। इस क्रोध के कारण तुम पिछले जन्मों से ही पतन के मार्ग पर जा रहे हो'। प्रभु की अमृतवाणी से नाग का विष शांत हो गया। उसे अपने कुकर्मों पर पश्चात्ताप हुआ। किसी भी प्राणी को कष्ट न पहुंचाने की प्रतिज्ञा की। उसे बोध देकर भगवान आगे प्रस्थान कर गए।

इधर नाग के हृदय-परिवर्तन को देखकर आसपास के लोग उस पर श्रद्धाशील हो गए। उस पर घी, दूध, चीनी आदि चढ़ाने लगे। उन पदार्थों की गंध से हजारों चीटियां वहां आने लगी और उन्होंने खा-खाकर नाग के शरीर को छलनी बना दिया। इतने पर भी नाग के मन में कोई द्वेष नहीं आया। वह आयु पूर्ण करके आठवें स्वर्ग में देव बना।

संजय राजा और गर्दभाली मुनि

काम्पिल्य नाम के नगर में संजय नामक राजा राज्य करता था। वह एक बार चतुरंगिणी सेना सजा कर नगर के केसर नाम के बाग में शिकार खेलने गया। घोड़े पर चढ़कर हिरणों पर तीर छोड़ने लगा। बाग के एक कोने में गर्दभाली नाम के जैन मुनि ध्यान में लीन थे। राजा के तीरों से घायल होकर एक हिरण दौड़ता-दौड़ता मुनि के पास आकर गिर पड़ा। राजा ने आकर उसे देखा तो मन-मन में भयभीत हो गया कि मैंने मुनि के निकट ही हिरणों को मारकर मुनि के मन को आहत किया है। वह घोड़े से उतर कर मुनि के चरणों में नत-मस्तक होकर गिड़गिड़ाता हुआ अपने अपराध की क्षमा-याचना करने लगा। तब मुनि ने सात श्लोकों में राजा को धर्मोपदेश दिया-

- हे राजन्! मेरी ओर से आपको अभयदान है, पर आप भी सब जीवों को अभय दो। इस नश्वर संसार में क्यों हिंसा में आसक्त होते हो?
- जब इस संसार से सब कुछ छोड़कर एक दिन आपको जाना है, तो राज्य के नश्वर सुखों में क्यों उलझते हो?
- हे राजन्! मनुष्य का रूप और जीवन बिजली की चमक के समान क्षणभंगुर है, इसमें मत फंसो।
- पुत्र, मित्र, स्त्री तथा बंधु-बांधव जीवित अवस्था में हमारी साथी हैं, मरे बाद साथ नहीं जाते, इनमें मत उलझो।
- कई बार पहले मृत माता-पिता को उनकी संतान चिता की भेंट करती है, कई बार माता-पिता पुत्रों को, ये जानकर सयंम का पालन करो।
- व्यक्ति के मरने के बाद उसके धन से और स्त्री आदि से अन्य लोग खुश होकर मौज उड़ाते हैं।
- व्यक्ति अपने जीवन-काल में जो शुभ या अशुभ कर्म करता है, उसी को साथ लेकर वह परलोक जाता है, अन्य कोई वस्तु उसके साथ नहीं जाती। मुनि के इस वैराग्य-पूर्ण उपदेश को सुनकर संजय राजा परम बोधि को प्राप्त हुआ और राज्य का व संसार का त्याग करके मुनि बन गया।

अर्जुन माली

आज से लगभग 2550 वर्ष पूर्व, भगवान् महावीर स्वामी के युग में, मगध देश में (आधुनिक बिहार प्रान्त) राजगृही नाम की नगरी थी। श्रेणिक वहां के राजा थे। उस नगरी में अर्जुन नाम का एक माली था, जो अपने बाग में से प्रतिदिन फूल चुनकर, फिर उनकी मालाएँ, हार, गजरे, गुलदस्ते आदि बनाकर बेचता था। उसकी पत्नी का नाम बन्धुमती था। अर्जुन की पुष्पवाटिका के प्रवेश-द्वार पर मुद्‌गर-पाणि नाम के यक्ष का मन्दिर था। यक्ष के कन्धे पर लगभग 50 कि.ग्रा. का एक मुद्‌गर रखा रहता था। अर्जुन माली अपने बाप-दादाओं के युग से ही प्रतिदिन फूलों से उस यक्ष की पूजा करता था।

एक घटना ने अर्जुनमाली की जीवनधारा को आमूल-चूल रूप में बदल दिया। राजगृही में 'ललित-गोष्ठी' नाम से छः मनचले युवकों की एक टोली थी। वे कैसा भी अपराध कर दें, राजा की ओर से उन पर कोई दण्ड-विधान लागू नहीं था। एक दिन जब अर्जुन माली अपनी पत्नी-सहित यक्ष-प्रतिमा के समक्ष प्रणाम कर रहा था, तो उन छः युवकों ने पीछे से हमला करके अर्जुनमाली को बन्धनों में बांध दिया और उसके सामने ही, मन्दिर के प्रांगण में बन्धुमती से बलात्कार किया। यक्ष-प्रतिमा के समक्ष इस प्रकार के दुराचार को देखकर अर्जुनमाली का मन यक्ष के प्रति गहरे आक्रोश से भर उठा कि 'मैं पितृ-परम्परा से जिस देवता की पूजा करता आ रहा हूं, वह देव नहीं, कोरा काष्ठ ही है'।

पर उस यक्ष-मूर्ति में, वास्तव में ही देवता का निवास था। अर्जुनमाली के बगावत भरे वचनों को श्रवण कर यक्ष अदृश्य रूप में उसके शरीर में प्रवेश कर गया। इससे अर्जुन के शरीर में बड़ी अद्‌भुत शक्ति आ गई। उसने एक ही झटके में सारे बन्धन तोड़ डाले और फिर यक्ष-प्रतिमा से मुद्‌गर उठाकर उन छहों युवकों और अपनी पत्नी का भी वध कर दिया।

अब अर्जुन के सिर पर प्रतिदिन छः पुरुष और एक स्त्री की हत्या का जनून सवार हो चुका था। उसके इस प्रकोप से सारी राजगृही नगरी में त्राहि-त्राहि मच गई। राजा श्रेणिक भी उस दैवी प्रकोप के समक्ष चाह कर भी कुछ न कर पाए। उन्होंने लोगों को उधर जाने की निषेधाज्ञा जारी कर दी।

फिर भी कभी कोई भूले-भटके, कभी अन्य देशों से आने वाले यात्री अर्जुनमाली की हिंसा का शिकार हो जाते। इस प्रकार 5 महीने 13 दिन (163 दिन) में अर्जुनमाली ने कुल 1141 स्त्री-पुरुषों (978 पुरुष, 163 स्त्री) का संहार कर डाला।

उन्हीं दिनों राजगृही के बाहर एक उद्यान में भगवान् महावीर स्वामी का पदार्पण हो गया। राजगृही के लाखों लोग, चाहकर भी, अर्जुनमाली के खौफ के कारण प्रभु के दर्शन करने नहीं जा सके। पर सभी एक-सरीखे नहीं होते हैं। उसी नगरी में सुदर्शन नाम का एक श्रावक था, जो दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी था। धर्म व धर्मगुरु महावीर के प्रति अनुराग उसके रोम-रोम में बसा था। वह प्रभु के दर्शन-हेतु अपने घर से चल पड़ा।

जब अर्जुनमाली ने सुदर्शन श्रावक को अपनी ओर आते देखा, तो क्रोध में भरकर मुद्‌गर को घुमाते हुए उसे मारने दौड़ा। सुदर्शन ने ये सोचकर कि 'कभी मैं अर्जुन माली के मुद्‌गर-प्रहार से मारा न जाऊं' सागारी संथारा (कष्ट मिटने पर खोलने की छूट-सहित अनशन व्रत) स्वीकार किया और ध्यान-मुद्रा में खड़ा हो गया। उसी समय चमत्कार घटित हुआ। सुदर्शन के तप-तेज के समक्ष यक्ष का बल क्षीण हो गया। अहिंसा की अमोघ शक्ति के समक्ष हिंसा पराजित हो गई। यक्ष अर्जुनमाली के शरीर को छोड़कर भाग खड़ा हुआ और अर्जुन निढाल होकर धड़ाम से नीचे गिर पड़ा।

सुदर्शन ने उपसर्ग (कष्ट) को समाप्त समझकर संथारा-व्रत समाप्त किया। उसने अर्जुनमाली पर रोष नहीं किया, अपितु प्रेम से उसे सहलाकर ढांढस बंधाया। अर्जुन भी उसके स्नेह से अभिभूत होकर, उसके साथ ही भगवान् के दर्शन-हेतु चला गया। उसने प्रभु की वैराग्यमयी वाणी सुनी और उनके श्रीचरणों में ही जैन दीक्षा ग्रहण कर ली।

प्रभु ने अर्जुनमाली मुनि को क्षमा-धर्म धारण करने का उपदेश दिया। तब अर्जुन मुनि राजगृही में रहकर ही साधना करने लगे। वहां के लोग पूर्व वैर-वशात् उनको तरह-तरह से कष्ट देते थे, पर अर्जुन मुनि ने समता पूर्वक सभी यातनाओं को सहन किया।

उत्कृष्ट क्षमा के बल से केवल 6 महीने की साधना में ही अर्जुन मुनि को केवल ज्ञान की प्राप्ति हो गई और वे जन्म-मरण के सब बन्धनों को काटकर शाश्वत मुक्तिधाम पहुंच गए।

महासती चन्दन बाला

भगवान् महावीर स्वामी का युग था। चम्पानगरी में महाराजा दधिवाहन का राज्य था। धारिणी उनकी पटरानी थी। उनकी इकलौती सन्तान राजकुमारी चन्दनबाला थी। वह अपने माता-पिता की बड़ी लाडली थी। एक बार कौशाम्बी के राजा शतानीक ने चम्पानगरी पर आक्रमण किया। राजा दधिवाहन व्यर्थ के रक्तपात से बचने के लिए वन में चला गया। शतानीक के आदेश पर उसकी सेना ने चम्पा में लूटपाट की। एक रथिक के हाथ कुछ न लगा, तो वह राजमहल में घुस गया। उसने रानी धारिणी और चन्दनबाला को बलात् रथ में बिठाया और कौशाम्बी की ओर चल दिया। मार्ग में धारिणी के रूप पर उसकी दृष्टि विकृत (खराब) हो गई। धारिणी ने अपने शीलधर्म की रक्षा के लिए अपनी जबान खींचकर प्राण दे दिए। चन्दनबाला ने भी मां का अनुसरण करना चाहा, पर रथिक के भाव बदल गए। उसने उसे अपनी पुत्री बनाया और अपने घर ले गया। पर घर जाने के बाद रथिक की पत्नी ने उसे घर में टिकने न दिया और पति को बाजार में जाकर चन्दनबाला को बेचने के लिए बाध्य कर दिया। बाजार में वेश्याओं के एक दल ने उसे भारी कीमत में खरीद लिया। चन्दनबाला को जब ये पता लगा तो दुखी होकर रोने लगी। उसके रुदन से आर्द्र बने एक सेठ धनावह ने वेश्याओं को बहुत-सा धन देकर चन्दनबाला को मुक्त करा लिया। उसकी कोई सन्तान नहीं थी। वह उसे अपनी धर्म-पुत्री बनाकर घर ले गया। पर वहां भी सेठ की पत्नी मूला उसे शत्रु मानने लगी। उसका मन इस संदेह से भर गया कि कभी सेठ इसे अपनी पत्नी न बना ले। वह चन्दना को सबक सिखाने के लिए अवसर की प्रतीक्षा करने लगी।

किसी समय धनावह सेठ को तीन दिन के लिए बाहर जाना पड़ा। मूला को अवसर मिल गया। उसके भीतर की राक्षसी वृत्तियां जाग उठी। उसने निरपराध चन्दना को कठोर यातनाएं दी। उसे डण्डों से पीटा। केश काट डाले। वस्त्र छीनकर एक कछनी पहना दी। लौह-श्रृंखलाओं से उसके अंग-प्रत्यंग को जकड़ दिया और उसे तहखाने में पटक कर अपने पीहर चली गई।

तहखाने में दुख भोग रही चन्दनबाला ने वीतराग-धर्म की शरण ग्रहण की और तीन दिन के उपवास (व्रत) का प्रत्याख्यान (संकल्प) ले लिया।

तीसरे दिन धनावह लौटे। घर के द्वार-द्वार पर ताले देखकर उनका मन शंकित हो गया। पूछने पर पड़ौस की एक वृद्धा ने सारी घटना कह सुनाई। सेठ ने ताले तोड़कर चन्दनबाला को बाहर निकाला। घर में खाने को कुछ न था। यहां-वहां देखा। घोड़ों के लिए उड़द के बांकले रखे थे। बर्तन न पाकर सेठ ने एक छाज में डालकर चन्दना को थमा दिए और खुद उसके लौह-बन्धन कटवाने के लिए लौहार को लेने चला गया।

बंधनों में बंधी चन्दनबाला छाज में उड़द-बांकले लिए गृह-द्वार पर बैठी थी। उसका मन किसी अतिथि की बाट जोह रहा था। आंखें मार्ग पर बिछी थी।

उन्हीं दिनों महाश्रमण महावीर कौशाम्बी नगरी में विराजित थे। उन्होंने एक कठिनतम अभिग्रह (प्रतिज्ञा) धारण किया हुआ था। वह इस प्रकार था- 1. राज-कन्या हो। 2. बाजार में बिकी हो। 3. सिर मुण्डित हो। 4. हाथों

में हथकड़ी हों। 5. पैरों में बेड़ी हों। 6. तीन दिन की भूखी-प्यासी हो। 7. मध्याह्न का सूर्य हो। 8. एक पैर घर के भीतर हो। 9. दूसरा पैर घर के बाहर हो। 10. छाज में, 11. उड़द के बांकले लिए हो। 12. आंखों में आंसू हों। 13. मुंह पर मुस्कान भी हो। ऐसी कन्या के हाथ से भोजन लूंगा, अन्यथा निराहार रहूंगा।

उक्त कठिन अभिग्रह धारण किए भगवान को 5 महीने 25 दिन हो चुके थे। संयोग से उस दिन प्रभु उधर ही आ निकले। उस महाअतिथि को देखकर चन्दनबाला को रोम-रोम प्रसन्न हो गया। भगवान् ने अपने ज्ञान में देखा। समस्त प्रतिज्ञाएं फलित हो रही थी, केवल आंखों में आंसू न थे। महावीर वापस लौट गए।

चन्दनबाला प्रभु के खाली लौटने को सहन न कर पाई। उसकी आंखों से अश्रु-धारा बह चली। महावीर पुनः मुड़े । उनको मुड़ते देखकर चन्दनबाला पुनः हर्ष से भर गई। आंसू और मुस्कान एक साथ देखकर महावीर के सभी तेरह संकल्प फलित हो गए। महाअतिथि ने अपने हाथ फैला दिए। चंदना ने दान दिया।

उसी क्षण चमत्कार घटित हुआ। चन्दनबाला के सारे बन्धन स्वतः खुल गए। वह स्वर्ण-आभुषणों और दिव्य वस्त्रों से सुसज्जित हो गई। जैन शास्त्रों के अनुसार करोड़ों स्वर्ण- मुद्राओं का वर्षण हुआ। सब ओर चन्दनबाला का यश फैल गया। कालान्तर में भगवान् महावीर को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। चन्दनबाला भगवान की प्रथम शिष्या बनी और साध्वी-संघ की प्रमुखा बनी। अनेक वर्षों के तप-संयम-मय जीवन से केवलज्ञान प्राप्त कर सिद्ध हो गई।

आचार्य श्री भद्रबाहु स्वामी

भगवान महावीर की धर्म संघ-परम्परा के सातवें युग-प्रधान आचार्य भद्रबाहु का जन्म वी.नि. 94 में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। भद्रबाहु सुरूप, आजानुभुज और सुदृढ़ शरीर-सम्पदा के स्वामी थे। वी.नि. 139 में 45 वर्ष की अवस्था में उन्होंने मुनि जीवन में प्रवेश किया। अपने गुरु आचार्य यशोभद्र ने अपने परम सुयोग्य दो शिष्यों को आचार्य पद प्रदान किया, जिनमें एक थे संभूतविजय और द्वितीय थे भद्रबाहु। आचार्य यशोभद्र के स्वर्गारोहण के पश्चात् पहले संभूतविजय जी ने आचार्य पद का दायित्व संभाला और उनके स्वर्गवास के पश्चात् वी.नि. 156 में भद्रबाहु युगप्रधान आचार्य पाट पर विराजमान हुए। उन्होंने संघीय दायित्वों का पूरी सफलता से निर्वाह किया और जिनशासन के यश की चतुर्दिक् अभिवृद्धि की।

अन्तिम अवस्था में आचार्य भद्रबाहु महाप्राण ध्यान साधना के लिए नेपाल की गिरि-कन्दराओं में चले गए। उससे पूर्व देश में बारह वर्षीय भीषण दुष्काल पड़ा था और अनेक श्रुतधर स्थविर काल-कवलित हो गए थे। आगमनिधि की सुरक्षा के लिए संघ एकत्रित हुआ, पर उस समय आचार्य भद्रबाहु के अतिरिक्त कोई भी चतुर्दश पूर्वधर मुनि जीवित नहीं था। आगमनिधि की सुरक्षा के लिए संघ ने निर्णय किया कि उसके लिए विशिष्ट मेधावी मुनि आचार्य भद्रबाहु के पास जाकर दृष्टिवाद की वाचना लें। उसके लिए श्रमण संघाटक नेपाल में आचार्य भद्रबाहु के पास पहुंचा ओर विनीत भाव से आचार्य श्री को संघ का निर्णय सुनाया।

आचार्य भद्रबाहु ने वाचना-व्यवस्था को अपनी आत्म-साधना में विक्षेप समझते हुए अस्वीकार कर दिया। श्रमण संघाटक लौट गया। संघ को वस्तुस्थिति का पता चला। इससे संघ में क्षोभ उत्पन्न हुआ। आगमनिधि की सुरक्षा का यक्ष प्रश्न था। संघ ने विनम्रतापूर्वक कठोर प्रश्नावली के साथ श्रमण संघाटक को पुनः नेपाल में आचार्य श्री के पास भेजा। श्रमण संघाटक ने आचार्य भद्रबाहु को प्रणत होकर विनम्र शब्दों में कहा, भगवन्! संघ जानना चाहता है कि जो संघ की आज्ञा का उल्लंघन करे, उसे किस प्रायश्चित्त का विधान है?

इस संघीय प्रश्न पर आचार्य भद्रबाहु गंभीर हो गए। उन्होंने कहा, संघ की आज्ञाओं को उल्लंघन करने वाले के लिए जो प्रायश्चित है, वह यह है कि उसे संघ से बहिष्कृत कर दिया जाता है। इस पर श्रमण संघाटक ने विनम्रतापूर्वक निवेदन किया, भगवन्! आपने संघ की आज्ञा को अस्वीकार किया है!

महान श्रुतधर भद्रबाहु ने श्रमण संघाटक के समक्ष अपनी भूल स्वीकार की और अपने पूर्वनिर्णय को बदलते हुए फरमाया-मैं अपनी साधना के साथ-साथ यथासमय वाचनाएं देने को प्रस्तुत हूँ।

आचार्य श्री की उक्त स्वीकृति से श्रमण संघाटक में उत्साह और हर्ष का संचार हो गया। श्रमण संघाटक ने लौटकर आचार्य श्री की स्वीकृति की सूचना श्रीसंघ को दी। संघ के आदेशानुसार आर्य स्थूलभद्र के नेतृत्व में 500 मेधावी मुनि दृष्टिवाद की वाचना लेने के लिए आचार्य भद्रबाहु के चरणों में नेपाल पहुंचे। महाप्राण ध्यान साधना से अवशिष्ट समय में आचार्य श्री ने दृष्टिवाद की वाचना देनी प्रारंभ की। एक तो दृष्टिवाद का रुक्ष विषय और दूसरे वाचना क्रम में अति मन्दता से अधिकांश श्रमणों का उत्साह विलीन हो गया। 499 श्रमण अध्ययन को मध्य में ही छोड़कर लौट गए। परन्तु स्थूलभद्र का धैर्य अकंप और सुस्थिर था। आठ वर्षों के निरन्तर अध्ययन से उन्होंने आठ अंगों को हृदयंगम कर लिया। आठ वर्ष की इस अवधि के पश्चात् उन्होंने स्थूलभद्र से एक दिन पूछा, मुने! आहार-व्यवहार और अध्ययन में तुम्हें कोई क्लेश तो नहीं रहा है? स्थूलभद्र ने कहा, भगवन्! मुझे किसी प्रकार का क्लेश नहीं है। परन्तु भगवन्! मैं जानना चाहता हूँ कि इन आठ वर्षों की अवधि में मैंने कितना ज्ञान ग्रहण किया है और अभी कितना ज्ञान मुझे और ग्रहण करना है?

आचार्य भद्रबाहु ने कहा, मुनिवर! अभी तक तुमने जो सीखा है, वह सरसों के कण जितना है और जो शेष है, वह मेरु पर्वत के सदृश है।

यह सुनकर भी स्थूलभद्र का धैर्य अचल रहा। उन्होंने कहा, भगवन्! आपके उत्तर से मैं अधीर नहीं बना हूँ, पर सोचता हूँ कि आप श्री जीवन के संध्याकाल में हैं और वाचना का प्रवाह मन्दतापूर्वक चल रहा है, फिर इतनी विशाल ज्ञानराशि किस प्रकार ग्रहण की जा सकेगी?

आचार्य भद्रबाहु ने कहा, मुने! मेरी साधना संपूर्ण प्रायः हो रही है, अब मैं अहर्निश अधिकाधिक वाचना दूंगा।

इससे स्थूलभद्र संतुष्ट हो गए और पूरे मनोयोग से दृष्टिवाद का अध्ययन-मनन करने लगे। एक बार यक्षा आदि भगिनी साध्वियों को स्थूलभद्र ने स्वयं को **सिँह** रूप में दिखाकर चमत्कार प्रदर्शन किया। इससे आचार्य भद्रबाहु गंभीर हो गए। उन्होंने आगे वाचना देने से इन्कार कर दिया और कहा, वत्स! लब्धि प्रदर्शित कर ज्ञान-प्राप्ति के लिए अपनी अपात्रता तुमने प्राणित कर दी है। स्थूलभद्र को अपनी भूल अनुभव हुई। उन्होंने आचार्य देव से क्षमापना की, पुनः अनुताप-पश्चात्ताप किया। खिन्न स्वर में कहा, भगवन्! यह मेरी प्रथम भूल है ओर यही अन्तिम भी सिद्ध होगी, श्रुत-विच्छिन्नता का कारण मैं नहीं बनना चाहता।

श्री संघ ने भी आचार्य भद्रबाहु से पुनः-पुनः प्रार्थना की कि वे स्थूलभद्र को क्षमा करे दें और वाचना का क्रम पुनः प्रारंभ कर दें।

आखिर आचार्य श्री ने कहा, स्थूलभद्र की भूल ही वाचना के स्थगन में कारण नहीं है। एक अन्य कारण भी है। सुनो! स्थूलभद्र की निष्ठा, मेधा और पराक्रमशीलता अद्बितीय है। उसने कोशा के बाहुपाश को तोड़कर उसे श्रमणोपासिका बनाया है और अमात्य जैसे पद को ठुकरा कर श्रमणत्व अंगीकार किया है। ऐसे परम पराक्रमी और धीर पुरुष से भी भूल हुई है, फिर आने वाले समय में तो साधकों का सत्व शिथिल होता जाएगा। पात्रता के अभाव में श्रुत का दान श्रुत की आशातना है। इसी लक्ष्य को रखकर मैंने वाचना स्थगित की है।

श्री संघ मौन हो गया। परन्तु स्थूलभद्र की अतिशय प्रार्थना पर आचार्य श्री ने शेष चार अंगों की शाब्दी वाचना दी। इस प्रकार स्थूलभद्र अर्थ की दृष्टि से दशपूर्वधर और शब्द की दृष्टि से चतुर्दश पूर्वधर बने। आचार्य भद्रबाहु ने चार छेद सूत्रों की रचना की। चार छेद सूत्र हैं- 1. दशाश्रुतस्कन्ध, 2. बृहत्कल्प, 3. व्यवहार, 4. निशीथ।

आचार्य भद्रबाहु अपने युग के एक महान् आचार्य थे। उनके समय में द्बादश वर्षीय भीषण दुष्काल पड़ा। श्रमण संघ को इस अवधि में पर्याप्त परीषहों और उपसर्गों को झेलना पड़ा, पर आचार्य श्री ने अपनी दूरदर्शिता और कुशल नेतृत्व से संघ को पुनः समुन्नत रूप प्रदान किया। अपने उत्तराधिकारी के रूप में उन्होंने स्थूलभद्र को चुना। आचार्य भद्रबाहु के चार शिष्य हुए, जिनकी नामावली क्रमशः इस प्रकार है- (1) स्थविर गौदास, (2) स्थविर अग्निदत्त, (3) जन्नदत्त, (4) सोमदत्त।

इनके अतिरिक्त भी उनके चार शिष्य और थे, जो विशिष्ट तपस्वी और अभिग्रहधारी मुनि थे। उनकी नामावली अनुपलब्ध है।

वी.नि. 170 में श्रुतकेवली श्री भद्रबाहु स्वामी का स्वर्गवास हुआ। उनके साथ ही श्रुतकेवली परम्परा का व्यवच्छेद हो गया।

श्री ढंढण मुनि

वासुदेव श्रीकृष्ण की ढंढणा रानी से उत्पन्न पुत्र, जो अत्यंत सुकुमार था। अरिहंत अरिष्टनेमि का उपदेश सुनकर ढंढण विरक्त हो गए और मुनिदीक्षा लेकर विचरण करने लगे। पर दीक्षा लेते ही उनके अन्तराय कर्म ऐसे उदित हुए कि उन्हें भिक्षा का सुयोग नहीं मिल पाता था। अन्य मुनियों के साथ भिक्षा के लिए जाते तो उन्हें भी भिक्षा नहीं मिलती।

कर्मों की विशेष निर्जरा के लिए ढंढण मुनि ने अभिग्रह कर लिया कि मुझे मेरी लब्धि की भिक्षा मिलेगी तो ही मैं आहार करूंगा अन्यथा नहीं। प्रतिदिन भिक्षा के लिए जाते पर भिक्षा का सुयोग नहीं मिलता। छह मास बीत गए। देह से कृश गात बन गए पर समता में सुदृढ़ रहे।

उसी अवधि में अरिहंत अरिष्टनेमि के अनुगामी बने ढंढणमुनि द्वारिका नगरी में आए। भिक्षा के समय भिक्षा के लिए प्रस्थित हुए। वासुदेव श्री कृष्ण प्रभु अरिष्टनेमि की सन्निधि में बैठे थे। उन्होंने भगवान से पूछा कि उनके मुनियों में सर्वश्रेष्ठ करणी वाला मुनि कौन है?भगवान ने ढंढण मुनि का नाम लिया और पूरी बात बताते हुए कहा कि उन्हें दीक्षा लेने के बाद से आज तक आहार का सुयोग नहीं मिला है परन्तु वे अक्लान्त चेता बने पूर्ण समाधिस्थ भाव में तल्लीन रहते हैं।

वासुदेव अपने महलों को लौट रहे थे तो मार्ग में उन्होंने हड्डियों का ढांचा शेष रह गए ढंढण मुनि को देखा। उन्होंने हाथी के ओहदे से उतकर पूर्ण भक्तिभाव से मुनि की पर्युपासना की।

पास के मकान में ठहरे एक कंदोई ने वासुदेव श्री कृष्ण को यों वन्दन करते देखा तो प्रभावित हुआ और मुनि के सम्मुख पहुंचकर भिक्षा की प्रार्थना की। मुनि ने उससे पूछा कि क्या वह उसके गुरु अथवा पिता को जानता है। कंदोई ने उत्तर में कहा कि वह न उनके गुरु को जानता है, और न पिता को, वह तो मात्र इतना जानता है कि वे एक तपस्वी अणगार हैं।

ढंढण मुनि को लगा कि यह भिक्षा मेरी ही लब्धि की है। पूर्ण भक्ति भाव से कंदोई ने मुनि को मोदक बहराए। भिक्षा के साथ मुनि प्रभु अरिष्टनेमि के पास पहुंचे और उन्हें भिक्षा दिखाई। प्रभु बोले–मुने! यह भिक्षा तुम्हारे लिए अकल्प्य है! यह भिक्षा तुम्हें वासुदेव श्रीकृष्ण की लब्धि से उपलब्ध हुई है।

भगवान की बात सुनकर मुनि आश्वस्त हो गए। उन्होंने पूछा–प्रभु! मैंने ऐसे क्या कर्म किए हैं, जिनसे मुझे अन्तराय रहती है?

भगवान ने मुनि का पूर्वभव सुनाया–पूर्वजन्म में तुम मगध देश के पूर्वार्ध नगर के पाराशन नामक सम्पन्न किसान थे। तुम्हारे खेत में छह सौ हल चलते थे। एक बार भोजन के समय भी तुम काम के लोभ में हलों को चलवाते रहे। छह सौ हाली और बारह सौ बैल भूख से व्याकुल थे, पर तुम्हारे आदेश से विवश हुए काम कर रहे थे। उस क्षण तुमने जो अन्तराय कर्म बांधा, वही आज उदय में आया है।

पूर्वभव के वृत्तान्त के सत्य ने ढंढण मुनि की समता को और अधिक प्रकृष्ट बना दिया। मोदाकों को लेकर वे प्रासूक भूमि पर पहुंचे और उन्हें चूर-चूर कर परठने लगे। भावों की सुनिर्मलता से उनके कर्म भी चूर्ण हो गए। केवलज्ञान प्राप्त कर वे मोक्ष में जा पहुंचे।

श्री जीवानंद वैद्य

जम्बूद्वीप के महाविदेह क्षेत्र के क्षितिप्रतिष्ठ नगर में रहने वाले सुविधि नामक वैद्य का एक सुयोग पुत्र। जीवानंद बाल्यकाल से ही सुसंस्कारी बालक था। पूर्वजन्म के सद्संस्कारों का अमृतकोश साथ लेकर वह जन्मा था। करुणा, धर्मनिष्ठा, परोपकार-वृत्ति आदि सद्गुण उसके स्वभाव में रचे बसे थे। पिता के सान्निध्य में उसने वैद्यक-विद्या का सांगोपांग अध्ययन किया और वह युवावस्था तक पहुंचते-पहुंचते एक कुशल और विख्यात वैद्य बन गया। नगर नरेश पुत्र महीधर, मंत्रीपुत्र सुबुद्धि, सार्थवाह पुत्र पूर्णभद्र, श्रेष्ठीपुत्र गुणाकर और केशव-ये पांच युवक जीवानंद के अन्तरंग मित्र थे। छहों युवक प्राय: साथ-साथ रहते और आमोद-प्रमोदपूर्वक जीवन व्यतीत करते थे।

किसी समय छहों मित्रों ने कृमिकुष्ठ रोग से ग्रस्त एक तपस्वी श्रमण को देखा। मुनि की रुग्णावस्था पर छहों मित्रों के हृदय दयार्द हो उठे। जीवानंद ने कहा, मुनिवर का उपचार तो मैं कर सकता हूँ पर उसके लिए पूरे साधन मेरे पास नहीं हैं। राजपुत्र ने कहा, मित्र! तुम साधन की चिन्ता मत करो, जो भी वस्तुएं अपेक्षित हैं, बताओ, हम शीघ्र ही उनका प्रबन्ध कर देंगें। जीवानंद ने कहा, मुनिवर के उपचार के लिए लक्षपाक तल, गोशीर्षचंदन और रत्नकम्बल की आवश्यकता होगी। इनमें से लक्षपाक तैल तो मेरे पास है, शेष दो वस्तुएं मेरे पास नहीं हैं। पांचों मित्रों ने कहा, हम यथाशीघ्र इन दोनों वस्तुओं का प्रबन्ध करते हैं, तुम मुनिवर के उपचार की तैयारी करो। राजपुत्र सहित पांचों मित्र बाजार में गए। कई व्यापारियों के पास घूमने के पश्चात् आखिर एक वृद्ध श्रेष्ठी के पास उन्हें ये दोनों वस्तुएं प्राप्त हो गई। राजपुत्र ने श्रेष्ठी से कहा, महाशय! हमें रत्नकम्बल और गोशीर्षचंदन चाहिए, इनका जो भी मूल्य होगा, आपको प्राप्त होगा। वृद्ध श्रेष्ठी ने कहा, युवको! इन दोनों वस्तुओं में प्रत्येक का मूल्य एक लाख स्वर्ण मुद्रा है। राजपूत्र ने कहा, आप मूल्य की चिन्ता मत कीजिए, पूरा मूल्य आपको मिलेगा। युवकों की उत्सकता देखकर वृद्ध श्रेष्ठी भी उत्सुक बना। उसने पूछा, क्या मैं जान सकता हूँ कि इन मूल्यवान वस्तुओं की जरूरत आपको किसलिए पड़ गई है?राजपूत्र ने श्रेष्ठी को मुनि की रुग्णावस्था की पूरी बात सुनाई। पूरी बात सुनकर और युवकों की परोपकार-वृत्ति देखकर श्रेष्ठी गद्गद बन गया। उसने कहा, भद्र युवको ! तुम्हें धन्य है! इस पुण्यमयी कार्य के लिए मैं तुम्हें गोशीर्षचंदन और रत्नकम्बल अवश्य दूंगा, पर मूल्य नहीं लूंगा।

प्रसन्न मन से श्रेष्ठी ने दोनों वस्तुएं युवकों को दे दी। पांचों युवक जीवानंद के पास पहुंचे। जीवानंद पूरी साधन सामग्री लेकर पांचों मित्रों सहित जंगल में उस स्थान पर आया, जहां मुनिराज ध्यान-मुद्रा में लीन थे। मित्रों ने मुनिवर के ध्यान पूर्ण होने तक प्रतीक्षा की। ध्यान पूर्ण होने पर जीवानंद ने मुनि से उनके उपचार की आज्ञा प्राप्त की और उपचार प्रारंभ कर दिया। पांचों मित्रों ने जीवानंद का सहयोग किया। कई घण्टों के मर्दनादि उपचार के पश्चात् मुनिवर रोगमुक्त हो गए।

उत्कृष्ट भावों से जीवानंद और उसके मित्रों ने मुनिवर की शुश्रूषा और उपचार किया, जिससे उन्होंने महान कर्मों की निर्जरा की और उत्कृष्ट पुण्य का बन्ध किया। जीवन के अन्तिम भाग में जीवानंद और उसके मित्रों ने प्रव्रज्या अंगीकार की और चरित्र की आराधना कर छहों अच्युत देवलोक में इंद्र के सामानिक देव बने। वृद्ध श्रेष्ठी ने भी उत्कृष्ट भावों से दान दिया था, वह भी चरित्र धर्म का पालन कर मोक्ष में गया।

यही जीवानंद का जीव भवान्तर में भी ऋषभदेव प्रभु के रूप में जन्म लेकर सिद्ध-बुद्ध हुआ।

श्री अनाथी मुनि

अनाथी मुनि का मातृ-पितृ-प्रदत्त नाम गुणसुन्दर था। कौशाम्बी के धनपति धनसंचय नामक श्रेष्ठी उनके पिता थे। कई सुन्दर कन्याओं के साथ उनका विवाह हुआ था। उनके जीवन में सब सुख थे। एक बार उन्हें अक्षवेदना हो गई। उनके पिता ने बड़े-बड़े वैद्य बुलाए। धन को पानी की तरह बहाया, पर वेदना शान्त होने के बजाय दोगुने वेग से बढ़ती चली गई। गुणसुन्दर आठों प्रहर पीड़ा से तिलमिलाता रहता। उसे न भूख लगती और न नींद आती। कई दिन बीत गए। अभिभावकों द्वारा किए गए समस्त उपाय निरुपाय सिद्ध हुए। गुणसुन्दर को अनुभव हो गया कि वह अनाथ है। माता-पिता-पत्नी और धन निःसार हैं। ये किसी के नाथ नहीं हैं। धर्म ही मनुष्य का नाथ है। उसने संकल्प किया- यदि मेरी वेदना शान्त हो जाए तो मैं मुनि बन जाऊंगा।

उक्त संकल्प के साथ की गुणसुन्दर को नींद आ गई। प्रातःकाल वह उठा तो पूर्णतः स्वस्थ था। अपने अभिभावकों से उसने अपने संकल्प की बात बताई और दीक्षित हो गया। यही गुणसुन्दर जगत में अनाथी मुनि के नाम से ख्यात हुए।

एक बार अनाथी मुनि राजगृह के मण्डीकुक्षी नामक उद्यान में ध्यानस्थ थे। मगधेश श्रेणिक उद्यान भ्रमण को आया। उस समय तक श्रेणिक बौद्ध धर्मी था। सुन्दर युवक को मुनि वेश में देखकर उसके मन में कई प्रश्न उठे। उसने मुनि से युवावस्था में मुनि बनने का कारण पूछा तो मुनि ने उत्तर दिया कि वह अनाथ था इसलिए मुनि बन गया। श्रेणिक ने कहा कि वह उसका नाथ बनेगा। वह उसके साथ राजमहल चले।

उसके पास हजारों हाथी, घोड़े और विशाल सेना है। वह सुन्दर बालाओं से उसका विवाह करेगा। मुनि ने स्पष्ट किया कि यह सब तो उसके पास भी था। इन समस्त साधनों का सनाथता से सम्बन्ध नहीं है।

श्रेणिक की जिज्ञासा पर अनाथी मुनि ने अपनी पूरी कहानी उस को सुनाई। सुनकर श्रेणिक के अन्तर्चक्षु खुल गए। वह नाथ और अनाथ की पूरी परिभाषा से परिचित बन गया। उसी दिन से उसने जैन धर्म स्वीकार कर लिया। विशुद्ध संयमाराधना से सर्व कर्म खपा कर अनाथी मुनि निर्वाण को उपलब्ध हुए।

श्री थावच्चापुत्र

द्वारिका नगरी में रहने वाली समृद्ध श्राविका थावच्चा सेठानी का पुत्र थावच्चापुत्र नाम से ही विश्रुत हुआ। उसे बचपन में ही एक घटना को देखकर संसार से वैराग्य हो गया। घटना ऐसे थी–

बालक थावच्चापुत्र अपने भवन की छत पर खेल रहा था। उसे पड़ौसी के घर से सुमधुर गीतों के स्वर सुनाई दिए जो उसे बहुत मधुर लगे। पर कुछ की क्षण बाद वे गीत रुदन में बदल गए। रुदन के स्वर थावच्चापुत्र को अत्यंत कटु लगे। उसने नीचे आकर पड़ौसी के घर पहले गीत और बाद में विलाप का कारण अपनी माता से जानना चाहा। माता ने बता दिया कि पड़ौसी के घर पुत्र उत्पन्न हुआ था, पर कुछ ही समय बाद वह पुत्र मर गया। उसके जन्म की खुशी में पहले गीत गाए जा रहे थे, उसके मरने पर विलाप किया जा रहा है। इस घटना ने थावच्चापुत्र के बाल–हृदय को झिंझोड़ दिया और उसने अपनी मां से एक प्रश्न पूछ डाला कि क्या एक दिन उसे भी मरना होगा। मां ने बात बदलने के भरसक प्रयास किए पर पुत्र ने मां से मृत्यु को तैरने का मार्ग पूछा, तो मां ने कहा– मृत्यु को तैरने का उपाय तो अरिहंत अरिष्टनेमि ही जानते हैं। थावच्चापुत्र ने अरिहंत अरिष्टनेमि का शिष्य होने का संकल्प कर लिया। मां की प्रसन्नता के लिए थावच्चापुत्र ने बत्तीस स्त्रियों से विाह भी किया।

अरिहंत अरिष्टनेमि जब द्वारिका आए तो थावच्चापुत्र ने दीक्षा लेने की आज्ञा अपनी माता से मांगी। माता ने अनेक तर्कों से पुत्र को रोकना चाहा, पर थावच्चापुत्र के सबल तर्कों के समक्ष मां निरुत्तर हो गई और उसने पुत्र को दीक्षा की आज्ञा प्रदान कर दी।

स्वयं श्रीकृष्ण ने थावच्चापुत्र के वैराग्य की थाह को टटोला। श्रीकृष्ण ने कहा, युवक! तुम घर में रहकर ही साधना करो, मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा! थावच्चापुत्र ने कहा, यदि मृत्यु से आप मेरी रक्षा करने का वचन दें तो मैं अरिहंत अरेष्टनेमि की शरण में न जाकर आपकी शरण में आ सकता हूं। इससे श्रीकृष्ण भी निरुत्तर हो गए। थावच्चापुत्र के वैराग्य का ऐसा प्रभाव हुआ कि एक हजार अन्य पुरुष भी उसके साथ दीक्षित हुए। सुदीर्घ काल तक निरतिचार संयम की आराधाना करके और हजारों भव्य प्राणियों के लिए कल्याण का द्वार बनकर थावच्चापुत्र अणगार सिद्ध–बुद्ध और मुक्त हो गए।

श्री खंधक मुनि

सावत्थी नगरी नरेश महाराज कनकेतु और महारानी मलयासुंदरी के अंगजात खंधक कुमार, विजयसेन मुनि का उपदेश सुनकर प्रबुद्ध और प्रव्रजित बने। शीघ्र ही जप, तप और आगमों के पारगामी हो गए। विशेष साधना के लिए एकलाविहारी बन जनपदों में विचरण करने लगे। खंधक मुनि की संसारपक्षीय सुनंदा नामक एक भगिनी थी, जो कुन्तीनगर के महाराज पुरुषसिंह से विवाहित हुई थी। किसी समय खंध मनि‌ु सहसा सुनंदा की दृष्टि मुनि पर पड़ी। वह भाई को पहचान तो न सकी, पर उसे यह विचार आया कि उसका भाई भी कहीं न कहीं ऐसे ही घूम रहा होगा। इस विचार से सह साश्रु हो गई और खेल से उसका ध्यान हट गया। अदूरदर्शी राजा सशंकित बन गया। राजसभा में जाकर उसने जल्लाद को बुलाकर आदेश दिया कि वह अमुक मुनि को वधस्थल में ले जाकर उसकी चमड़ी छील दी। परम समता में निमग्न मुनि केवली बनकर निर्वाण को प्राप्त हो गए।

शीघ्र ही मुनि की जघन्य हत्या का समाचार सारे नगर में फैल गया। सब और राजा का अपयश फैल गया। सच्चाई जानकर सुनंदा तो अचेत ही हो गई। आखिर उधर आचार्य धर्मघोष पधारे।

राजा ने पश्चात्ताप में जलते हुए उस जघन्य कार्य का कारण आचार्य श्री से पूछा। आचार्य श्री ने स्पष्ट किया की पूर्वभव में खंधक के जीव ने बड़े ही उग्र भावों से एक काचर(फल विशेष) का छिलका छीला था। उस काचर में तुम भी एक जीव थे। उसका बदला इस जन्म में तुमने मुनि की चमड़ी छिलवा कर लिया है। उसके बाद राजा के जीवन में महान परिवर्तन हो गया। वह विचारवान और विवेकशील बन गया।

श्री सुलसा श्राविका

राजगृह नगर निवासी और मगधदेश श्रेणिक के प्रीतपात्र रथिक की अर्द्धांगिनी, तीर्थंकर महावीर की अनन्या उपासिका ओर परम समता साधिका एक दृढ़धमिणी सन्नारी। उसे कोई संतान न थी। पति और पत्नी दोनों की प्रबल इच्छा थी कि उन्हें संतान प्राप्त हो पर अशुभ कर्मोदय के कारण वैसा नहीं हो पा रहा था। लौकिक अनुष्ठान सुलसा को पसन्द न थे। उसे तो महावीर और उनका धर्म पसन्द थे जिनकी आराधना वह सोते-जागते किया करती थी।

एक बार सुलसा की समता की अनुशंसा देवराज इन्द्र ने की। एक देव परीक्षा की दृष्टि से मुनिवेश धारकर सुलसा के घर आया और लक्षपाक तेल की याचना की। सुलसा के इंगित पर उसकी दासी लक्षपाक तेल का घड़ा उठा कर लाई। देवमाया से दासी का हाथ कांपा और घड़ा गिर कर टूट गया। दासी कांपी। सुलसा ने उसे धैर्य देते हुए दूसरा घड़ा लाने को कहा। देव ने वह भी गिरा दियां सुलसा ने तीसरा घड़ा मंगाया तो देव ने वह भी गिरा दिया। इस पर भी सुलसा के मस्तक पर शिकन न उभरी। मुनिवेशधारी देव ने कहा, मुझे खेद है जो मेरे कारण तुम्हें इतना नुकसान उठाना पड़ा। सुलसा बोली, नुकसान की कोई बात नहीं, मुझे चिन्ता इस बात की है कि मैं आपको इच्छित वस्तु न दे सकी। सुलसा की समता देख देव गद्‌गद हो गया। उसने प्रकट होकर देवराज द्वारा की गई उसकी प्रशंसा की बात कही और कहा कि वह मनोवाञ्छित वस्तु मांग ले। सुलसा ने पुत्र-प्राप्ति की बात कही। देवता ने सुलसा को बत्तीस गोलियां दीं और कहा, प्रत्येक गोली से उसे एक-एक पुत्र प्राप्त होगा। पर सुलसा को बत्तीस नहीं एक ही पुत्र चाहती थी। इस विचार से कि बत्तीस लक्षणों वाला एक पुत्र हो जाए

सुलसा ने सभी गोली एक साथ खा लीं कहते हैं कि एक साथ बत्तीस जीव सुलसा के गर्भ में आए। गर्भ बढ़ने के साथ-साथ सुलसा को असह्य उदरशूल होना स्वाभाविक था। आखिर उसने उसी देव का स्मरण किया और देव के उपाय से उचित समय पर बत्तीस पुत्रों को जन्म दिया। देव ने कहा, ये सभी पुत्र एक ही साथ जन्मे हैं और एक ही साथ कालधर्म को भी प्राप्त होंगे। पुत्र जब शिक्षित-दीक्षित होकर युवा हुए तो महाराज श्रेणिक के अंगरक्षक नियुक्त हुए और चेलना-हरण के प्रसंग पर सुरंग के अंदर की सभी एक साथ मृत्यु को प्राप्त हो गए।

बत्तीस पुत्रों की एक साथ मृत्यु का समाचार सुनकर भी सुलसा चलित न हुई और अपने धर्म में और अधिक सुदृढ़ बन गई।

एक अन्य घटना के परिप्रेक्ष्य में सुलसा की दृढ़धर्मिता के दर्शन होते हैं। अंबड़ नामक परिव्राजक भगवान महावीर का परम भक्त था। एक बार जब भगवान महावीर चम्पानगरी में विराजमान थे तो वह भगवान के दर्शनों के लिए गया। दर्शनों के पश्चात् वह लौटने लगा तो उसने भगवान से प्रार्थना की कि अवसर लगने पर प्रभु राजगृह पधारें। प्रभु ने अंबड़ से कहा, तुम राजगृह जा रहे हो। वहां सुलसा नामक एक श्राविका रहती है। वह एक दृढ़धर्मिणी सन्नारी है। उसे धर्म संदेश कहें।

प्रभु का धर्मसंदेश लेकर अंबड़ राजगृह आया। उसने विचार किया, जिस नारी की प्रशंसा स्वयं अरिहंत भगवान ने की है, उसकी महिमा देखनी चाहिए। अंबड़ ने वैक्रिय लब्धि का उपयोग कर ब्रह्मा का रूप धारण किया और वह पूर्व दिशा के नगर द्वार पर आकाश में अवस्थित हो गया। सभी नागरिक उसे ब्रह्मा भगवान मानकर उसके दर्शनों के लिए गए, पर सुलसा नहीं गई। दूसरे, तीसरे और चौथे दिन क्रमशः विष्णु, शिव और तीर्थंकर महावीर का रूप धरकर वह नगर के पश्चिम, उत्तर और दक्षिण द्वारों पर अवस्थित हुआ। सब उसके दर्शनों के लिए गए पर सुलसा न गई। अन्तिम दिन महावीर के रूप में अंबड़ सुलसा के घर पहुंचा और रोषारुण होकर उसने कहा, सुलसा! तुम मेरे दर्शन करने नहीं आई, क्या मैं महावीर नहीं हूँ?सुलसा ने कहा, हां तुम महावीर नहीं हो। अंबड़ ने पूछा, तुम ऐसा किस आधार पर कह रही हो?सुलसा ने कहा, तुम्हारी आंखे क्रोध से लाल हैं, महावीर की आंखे लाल नहीं हो सकती।

अंबड़ ने अपनी माया समेटी, सुलसा की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा का संदेश उसे दिया। सुलसा गद्गद बन गई। वह आयु पूर्ण कर स्र्वग में आ गई। आगत चौबीसी में वह असम नामक पन्द्रहवां तीर्थंकर होगी।

श्री पुणिया श्रावक

जैन पौराणिक कथा साहित्य के अनुसार राजगृह निवासी एक श्रमणोपासक। एक उल्लेख के अनुसार वह कालसौकरिक कसाई का पुत्र सुलस ही था, जो अपने पिता के हिंसक व्यापार को ठुकरा कर राजगृह के एक कोने में झोंपड़ी डालकर रहने लगा था। व्यवसाय रूप में वह रूई की पूणियां बनाकर बेचता था और उससे जो थोड़ा- बहुत अर्जन होता, उसी से पेट पालकर धर्मध्यान में मस्त रहता था। महामंत्री अभयकुमार से उसकी अंतरंग मित्रता थी। पर इस मित्रता का उसने अपने लिए आर्थिक दृष्टि से लाभ के लिए कभी उपयोग नहीं किया। एक बार जब उसके पिता ने उसकी झोंपड़ी में आग लगवा दी, तो अभयकुमार उसकी सहायता के लिए आया और घर बनाने के लिए उसे आर्थिक मदद देनी चाही तो उसने स्पष्ट इन्कार कर दिया। उसने और उसकी पत्नी ने एक-एक दिन उपवास का क्रम शुरू किया और उस बचत से उन्होंने एक वर्ष की अवधि में इतना धन जोड़ लिया कि वे अपनी झोंपड़ी बना सकें। एक मान्यता के अनुसार वर्षीतप का प्रचलन तभी से जैन परम्परा में प्रचलित हुआ।

पुणिया श्रावक की सामायिक की निष्ठा अनन्य थी। तीर्थंकर महावीर ने उसकी शुद्ध सामायिक की प्रशंसा अपने श्रीमुख से की थी। एक बार जब श्रेणिक राजा ने नरक से मुक्ति का उपाय भगवान महावीर से पुछा तो भ0 ने कहा कि यदि वह पुणिया श्रावक की एक सामायिक खरीद सके तो नरक जाने से बच सकता है। मगधेश श्रेणिक पुणिया के झोंपड़े पर पहुंचा और उससे एक सामायिक मोल देने के लिए कहा। कीमत पूछी तो पुणिया बोले, कीमत वही बता सकते हैं जिन्होंने आपको मेरे पास भेजा है। श्रेणिक प्रभु के पास गया ओर सामायिक की कीमत प्रभु से पूछी। प्रभु ने स्पष्ट किया, चांद सितारों तक हीरे जवाहारत को ढेर लगाकर भी एक सामायिक के सोलहवें अंश का भी मूल्य पूर्ण नहीं होता है। सुनकर श्रेणिक मौन हो गया।

विशुद्ध सामायिक का आराधक पुणिया श्रावक सम्यक् और साधनामयी जीवन जीकर देवलोक में गया। वहां से मनुष्य जन्म लेकर निर्वाण पद प्राप्त करेगा।

आचार्य श्री अमोलक ऋषि जी म0

(स्थानकवासी ऋषि सम्प्रदाय के एक तेजस्वी और आगमोद्धारक आचार्य)

आप श्री का जन्म भोपाल में सं. 1934 में हुआ। आपके पिता का नाम श्रीमान केवलचन्द जी कांसटिया और माता का नाम श्रीमती हुलासीबाई था। आपकी बाल्यावस्था में ही आपकी मातेश्वरी का निधन हो गया। जब आप दस वर्ष के थे तब पहले आपके पिताश्री ने और बाद में आपने मुनिधर्म अंगीकार कर लिया। पण्डित रत्न श्री रत्नऋषि जी म. के सान्निध्य में रहकर आपने हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, पाली, अपभ्रंश आदि भाषाओं का गहन अध्ययन किया। तदनन्तर आपने आगमों का तलस्पर्शी अध्ययन और मनन किया। जैनेतर दर्शनों का भी आपने काफी अध्ययन किया।

आपश्री की आगम रुचि अद्‌भुत थी। आपका चिन्तन था कि आगम ज्ञान सर्वगम्य बने। परन्तु आगमों की भाषा अर्धमागधी होने से वे सर्वगम्य नहीं बन सकते थे। आपने दृढ़ संकल्प के साथ आगमों का हिन्दी अनुवाद कार्य आरंभ किया। निरन्तर तीन वर्ष तक एकासने की तपस्या करते हुए आपने यह गुरुतर कार्य पूर्ण किया। आगमों का सर्वप्रथम हिन्दी भाषा में रूपान्तरण आपश्री ने ही किया। आप द्वारा अनुवादित आगमों का प्रकाशन सेठ ज्वालाप्रसाद जी ने कराया और निशुल्क बत्तीसी का वितरण सभी जैन स्थानकों में किया। आपश्री ने 'जैन तत्व प्रकाश' प्रभृति 101 ग्रन्थों का लेखन संकलन किया।

वि.सं. 1989 में इन्दौर में आप ऋषि सम्प्रदाय के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए।

आपश्री जी जहां प्रकाण्ड पण्डित मुनिराज थे, वहीं विनय की प्रतिमूर्त्ति भी थे। सं. 1989 में अजमेर में बृहद् मुनि सम्मेलन हुआ। उस समय की घटना है, प्रातःकाल अन्धेरे में ही एक मुनि आते और क्रमशः सभी छोटे-बड़े संतों को वन्दन कर अपने स्थान पर लौट जाते। यह क्रम कई दिनों तक चला। आखिर जिज्ञासा होने पर एक प्रमुख संत ने आपका अनुगमन किया। सत्य से परिचित होकर वे मुनि दंग रह गए। आपके चरणों में नत होकर उन्होंने पूछा, आचार्य देव ! आप छोटे-बड़े सभी संतों को वन्द करते हैं, ऐसा किसलिए?

आप ने सहजता से कहा, मुनिवर ! संत तो संत होता है। उसमें क्या छोटा और क्या बड़ा ! कौन जाने कौन आत्मा निकट भवी है। संतों को वन्दन कर मैं अपनी आत्मा को हल्की कर रहा हूं।

आपकी विनयवृत्ति की यह चर्चा सकल संघ में हुई। सभी ने आपकी विनय वृत्ति की मुक्त कण्ठ से अनुशंसा की।

वि.स. 1993 में धूलिया नगर (महाराष्ट्र) में आपका स्वर्गवास हो गया।

आचार्य सम्राट श्री अमर सिंह जी म०

पंजाब में महाराजा रणजीत सिंह के शासन में अमृतसर के सुप्रसिद्ध जौहरी श्री खुशहाल सिंह जैन तातेड़ के सुपुत्र श्री बुद्धसिंह जी की धर्मपत्नी श्रीमती कर्मों देवी जी की कुक्षि से विक्रम संवत 1862 में बैशाख बदी दूज को आपका जन्म हुआ। उर्दु, फारसी, हिन्दी, गणित आदि की पढ़ाई करके आप व्यापार संभालने लगे। स्यालकोट की ज्वालादेवी से आपका विवाह हुआ। आपके तीन सुपुत्र हुए लेकिन तीनों ही असमय में काल कर गए, जिससे संसार परिवार की नश्वरता एवं क्षण भंगुरता देखकर आपके मन में तीव्र वैराग्यभाव पैदा हो गया। परिणाम स्वरूप आपने 36 वर्ष की आयु में हीरे-जवाहरात जैसे बहुमूल्य एवं प्रतिष्ठित व्यापार का निर्मोह भाव से त्याग करके आचार्य श्री रामलाल जी म॰ के चरणों में देहली चांदनी चौंक में विक्रम सम्वत् 1898 में बैशाख बदी दूज को जैन भागवती दीक्षा ग्रहण कर ली।

छोटी सी दीक्षा पर्याय में ही विशुद्ध संयम का पालन करते हुए आपने जैन आगमों का गहन ज्ञान अर्जित किया जिसके कारण आप 'पण्डित जी' कहलाने लगे।

आर्चाय श्री रामलाल जी म॰ के देवलोक के बाद पंजाब सम्प्रदाय में संयम और विद्वत्ता में आपकी ही सर्वत्र सर्वोच्च प्रतिष्ठा थी अत: आप पंजाब श्रमण संघ-गौरव माने जाने लगे। और पूज्य श्री कन्हीराम जी म॰ ने सर्वसम्मति से विक्रम सम्वत् 1912 में वैशाख बदी दूज को ही चांदनी चौक-बारादरी दिल्ली में आपको आचार्य पद पर अभिषिक्त कराया।

श्रुत तथा चारित्र में खूब लोकप्रिय होने से सारी पंजाब सम्प्रदाय का नाम ही 'आचार्य श्री अमर सिंह जी म॰ की सम्प्रदाय' पड़ा। और आप पंजाब-सम्प्रदाय के सर्वप्रथम आचार्य कहलाए।

आप संयमी होने के साथ-साथ जपी, तपी भी खूब थे, महीने-महीने की तपस्या कर लेते थे तथा णमोत्थुणं के विशिष्ट साधक थे, प्रतिदिन 3-4 घण्टे णमोत्थुणं का ध्यान करते थे।

आपके बारह शिष्य हुए। 76 वर्ष 2 महीने की आयु में अमृतसर में विक्रम सम्वत् 1938 में आषाढ बदी दूज को आपका संलेखना संथारा पूर्वक देवलोक हुआ

संयम सुमेरू श्री मयाराम जी म0

नाम	-	चारित्र चूड़ामणि संयम सुमेरू श्री मयाराम जी महाराज
जन्म	-	आषाढ़ कृष्णा-2 सम्वत् 1911 (12 जून 1854) बड़ौदा ग्राम, जिला-जीन्द (हरियाणा)
पिता	-	चौधरी जोतराम जी चहल 'नम्बरदार'
माता	-	श्रीमती शोभावंती जी
भ्राता	-	1. श्री आदराम जी म॰ 2. श्री मयाराम जी म॰ 3. श्री सुखीराम जी म॰ 4. श्री रामनाथ जी म॰
धर्म बोध प्रादाता	-	श्री गंगा राम जी म॰ व श्री रतिराम जी म॰
शिक्षा	-	बाल्यावस्था में हिन्दी, प्राकृत का श्रेष्ठ बोध, तत्व ज्ञान, आगम अध्ययन। 5 आगम गृहस्थ में ही कण्ठस्थ थे।
दीक्षा	-	सम्वत 1934, माघ शुक्ल-6 (18 जनवरी 1877) पटियाला (पंजाब)
गुरूदेव	-	मुनि प्रवर पूज्य श्री हरनाम दास जी महाराज
गुरूभ्राता	-	गणवच्छेक श्री जवाहर लाल जी म॰, तपस्वी श्री शंभुराम जी म॰
शिष्य	-	1. श्री नानक चन्द जी म॰ 2. श्री देवी चन्द जी म॰ 3. श्री छोटे लाल जी म॰ 4. श्री वृद्धि चन्द जी म॰ 5. श्री मनोहर लाल जी म॰ 6. श्री कन्हैया लाल जी म॰ 7. श्री सुखीराम जी म॰
विशिष्ट गुण	-	विशुद्ध संयमी, अनुशासक, मधुरवक्ता, महान आगम वेत्ता, धर्म प्रभावक, सौम्य शान्त मनोरम छवि
विचरण	-	पंजाब, हरियाणा, देहली, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश
स्वर्गवास	-	भाद्रपद शुक्ल-11, सम्वत्-1969 (21 सितम्वर 1912) भिवानी (हरियाणा)

व्याख्यानवाचस्पति गुरूदेव श्री मदन लाल जी म0

जन्म	-	सन् 1895 (सम्वत्-1952) राजपुर ग्राम (सोनीपत) हरियाणा
मात-पिता	-	श्रीमती गैंदोबाई और श्री मुरारी लाल जैन
दीक्षा	-	सन् 1914 भादों बदी दसवीं, बामनौली (यू.पी)
दादा गुरुदेव	-	गणावच्छेदक श्री छोटे लाल जी म॰
दीक्षागुरु	-	बहुसूत्री श्री नाथू लाल जी म॰
देवलोक गमन	-	27 जून 1963 जण्डियाला गुरु (पंजाब)
शिष्य	-	छः शिष्य

विशेष-

आप संयम के दृढ प्रहरी थे। निर्भीक व ओजस्वी वक्ता थे। नवयुवक सुधारक थे। संघ-एकता के लिए जीवन भर जुटे रहे। सन् 1956 में श्रमण संघ के प्रधान मन्त्री बने, पर संयम की शिथिलता देखकर पद-त्याग कर दिया। आप में विनय और अनुशासन तथा जोश व होश का अदभुत समन्वय था।

आप संयम के दृढ प्रहरी थे। निर्भीक व ओजस्वी वक्ता थे। नवयुवक सुधारक थे। संघ-एकता के लिए जीवन भर जुटे रहे। सन् 1956 में श्रमण संघ के प्रधान मन्त्री बने, पर संयम की शिथिलता देखकर पद-त्याग कर दिया। आप में विनय और अनुशासन तथा जोश व होश का अदभुत समन्वय था।

छः शिष्य

1. बाबा श्री जग्गूमल जी म॰
2. संघ शास्ता पूज्य गुरुदेव श्री सुदर्शन लाल जी म॰
3. घोर तपस्वी श्री बद्रीप्रसाद जी म॰,
4. सरलात्मा सेठ श्री प्रकाश चन्द जी म॰
5. पण्डित रत्न भगवन श्री रामप्रसाद जी म॰
6. श्री रामचन्द्र जी म॰

गुरु मदन स्तुति

जिनकी ज्ञान प्रभाओं से प्रत्येक दिशा आलोकित है,
जिनके भाषण से मिथ्या-मति कितनी हुई निराकृत हैं।
धर्म-चरण की दृढता दी जिनके संयम ने जन-जन को।
उमड़ा मन गुरुवर वाचस्पति मदन मुनि के वंदन को।।

संघ शास्ता श्रद्धेय गुरूदेव श्री सुदर्शन लाल जी म0

जन्म	-	4 अप्रैल 1923 रोहतक (हरियाणा)
माता-पिता	-	श्रीमती सुन्दरी बाई एवं बाबू चन्दगी राम जैन (एडवोकेट)
दीक्षा	-	18 जनवरी 1942, संगरूर (पंजाब)
गुरुदेव	-	व्याख्यान वाचस्पति श्री मदन लाल जी म.
देवलोक गमन	-	25 अप्रैल 1999 शालीमार बाग, दिल्ली

विशेषः

यद्यपि आप जन्म से सनातन वैष्णव कुल मे उत्पन्न हुए, पर जैन मुनि की दीक्षा लेकर लाखों-करोड़ों जैन-अजैन जनता के आराध्य बने। आपके पूज्य बाबा जी जग्गुमल जी म॰ एवं चाचा जी के बेटे वर्तमान संघनायक शास्त्री श्री पद्म चन्द्र जी म॰ ने भी जैन-मुनि दीक्षा ग्रहण की।

आपने अपने मुनि जीवन में पंजाब, हरियाणा, जम्मू, हिमाचल, दिल्ली, यू॰पी॰, राजस्थान आदि प्रान्तों में विचरण किया। लाखों करोड़ों श्रद्धालुओं को अहिंसा, सत्य, शाकाहार, व्यसन-मुक्ति और विश्व मैत्री का शुभ सन्देश दिया। पंजाब जैन-मुनि परम्परा के 350 वर्षो के ईतिहास में आपके ही सर्वाधिक 29 शिष्य बने। आपकी अनूठी प्रवचन शैली से श्रोता मन्त्र मुग्ध हो जाते थे। आप बचपन से ही प्रतिभा सम्पन्न थे। आप अपने छात्र-जीवन में दसवीं कक्षा में पढते हुए दसवीं कक्षा के ही बच्चों को टयूशन भी पढाते थे और आपने दसवीं में पढ़ते हुए ही अर्थशास्त्र पर Economic Made Easy नाम पुस्तक भी लिखी इसे अनेक स्कूलों में पाठयक्रम में शामिल किया गया।

आप अपने जीवन काल में शुद्ध संयम-पालन के पक्षधर रहे, आपने जीवन भर बिजली, पंखा, फोन, लाऊडस्पीकर आदि का प्रयोग नहीं किया। आपके देवलोक-गमन पर लगभग एक लाख लोगों ने आपको अश्रुपूरित विदाई दी।

गुरु सुदर्शन स्तुति

निज पवित्र चारित्र के कारण गुरुवर-सा पाया गौरव,

है समाज जागृति का कारण जिन के प्रवचन का सौष्ठव।

तुच्छ लाभ के लिए शिथिलता संयम में न जिन्हें भायी,

उन श्रद्धेय सुदर्शन गुरुवर की वन्दना है सुखदायी ॥

Important Notes

Important Notes

Important Notes

आत्मा
गति 4
जाति 5
काया 6
इन्द्रिय 5
पर्याप्ति 6
प्राण 10
शरीर 5
योग 15
उपयोग 12
कर्म 8
गुणस्थान 14
लेश्या 6
दृष्टि 3
ध्यान 4